* श्रीः *

व्याख्यानदिवाकरः ।

तस्यैवोत्तरार्द्धे

द्वितीयांशः ।

विधवाविवाहनिर्णयः

कालूरामशास्त्रिणा निर्मितः ।

पं० कामताप्रसाद दीक्षितेन

प्रकाशितः ।

मुद्रक—

पं० वेदनिधि मिश्र

वी. एन. फाइन आर्ट प्रिंटिङ्ग प्रेस इटावा ।

प्रथमवार ३००० } संवत् १९८५ { मूल्यम् १)

नोट—भूमिका पढ़िये दोनों अंशों के लोपदायक खण्डन करने वाले को १०००) रु० इनाम ।

श्री वैष्णवाचार्य महन्त श्री १०८ रामदासजी
दरवार पिण्डोरी महन्ताम् (पंजाब)

॥ श्रीहरिः ॥

नम्र निवेदन ।

श्रुति स्मृति के सुविज्ञों से प्रार्थना है कि इस पुस्तक में जिस स्थान में अशुद्धता या विवेचन में भ्रम एवं अर्थ वैपरीत्य मिले उस को क्षमा करें क्यों कि भूल मनुष्यों से ही होती है, यदि कोई विद्वान् किसी प्रकार की त्रुटि को देख कर हम को सूचित करेंगे हम उन के ऋणी होंगे और द्वितीयावृत्ति में सुधार देंगे किन्तु यह प्रार्थना उन्हीं लोगों से है जो वेद तथा धर्मशास्त्र के पूर्ण पण्डित हैं । जो लोग श्रुति स्मृति को नहीं जानते अपने मन से ही बलात्कार पंडित बने हैं ऐसे धूर्तों का कोई लेख हमारे ग्रन्थ में स्थान नहीं पावेगा ।

ग्रन्थकर्ता ।

॥ श्रीहरिः ॥

सहायक गण ।

इस बार धर्म प्रेमियों ने हम को अच्छी सहायता दी है; हमने धन्यवाद देकर सहायकों की सहायता स्वीकार करली है। सहायकों से विशेष प्रार्थना यह है कि हम को जितने रुपये की जिसने सहायता दी है उस महानुभाव के पास उतने ही रुपये की हम पुस्तकें भेजेंगे, इन पुस्तकों को विद्वान् पण्डितों को बांट कर पण्डितों के साहस को बढ़ाव।

ग्रन्थकर्ता

मरचेंट प्रेस, कानपुर।

सनातनधर्म-संरक्षक

पं० श्यामलालात्मज श्री १०५ पं० भगवानदीनजी शुक्ल

ताल्लुकेदार शाहपुर (मध्यभारत)

मरचैंट प्रेस, कानपुर ।

पुनर्भू विवेचन--

विधवा विवाह निषेध--

धर्मप्रेमी श्री १०५ पं० रोशनलालजी शुक्ल,

अध्यापक सनातनधर्म पाठशाला

नैरोबी (अफ्रीका)

मरचैंट प्रेस, कानपुर ।

इतिहास विवेचन--

पुराण चर्चा—

वेद में नियोग—

नियोग व्यवस्था--

धर्मवीर, प्यारीसंगत के संस्थापक, बम्बई पेढी के अध्यक्ष

स्वर्गीय श्री १०५ सेठ वांधूराम टवरमलजी रईस

शिकारपुर (सिन्ध)
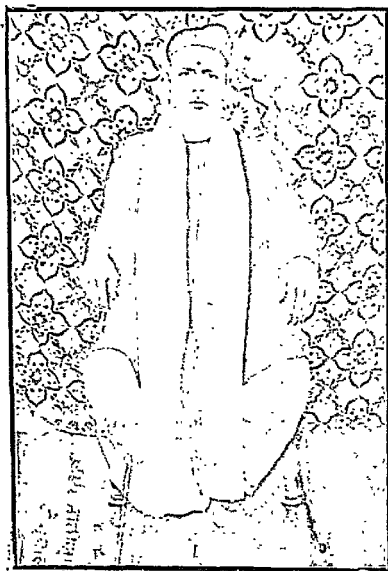
मरचेंट प्रेस, कानपुर ।

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

व्याख्यानदिवाकर

तस्यैवोत्तरार्द्धे द्वितीयांशः ।

विधवाविवाह निर्णयः ।

पुनर्भू विवेचन

न मंत्रं नो यंत्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो,
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः ।
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जानेऽपिलपनं,
परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥१॥
न मोक्षस्याकांक्षा न च विभववांछापि च न मे,
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखिसुखेच्छापि न पुनः ।
अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै,
मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः ॥२

माननीय सभापति ! पूज्य विद्वद्वृन्द !! आदरणीय सद्गृहस्थ समुदाय !!! तीन या चार वर्ष के बच्चे खेलते हुये जब गलियों में घूमते हैं तब उनको यदि कोई चमकती हुई

चीज दीख पड़े तो उसको उठा लेते हैं उठा कर कहने लगते हैं कि देखो हमको चांदी मिली। इसी प्रकार श्रुति स्मृति के मर्म को न जानने वाले शास्त्रानभिज्ञ सुधारक जिस श्लोक में 'क्षता, अक्षता' और 'पुनर्भू' शब्द देखते हैं तब फौरन कह उठाते हैं कि हमको विधवा विवाह मिल गया। चाहे उस श्लोक में किसी विषय का वर्णन हो किन्तु इन को विधवा विवाह दीखने लगता है। इसके उदाहरण में हम श्रोताओं के आगे एक श्लोक रखते हैं जिस श्लोक में विधवाविवाह की गन्ध नहीं है किन्तु समस्त सुधारकों को श्लोक में विधवा विवाह दीखता है श्लोक यह है

अक्षता वा क्षता चैव पुनर्भूः संस्कृता पुनः।
स्वैरिणी या पतिं हित्वा सवर्णं कामतः श्रयेत् ॥६७

याज्ञ० अ० १

इसी प्रथम अध्याय के श्लोक ५२ में कहा है कि

अविप्लुतब्रह्मचर्यो लक्षण्यां स्त्रियमुद्वहेत्।
अनन्यपूर्विकां कान्तामसपिंडां यवीयसीम् ॥५२॥

अखंडित ब्रह्मचर्य द्विज अच्छे लक्षणों वाली सुन्दर रूपवाली अतिशय युवति कन्या के साथ विवाह करे कि जिसका अन्य किसी पुरुष के साथ विवाह या संयोग न हो चुका हो।

इस श्लोकमें द्विजको अनन्यपूर्विका स्त्री से विवाह करना लिखा है अन्यपूर्विका के साथ विवाह करने का निषेध है। अब प्रश्न उठा कि अन्यपूर्विका स्त्री कौन होती है, अन्यपूर्विका को बतलाते हुये ऋषि याज्ञवल्क्य ने लिखा कि "अक्षता वा क्षता चैव" इस श्लोक में कही हुई स्त्री अन्यपूर्विका है उस के साथ द्विज विवाह न करे। 'अक्षता वा क्षता चैव' का अर्थ सुनिये—

इस श्लोक में 'पूनर्भू' और स्वैरिणी' दो स्त्रियों के लक्षण हैं। जो स्त्री अक्षत अवस्था में ही अपने पति को छोड़ या जो स्त्री भुक्ता बन कर अपने पति को छोड़ अन्य सम्बन्ध जोड़ ले वह 'पुनर्भू' है और जो स्त्री पति के जीवित रहने पर पति को छोड़ कर समान वर्ण के अन्य पुरुष से सम्बन्ध जोड़ ले वह स्वैरिणी है।

श्लोक ५२ में इन दो प्रकार की स्त्रियों के साथ विवाह करने का निषेध किया है, स्वार्थी लोग (१) श्लोक ५२ को छिपा कर (२) पुनर्भू और स्वैरिणी इन के लक्षणों को छिपा (३) मनमाना अर्थ बना कर इस श्लोक से विधवा विवाह निकालते हैं जिस का निकलना सर्वथा असंभव है। संसार में धोखेबाजों की कमी नहीं है, कई एक धोखेबाज सांचे बना कर नकली अठन्नी, चवन्नी, रुपया ढाल लेते हैं और कई एक धोखेबाज नकली नोट बना लेते हैं, लिखे पढ़े मनुष्य, हुक्काम, राजा रईस, खास गवर्नमेंट भी इनके धोखे में फंसकर नकली

सिक्के तथा नकली नोटों को खरीद बैठती है जिस प्रकार धोखे बाज़ सिक्के और नोट बना कर संसार को धोखे में फांसते हैं उसी प्रकार सुधारक धोखेबाज धर्मशास्त्र के असली अभिप्राय को छिपा कर मनमाना बनावटी अर्थ बना संसार को विधवा विवाह के धोखे में फांस लेते हैं। सुधारकों में एक भी मनुष्य ऐसा न है और न आगे को हो सकता है जो 'अक्षता वा क्षता' इस श्लोक से विधवा विवाह सिद्ध कर दे, केवल साधारण मनुष्यों को जाल में फांसने के लिये 'अक्षता वा क्षता' इस श्लोक के अर्थ को अनर्गल, बनावटी शैली पर लिख कर विधवा विवाह का जाल फैलाया जाता है। इस जाल से बचना या सावधान रहना प्रत्येक द्विजका काम है।

सुधारक लोग विधवा विवाह चलाने के लिये संसार को खूब धोखा दे रहे हैं। जैसे अनेक चालबाज पुलिस के नकली आफीसर बनकर साधारण पबलिक को धमका उन से रुपया ऐंठ मजा उड़ाते हैं उसी प्रकार सुधारक नकली धर्मशास्त्र-ज्ञाता बन देशोन्नति के राग से पबलिक को धोखे में डाल विधवाविवाह के बहाने से व्यभिचार रूपी स्वार्थकी पूर्ति करना चाहते हैं। इस स्वार्थ के बल से इन को धर्मशास्त्र के प्रत्येक श्लोक में विधवा विवाह दीखता है मानो समस्त धर्म-शास्त्रों में विधवा विवाह से भिन्न कोई धर्म निर्णय ही नहीं है। स्वार्थी लोग विधवा विवाह की पुष्टि में एक और प्रमाण देते हैं वह यह है।

या कौमारं भर्त्तारमुत्सृज्यान्यैः सहचरित्वा तस्यैव कुटुम्बमाश्रयति सा पुनर्भूर्भवति ॥२१॥
या च क्लीवंपतितमुन्मत्तं वा भर्तारमुत्सृज्यान्यं। पतिं विन्दते सा पुनर्भूर्भवति। २१

वसिष्ठ अ० १७

जो स्त्री अपने कुमारपति को त्याग कर अन्य पुरुषों के साथ सब प्रकार का व्यवहार करके उसी पहिले पति का फिर सहारा लेवे वह स्त्री पुनर्भू कहाती है। २०। और जो स्त्री नपुंसक पतित वा उन्मत्त हुये या मर जाने पर अपने पति को त्यागके अन्य पतिको प्राप्त होती वह भी पुनर्भ कहाती है।

वसिष्ठ के इन दोनों प्रमाणों ने पुनर्भू की तारीफ बतलाई और यह दिखलाया कि ऐसी स्त्री को पुनर्भू कहते हैं इस में विधवा विवाह का नाम भी नहीं है इतने पर भी स्वार्थी सुधारक इन प्रमाणों से विधवा विवाह सिद्ध कर लेते हैं साधारण लोगों को यह समझा देते हैं कि पुनर्भू के माने दूसरा विवाह वाली स्त्री होते हैं देखो इन श्लोकों में भी दूसरा विवाह लिखा है। जैसे बाजीगर सैकड़ों मनुष्यों को धोखे में फांस रुपये बनाने के जाल को सत्य सिद्ध करता है उसी प्रकार सुधारक स्मृतियों के असली भाव को छिपा कर व्यभिचार रूप पाप विधवाविवाह को धार्मिक रूप देते हैं।

सुधारक वसिष्ट स्मृति को बिलकुल प्रमाण नहीं मानते,

धार्मिक लोगों को वसिष्ठ स्मृति की आज्ञा का लोभ देकर विधवा विवाह चलाना चाहते हैं। संसार में एक सुधारक लीडर और प्लीडर ऐसा न मिलेगा जो वसिष्ट स्मृति को प्रमाण मानता हो। हरविलास शारदा के विल पर आजकल तहकीकात हो रही है कोई सभा में रेजुलेशन पास करता है कि कन्या का विवाह १६ वर्ष की उम्र में होना चाहिये कोई सज्जन कन्या का विवाह १४ वर्ष की उम्र में समाचार पत्र में छाप देता है कई एक सुधारक बयान दे रहे हैं कि कन्या का विवाह १८ वर्ष की उम्र में हो। भारतवर्ष में एक भी सुधारक ऐसा नहीं है जो कन्या का विवाह ८।६ या १० वर्ष की उम्र में मानता हो और वसिष्ट स्मृति लिखती है कि

पितुः प्रमादात्तु यदीह कन्या,
वयः प्रमाणं समतीत्य दीयते।
सा हन्ति दातार मुदीक्षमाणा,
कालातिरिक्ता गुरुदक्षिणेव ॥६१॥
प्रयच्छेन्नाग्निकां कन्यामृतुकालभयात्पिता।
ऋतुमत्यांहि तिष्ठन्त्यां दोषःपितरमृच्छति ॥६२॥
यावच्च कन्यामृतवः स्पृशन्ति
तुल्यैः सकामामभियाच्यमानास्।
भ्रूणानि तावन्ति हतानि ताभ्यां,

माता पितृभ्यामिति धर्मवादः ॥६३ ॥

वसिष्ठ अ० १७

गृहस्थाश्रम में पिता के प्रमाद से यदि कन्या ऋतुमती होने पर विवाही जाती है तो वह कन्या विवाह की बाट देखती हुई कन्यादान करने वाले का नाश करती है जैसे कि देने का समय निकल जाने पर गुरु को दी दक्षिणा शिष्य का नाश करती है। ६१। रजस्वला होने का अवसर आने से पहिले ऋतुमती होने के भय से पिता कन्या का दान कर देवे यदि ऋतुमती होती हुई विवाह से पहिले पिता के घर पर कन्या रहे तो पिता को दोष लगता है। ६२। कामना रखती हुई कन्या को चाहने वाले योग्यवरों के विद्यमान होते हुये भी जितने मास तक पिता के न देने से कन्या रजस्वला होती रहे उतनी ही गर्भहत्याओं का पाप कन्या के माता पिता को लगता है यह धर्मशास्त्र कारों का कथन है। ६३।

कन्या का विवाह जो बड़ी उम्र में चाहते हैं उन सुधारकों से हमने कई वार पूछा कि, ऐसा न करो क्योंकि वसिष्ठ स्मृति के विरुद्ध पड़ता है। ऋतुमती कन्या के विवाह को वसिष्ठ स्मृति ने घोर पाप बतलाया है इसको सुनकर सुधारक कहते हैं कि वसिष्ठ स्मृति को दियासलाई दिखलादो, ऐसी स्मृतियों ने ही देश का सत्यानाश किया है। वास्तव में जो लोग वसिष्ठ स्मृति को देश नाशकारिणी समझते हैं उनका क्या स्वत्व है कि वसिष्ट स्मृति को प्रमाणमान उससे विधवा

विवाह की सिद्धि करें? मीठा मीठा हड़प्प और कड़ुवा कड़ुवा थू? जो वचन हिन्दुओं को ईसाई बनादे वह तो मान्य और जो हिन्दुओं को हिन्दू रखना चाहे तो पुस्तक को दियासलाई दिखला दी जावे? सुधारक लोग वेद शास्त्र, इतिहास पुराण किसी को भी प्रामाणिक नहीं मानते इनके लिये तो योरुप का आदर्श ही परम प्रमाण है। योरुप वाले गोहत्या करते हैं इसी कारण गान्धी गोहत्या को धर्म मानता है, योरुप की स्त्रियां विधवा विवाह करती हैं इसी कारण से विधवाविवाह हिन्दू सुधारकों का सर्वोत्तम धर्म बन गया है।

हमने यह दिखला दिया कि सुधारक वसिष्ठ स्मृति को प्रमाण नहीं मानते केवल साधारण लोगों को अपने जाल में फांसने के लिये वसिष्ठ स्मृति का प्रमाण लोगों के आगे रख देते हैं। अब हम यह दिखलाते हैं कि वसिष्ठ स्मृति ने जिस प्रमाण से द्विजो में विधवाविवाह का खण्डन किया है सुधारक उस प्रमाण को तो छिपा लेते हैं और पुनर्भू का लक्षण जिन प्रमाणों में किया है उनसे विधवा विवाह सिद्ध कर देते हैं। वसिष्ठ स्मृति लिखती है कि—

गृहस्थो विनीतक्रोधहर्षो गुरुणानुज्ञातः स्नात्वाऽसमानार्षामस्पृष्टमैथुनां यवीयसीं सदृशीं भार्यां विन्देत ॥१॥

वसिष्ठ० अ०८

ब्रह्मचारी गृहस्थाश्रम में रहे तो गुरुकी आज्ञा से समावर्तन

स्नान करके अधिक क्रोध हर्ष का त्याग करता हुआ राग द्वेष रहित होके जिसका किसी पुरुष से संग न हुआ हो जो अपने गोत्र की न हो ऐसी युवति अपने तुल्य कुल सम्पत्ति आदि वाली स्त्री से विवाह करे।

प्रिय श्रोताओ ! वसिष्ठ स्मृति ने द्विजों के लिये वतलाया है कि द्विज ऐसी स्त्री से विवाह करें जिस स्त्री ने किसी दूसरे पुरुष से संगम न किया हो, सुधारक लोग इस प्रमाण को छिपा कर पुनर्भू का लक्षण करने वाले प्रमाणों को आगे रख उनके जाली अर्थ बना वसिष्ठ स्मृतिसे विधवा विवाह सिद्ध करते हैं। स्वार्थी मनुष्य क्या नही कर सकते, एक दिन कानपुर निवासी लक्ष्मीकान्त वाजपेयी अकबरपुर से लालपुर स्टेशन को चलने लगे, बाजार में आये, स्टेशन को इक्का न मिला, अन्त में कंधे पर बिस्तर लाद पैदल ही चल दिये, दो मील निकल आये, यहां पर एक ठग खड़ा था उसने बढ़िया दरी देख बिस्तर उड़ानेका इरादा किया, ठगने वाजपेयी जी को पालागन किया और बातें करता हुआ स्टेशन को चला। दो फर्लांग चला होगा कि उसने जेब से कपड़े की एक गांठ निकाली उसमें से मूठा भर वाजपेयी की आखों में फेंक दिया, यह धूल नहीं थी धूल के बराबर बारीक पिसी हुई लाल मिर्चें थीं। ये लाल मिर्चें वाजपेयी की आखों में भर गईं, बाजपेयी जी हा हा कार मचाने लगे और ठग बिस्तर लेकर भाग गया। बस यही हाल वसिष्ठ स्मृति के विवेचन में है, विधवा विवाह

निषेधक प्रमाण में बनावटी जाली पुनर्भू प्रमाण के अर्थ रूपी मिर्चों से संसार को अंधा बनाया जाता है तथा फिर कहते हैं कि हम तो धर्म का निर्णय करते हैं? धन्य है इन स्वार्थी निर्णायकों को।

अन्य स्मृतियों में ऐसे बहुत से प्रमाण आते हैं जिन प्रमाणों में पुनर्भू का लक्षण किया है किन्तु सुधारक पुनर्भू शब्द देखते ही उस को विधवा विवाह में प्रमाण दे देते हैं ऐसे स्थल में प्रमाण सुनने वालों के होशियार हो कर फौरन कह देना चाहिये कि पुनर्भू स्त्री के माने उढ़री या पतित अथवा पापिष्ठा है हम ऐसी औरतों के आचरण पर धर्म नहीं मानते। यह भी कह देना चाहिये कि तुम्हारी यह चालाकी हम खूब जान गये, जहां जहां धर्मशास्त्र यह बतलावेगा कि यह पतित है बस तुम उस पापिष्ठा की तारीफ से विधवा विवाह की सिद्धि करोगे तुम्हारी यह भीतरी इच्छा है कि भारतवर्ष की समस्त बहू बेटियां पापिष्ठा बनें और हिन्दू धर्म का नाश होकर हिन्दू ईसाई तथा भारतवर्ष योरुप बने। जोर से डाट दो, इस डाटने पर सुधारक जानवर ऐसे हो जाते हैं मानो इनकी नानी मर गई एवं फिर पूंछ दबा कर चुपके ही चल देते हैं।

सुधारक लोग और भी कई एक प्रमाण विधवाविवाह की पुष्टि में देते हैं उन को क्रम से सुनिये—

अक्षता भूयः संस्कृता पुनर्भूः।

विष्णु० । १५।८

इस प्रमाण से विधवा विवाह की सिद्धि करना संसार को अंधा बनाना है, इसमें तो पुनर्भू का डिफिनेशन तारीफ है। अक्षता स्त्री अपने पति को छोड़ कर जो पुनः किसी अन्य से सम्बन्ध करे उसको पुनर्भू (पतित) कहते हैं।

दूसरा प्रमाण यह है—

पुनर्भूः स्त्री (पुनर्भवति, जायात्वेन)
द्विरूढ़ा तत्पर्यायः दिधिषूः।

शब्द कल्पद्रुम कोश।

इसमें भी विधवाविवाह नहीं है, पुनर्भू का लक्षण है जो किसी दूसरे की स्त्री बने उसको पुनर्भू कहते है, इसी पुनर्भू को द्विरूढ़ा और दिधिषू भी कहते हैं॥

सुधारकों की जबर्दस्ती तो देखिये कोश तो पुनर्भू का लक्षण बतलाता है और सुधारक उससे विधवा विवाह निकालते हैं। कैसा विलक्षण अर्थ है चना माने रेल का पुल स्टेशन माने जूते की एड़ी, इंजन माने भैंस का दूध, गधा माने एडवोकेट। जैसे ये विलक्षण माने करने वाले की बुद्धि का दिवाला निकला बतलाते हैं इसी प्रकार इस प्रमाण से विधवाविवाह की सिद्धि करने वालों की समस्त बुद्धि की अन्त्येष्टि का होना सिद्ध होता है। धन्य है! उनको जो अंग्रेजी पढ़े नरपशु इन प्रमाणों से विधवाविवाह मान बैठते हैं।

तीसरा प्रमाण सुनिये—

पुनर्भूर्दिधिषूरूढ़ा द्विस्तस्या दिधिषुः पतिः॥२२॥
अमरकोष मनुष्य वर्ग।

जो स्त्री दूसरे से सम्बंध जोड़ती है उसको पुनर्भू दिधिषू रूढ़ा और उसके दूसरे पति को दिधिषु कहते हैं। इसमें भी विधवाविवाह करने की आज्ञा नहीं।

सुधारक लोग अंग्रेजी शिक्षा ने इतने अंधे बना दिये हैं। कि इनको चूहा ऊंट और हाथी बिल्ली दीखता है, कोश तो पुनर्भू के लक्षण बतलाता है और इनको उस प्रमाणमें विधवा विवाह दीखता है। क्या बतलावें, अंग्रेजी शिक्षा के नशे की पीनक अफीम की पीनक से बहुत ही बढ़ कर है। एक दिन एक अफीमची एक पैसे की पिसी हुई हल्दी लेने गया हल्दी ले कर आ रहा था, रास्ते में पेशाब लगी तो हजरत पेशाब करने बैठ गये। जब बहुत सा पेशाब किया तो पेशाब में फेना उठा, इस हजरत को पीनक आ रही थी फेने को देख कर इसने समझा कि दाल की हंडिया उफनाई जाती है पेशाब में समस्त हल्दी डाल कर बोला भला हुआ मैं जल्दी आ गया नहीं तो सब दाल निकल जाती और चूल्हा बुझ जाता उफना सुसरी उफना। अब कैसे उफनावेगी, मैंने तो हल्दी डाल कर तेरा पूरा इलाज कर दिया। ये हजरत पीनक में पेशाब को दाल की हंडिया समझते हैं तो अंग्रेजी शिक्षा के नशे बाज पीनक में पुनर्भू के नाम गिनाने पर विधवा विवाह समझ बैठते हैं, ये लिखे पढ़े नशेबाज और भी बढ़िया

हैं ये पीनक बाज क्या खाक धर्म का निर्णय करेंगे, इन्हीं की किताबों के भरोसे आज भारतवर्ष विधवा विवाह कर के तरक्की के गधे पर सवार होना चाहता है। विधवा विवाह वालों को जरा तो शरम आनी चाहिये।

संस्कार।

मनु ने प्रथम पुनर्भू का लक्षण लिखा है और फिर पुनर्भू स्त्री का दूसरे के साथ स्त्रीं सम्बंध करना भी बतलाया है। प्रमाण सुनिये—

या पत्या वा परित्यक्ता विधवा वा स्वयेच्छया।
उत्पादयेत्पुनर्भूत्वा स पौनर्भव उच्यते ॥१७५॥
सा चेदक्षतयोनिः स्याद्गतप्रत्यागतापि वा।
पौनर्भवेन भर्त्रा सा पुनः संस्कारमर्हति ॥ १७६॥

मनु० अ० ६।

जो स्त्री पति ने त्याग दी हो अथवा विधवा हो वह अपनी इच्छा से किसी से सम्बंध जोड़ कर जो संतान पैदा करे उस संतान का नाम पौनर्भव होगा। स्त्री ने दूसरा पति स्वीकार किया है इस कारण स्त्री का नाम पुनर्भू है और पुनर्भू की संतान तद्धित से पौनर्भव ही होती है। इस श्लोक में पुनर्भू स्त्रीका लक्षण तथा उसकी संतान पौनर्भवका लक्षण कहा है।१७५। वह पौनर्भव स्त्री की संतान जिस की उत्पत्ति पहिले श्लोक में कही है वह भी कहीं भाग गई हो एवं फिर

लौट आई हो किन्तु हो अक्षतयोनि तो उसका विवाह पौनर्भव (पुनर्भू स्त्री की संतान) के साथ कर देना चाहिये। १७६।

यहाँ पर मनु ने सामान्यता का जोड़ लगाया है पापिष्ठा स्त्री की लड़की का पापिष्ठा स्त्री के लड़के के साथ विवाह बतलाया है। यह तो बतलाया नहीं कि पुनर्भू स्त्री की लड़की के साथ शुद्ध द्विज विवाह करले ? यह भी नहीं बतलाया कि शुद्ध द्विजाति की कन्या व्यभिचारिणी के लड़के को विवाह दी जावे फिर 'साचेत्०' इस श्लोक से पौनर्भव कन्या का विवाह शुद्ध द्विजों के साथ में कैसे मान लिया जावे ? बहुत से ठग खाद्य पदार्थ में जहर मिला कर उस पुरुष को खिला देते हैं जिस का वे माल छीनना चाहते हैं, जहर के प्रभाव से जब वह मर जाता है तब ये ठग उस का रुपया पैसा, जेवर कपड़ा सब छीन लेते हैं, इस श्लोक पर बनावटी अर्थ रूपी जहर मिला सुधारक लोग मान्य मनु के बहाने से विधवा विवाह का उपदेश करते हैं जिन का मतलब यह है कि द्विजों का द्विजत्व नाश हो कर हिन्दू जाति में वर्ण संकरता और व्यभिचार फैले जिस से हम को भोगने के लिये नित्य नवीन नवीन स्त्रियाँ मिलें एवं हम खूब मौज उड़ावें, इसी अभिप्राय से श्लोक के अर्थ में बनावटी जाली जहर मिलाया गया है। हम भूतल पर एकभी मनुष्य ऐसा नहीं पाते जो ऊपरके श्लोक से शुद्ध द्विज का पुनर्भू स्त्री के साथ में विवाह सिद्ध करे ? एक सुधारक तो क्या समस्त सुधारक मिल कर सैकड़ों जन्म

धारण करें और रात दिन खोपड़ी फोड़ें तब भी इस श्लोक से पुनर्भू के साथ शुद्ध द्विज का विवाह न निकलेगा, यदि किसी सुधारक में हिम्मत हो तो फिर लेखनी उठावे।

कुल्लूक भट्ट इस श्लोक के टीका में लिखते हैं कि—

यद्वा कौमारं पतिमुत्सृज्यान्यमाश्रित्य पुनस्तमेव प्रत्यागता भवति तदा तेन कौमारेण भर्त्रा पुनर्विवाहाख्यं संस्कारमर्हति।

जो कौमार पति को छोड़ कर अविवाहित स्त्री किसी अन्य पुरुष से संबंध जोड़ कर फिर आ जावे किन्तु हो अक्षत योनि तो फिर उस का विवाह प्रथम पति के साथ हो सकता है। कुल्लूक भट्ट ने यह जो लिखा है यद्यपि यह लोक शास्त्र दोनों के अविरुद्ध है। संसार में देखा जाता है कि जो कन्या वाग्दान होने के अनन्तर कहीं भाग गई और कुछ दिन किसी के पास रह कर वह लौट आई तथा मनुष्य के संगम से बच गई तो उस का विवाह उसी वरके साथ हो जाता है जिसके साथ उसका वाग्दान हुआ है शास्त्र दृष्टिसे भी यह कन्या अदूषित है इस कारण इसके विवाह में कोई शास्त्रका निषेध नहीं लोक और वेद दोनों में ऐसी कन्याओं का विवाह होना सर्वांश में दोष रहित है किन्तु यह अर्थ "साचेत्" इस श्लोक से नहीं निकलता ? भट्ट जी ने धर्म शास्त्र के किसी अन्य श्लोक को दृष्टि में रख टीका में यह विवेचन किया है और यह हमको

सर्वांश में मान्य है तो भी 'साचेत्' यह श्लोक इस अर्थ का प्रतिपादन नहीं करता ।

श्रोताओ ! भट्ट जी ने 'साचेत्' इस श्लोक का अर्थ पहिले पक्ष में ठीक किया है, दूसरे पक्ष में किसी धर्म शास्त्र का कोई श्लोक स्मरण होगया उसका भाव लिख दिया है किन्तु दोनों ही अर्थों को लेकर 'साचेत्' श्लोक से विधवा का विवाह या शुद्ध द्विजके साथ पुनर्भू स्त्रीका विवाह सिद्ध नहीं होता, फिर जाली अर्थ बनाकर इस श्लोकसे विधवा विवाह निकालना यह सुधारकों की नीचता नहीं तो और क्या है ?

पुनर्भू स्त्री का वहिष्कार

धर्म शास्त्रों ने पुनर्भू स्त्री और उसकेपुत्रका त्याग बतलाया है उसको क्रम से सुनते जाइये ।

सप्त पौनर्भवाः कन्या वर्जनीयाः कुलाधमाः ।
वाचादत्ता मनोदत्ता कृतकौतुकमंगला ॥
उदकस्पर्शिता या च या च पाणिगृहीतिका ।
अग्निं परिगता या च पुनर्भू प्रभवा च या ॥
इत्येताः काश्यपेनोक्ता दहन्ति कुलमग्निकाः ॥

(उद्वाहतत्त्व काश्यप वचन)

सात पौनर्भवकन्या प्रयत्न से वर्जित कर दे क्योंकि ये कुलाधमा हैं । जो वाग्दान के अनन्तर पुनर्भू हो गई है अर्थात् वाग्दान वाले पति को त्याग कर किसी अन्य से भ्रष्ट हो गई

हो इसी प्रकार मनोदत्ता, कृतकौतुकमंगला, उदकस्पर्शिता, पाणिगृहीतिका, अग्निंपरिगता और पुनर्भू की संतान, छः पुनर्भू एवं सातवीं पुनर्भू की संतान ये त्याज्य हैं।

पुनर्भू की सन्तान को दायभाग भी नहीं मिलता सुनिये।

कानीनश्च सहोढश्च क्रीतः पौनर्भवस्तथा।
स्वयं दत्तश्च शौद्रश्च षडदायाद बान्धवाः ॥१६०

मनु० अ० ६

कानीन, सहोढ, क्रीत, पौनर्भव, स्वयंदत्त और शौद्र ये छः धन के भागी नहीं किन्तु केवल बान्धव हैं।

ऊपर के श्लोक से यह स्पष्ट होगया कि पौनर्भव के पुत्र को पिता की सम्पत्ति में दायभाग नहीं मिलता। अब आगे सुनिये।

क्लीबं विहाय पतितं वा या पुनर्लभते पतिम्।
तस्यां पौनर्भवो जातो व्यक्तमुत्पादकस्य सः॥

कात्यायन।

नपुंसक या पतित पति को छोड़ कर जो स्त्री दूसरा पति करले उस की संतान पौनर्भव होगी वह पौनर्भव निन्दित देव पितृ कार्य से बाहर होगा।

और भी सुन लीजिये—

वाग्दत्ता मनोदत्ताऽग्निंपरिगता सप्तमं पदं
नीता भुक्ता गृहीतगर्भा प्रसूता चेति सप्तविधा

पुनर्भूस्तां गृहीत्वा न प्रजा न धर्मं विन्देत् ।

बौधायन ।

वाग्दत्ता, मनोदत्ता, अग्निके समीप प्राप्त हुई, सप्तपदी होगई जिसकी, जो भोगी गई, जिसको गर्भ रह गया, जिसके संतान हो चुकी इन के पश्चात् पुनर्भू होने वाली सात प्रकार की जो स्त्रियां हैं उन स्त्रियोंमें से किसीको ग्रहण करके प्रजा और धर्म को प्राप्त नहीं होता।

धर्मशास्त्रोंके इन वचनोंमें पुनर्भूको अधम कहा तथा पुनर्भू स्त्रीकी संतानको पिताकी सम्पत्तिमें दायभागका निषेध किया, फिर लिखा कि पुनर्भू से संतान पैदा करने वाला न तो संतान ही का होता है और न उस को धर्मकी प्राप्ति होती है। सिद्ध हो गया कि पुनर्भू के साथ सम्बन्ध जोड़ना धर्म के गले पर छुरी चलाना है। धर्म के परम शत्रु अंग्रेजोंके दत्तक पुत्र हिन्दू सुधारक इन श्लोकों को खूब छिपाते हैं; समझते हैं कि ये श्लोक आगे आ गये तो हमारी कलई खुल जावेगी और हमारे बनावटी जाल में एक भी मनुष्य न फंसेगा किन्तु चोरी कहाँ तक चलेगी, चोरकी माँ कब तक खैर मनावेगी? धर्म शास्त्रों के ज्ञाता जब इन प्रमाणों को विधवा विवाह के नशेबाजों के आगे रख देते हैं तब इन लोगों का चेहरा उतर जाता है और चुपके से ही चल देते हैं यह इन के बनावटी जाल का फल है जो इन को कदम कदम पर नीचा दिखलाता है।

अब उन प्रमाणों को सुनिये जिन में पुनर्भू स्त्री के अन्न को अभक्ष्य कहा है।

अन्यदत्ता तु या कन्या पुनरन्यत्र दीयते।
तस्याश्चान्नं न भोक्तव्यं पुनर्भूः सा प्रगीयते॥

अंगिरा।

जो स्त्री एक पुरुष के साथ विवाही हो यदि वह दूसरे के साथ विवाह दी जाय तो वह पुनर्भू कहलाती है उसके यहां का भोजन न खाना चाहिये।

दूसरा प्रमाण सुनिये

अन्यदत्तां तु या कन्या पुनरन्यत्र दीयते।
अपि तस्या न भोक्तव्यं पुनर्भूः सा प्रकीर्त्तिता॥५६

वृद्ध पराशर अ० ५

एक से विवाही हुई कन्या यदि दूसरे से विवाह दी जावे तो उस पुनर्भू के यहाँ का अन्न न खाया जावे।

जिस पुनर्भू के अन्न खानेमें भी धर्मशास्त्रों ने दोष बतलाया है धर्म कर्म हीन सुधारक आज उस पुनर्भू के साथ विवाह करवाना चाहते हैं और फिर पंडितों को बन्दर घुड़की देकर इस त्याज्य पाप कर्म को धार्मिक विवाह बतलाते हैं। जिसके यहां का अन्न खाने में भी पाप है क्या फिर उसके साथ कोई धार्मिक पुरुष विवाह कर सकता है? सुधारकों की दृष्टि में तो किसीके भी अन्न खानेमें पाप नहीं,ये लोग तो खुल्लमखुल्ला

खा छिप कर होटलों में मुसलमान-ईसाई, भंगी-चमारों के पाक की प्रसंशा करते हुये पेट भर उड़ा जाते हैं। बाज बाज सुधारक तो होटलों में उस अभक्ष्य पदार्थ को भी मजेसे खाते हैं कि जिसके नाम सुनने से धार्मिक हिन्दू के रोयें खड़े हो जाते हैं फिर ये पुनर्भू स्त्री के अन्न को अभक्ष्य क्यों समझने लगे? होटल भोजी सुधारको! क्या तुम सच ही हिन्दू शास्त्र को मानते हो? हिन्दू शास्त्र तो तुमको नीच से नीच बतला रहा है वह कहता है कि तुम पुनर्भू स्त्री के अन्न को मत खाओ और तुम उनका भोजन खाते हो जिनका स्पर्श कर हिन्दू को स्नान करना लिखा है तथा फिर प्रसंशा यह है कि इतने पर भी तुम धार्मिक बनते हो? तुम जो यह कहते हो कि हम धर्मशास्त्रों को मान उन्हीं धर्मशास्त्रों के अवलम्ब से विधवा विवाह चलाते हैं कौन कहता है कि तुम धर्मशास्त्र को मानते हो? तुमतो धर्मशास्त्रों का जाल बिछा कर हिन्दुओंको ईसाई बना रहे हो क्या तुम्हारे इस बनावटी जाल को संसार नहीं समझता? जब धर्म शास्त्र ने पुनर्भू के अन्न खाने का निषेध कर दिया तब तुम शास्त्र का ढोंग रचकर पुनर्भू के साथ विवाह कैसे करवा दोगे? श्रोत्रियगण! शास्त्रोंका विवेचन करना और उससे धर्माधर्म की व्यवस्था निकाल कर उस व्यवस्था के अनुकूल कार्य करना यह धार्मिक मनुष्यों का काम है सुधारक न तो धर्मशास्त्र को जानतेहैं और न मानतेहैं इनको तो धर्मशास्त्र का धोखा देकर विधवाविवाह चला हिन्दू जाति

को वर्ण संकर बना ईसाई साँचे में ढालना ही इष्ट है तथा यही इन की दृष्टि में उन्नति है। इस कार्य के लिये जो सुधारकों को लक्षों रुपये माहवारी मिलते हैं ये उस रुपये की तरफ देखें या तुम्हारे धर्म की तरफ? इनको तो रुपया प्यारा है, रुपये के लोभ से ही आज सुधारक हिन्दू जाति और हिन्दू धर्म के शत्रु बने हैं।

जिन विचार शील पुरुषों को धर्म प्यारा है, जो संसार की सम्पत्तियों को धर्म के सामने बूट से ठुकरा देते हैं जो जानते है कि पुनर्भू स्त्री अधम या पतित है जिस पुनर्भू की संतान को पिता की जायदाद में दायभाग मिलने का निषेध है जिसमें संतान पैदा करने से मनुष्य धर्म को खो बैठता है वेद ने स्त्री के पुनर्भू होने पर उस स्त्री को और उस के पति को इस पाप के दूर करने के लिये प्रायश्चित्त रूप अजयाग बतलाया, जिस पुनर्भू स्त्री के अन्न खाने में भी धर्मशास्त्र पाप बतला रहा है उसके साथ धर्म दृष्टि से कोई कैसे विवाह कर लेगा? इसका उत्तर सुधारकों के पास तथा सुधारकों के लीडर एवं पिठलगुओं के पास नहीं है।

और भी प्रमाण सुनिये—

औरभ्रिको माहिषिकः परपूर्वा पतिस्तथा।
प्रेतनिर्यातकश्चैव वर्जनीया प्रयत्नतः ॥१६६॥

मनु० अ० ३

मेंढ़ा और भैंस से जीने वाला परपूर्वा पुनर्भू का पति

प्रेत का धन लेने वाला ये ब्राह्मण यत्न पूर्वक श्राद्ध में वर्जनीय है ।

इस की पुष्टि यह है।

तथैव पतयस्तासां वर्जनायाः प्रयत्नतः ॥६५॥

वृद्ध पराशर ५

इसी प्रकार पुनर्भू और स्वैरिणी स्त्रियों के पति श्राद्ध में यत्न पूर्वक वर्जनीय हैं ।

पौनर्भव को दान देने का निषेध देखिये।

भस्मनीव हुतंहव्यं तथा पौनर्भवे द्विजे॥१८१॥

मनु० अ० ३

पौनर्भव द्विज को दान देना ऐसा है जैसे राखमें हवन करना।

पुनर्भू का पति सर्वदा अपवित्र होता है इसमें धर्मशास्त्र का यह प्रमाण है।

अन्यपूर्वा यस्य गेहे भार्या स्यात्तस्य नित्यशः ।
आशौचं सर्वकार्येषु देहे भवति सर्वदा ॥

(निर्णय सिंधु तृतीय परिच्छेदधृत स्मृत्यन्तर वचन)

अन्य पूर्वा जो स्त्री प्रथम किसी दूसरे पुरुष से विवाह या मैथुन सम्बन्ध कर चुकी हो ऐसी पुनर्भू स्त्री जिसके घर में हो वह समस्त कार्यों में सर्वदा अपवित्र रहता है ।

"थ एते मनु० ३ । १८१" के टीका में कुल्लूक भट्ट लिखते हैं कि—

स्वबीजजातावपि पौनर्भव शौद्रौ न कर्तव्यौ ।

अपने वीर्य से पौनर्भव और शूद्र ये पुत्र उत्पन्न न करने चाहिये।

याज्ञवल्क्य स्मृति की अपरार्का टीका कार "पर पूर्वा १। २२४" श्लोक पर हारीत का प्रमाण देते हैं कि—

स्वैरिणीच पुनर्भूश्च रेतोधा कामचारिणी ।
सर्वभक्षा च विज्ञेया पंचैताः शूद्रयोनयः ॥
एतासां यान्यपत्यानि चोत्पद्यन्ते कदाचन ।
न तान्पंक्तिषु युञ्जीत नैते पंक्त्यर्हकाः स्मृताः ॥

स्वैरिणी, पुनर्भू, रेतोधा, कामचारिणी और सर्वभक्षा ये पांच स्त्रियां शूद्रा जाननी चाहिये। इन शूद्र योनि की स्त्रियों में जो पुत्र उत्पन्न हों उन पुत्रों को कभी भी भोजन के समय पंक्ति में न बिठलावे क्योंकि ये पंक्ति के योग्य नहीं हैं।

पापी पेट के कुत्ते, गुण्डे, बेईमान विधवा विवाह विधायक पुस्तकों के लेखक सुधारकों ने इन प्रमाणों को न लिख कर जनता को धोखा दिया है क्या इनको ये प्रमाण नहीं दीखे? जब मतलब के प्रमाण आते हैं तब देख लेते हैं और इन प्रमाणों के देखने के लिये इनकी आंखें फूट जाती हैं, धोखा देने वाले तथा बनावटी पुस्तकों के लेखक सुधारक इन प्रमाणों का जबाव दें नहीं तो चुल्लू भर पानी में डूब कर मर जांय।

जिस समय सुधारक विधवा विवाह का निर्णय करने

चलते हैं. उस समय विद्या-विचार, वेद-धर्मशास्त्र सबको ताक में रखकर मन गढ़न्त जाल बिछा देते हैं। इसी नियम से रामचरण कान्यकुब्ज पाठशाला कानपुर के प्रधानाध्यापक पं० रामसेवक जी शास्त्री ने सुधारक रोग में फंस कर आज समाचार पत्र काशी में एक लेख लिखा कि 'अक्षता पुनर्भू का विवाह बिना दान और क्षता पुनर्भू का विवाह दान देकर हो सकता है। यह लेख तो लिखा किन्तु इसकी पुष्टि में प्रमाण एक नहीं दिया, केवल हुक्म निकाला है, शास्त्री जी ने अपने मन में समझ लिया कि हम विद्वान् हैं इसी कारण से पबलिक हमको निराकार ईश्वर का बाबा समझ कर हमारे हुक्म को बिना प्रमाण के ही मान लेगी; फिर प्रमाण लिखने का कष्ट क्यों उठाया जावे या पंडित जी को पुनर्भू का विवाह करवाना इष्ट था और उसमें स्मृतियों ने साथ नहीं दिया अतएव प्रमाण नहीं लिखा गया। प्रथम तो शास्त्री जी ने अपने कथन की पुष्टि में प्रमाण नहीं दिया (२) जो प्रमाण पुनर्भू के बहिष्कार के हमने ऊपर लिखे हैं उनको छिपाया, इस प्रकार की कतर ब्योंत से विवाह सिद्ध करने वाले शास्त्री जी को यदि कोई नास्तिक कहे तो क्या इसमें कोई अत्युक्ति है? यदि शास्त्री जी को विधवा विवाह चलाना ही है और उनको ऊँट की खुजली की भांति सुधारक रोग चिपट ही गया है तो फिर शास्त्री जी न तो धर्मशास्त्र का गला घोंटें तथा न बनावटी जाल में संसार को फांस कर धोखा दें, सीधे अक्षरों में यह

कह दें कि हमको हिन्दू शास्त्रों से घृणा होगई है और हम योरुप के आदर्श को ही परम धर्म मानते हैं इस कारण विधवा विवाह चलाना चाहते हैं। इससे विधवा विवाह भी कुछ लोग मान लेंगे और शास्त्रीजी धोखा देने रूप भयङ्कर पाप से भी बच जावेंगे।

बनावटी प्रमाण ।

विधवा विवाह विधायक पुस्तकों के लेखकों का यह अभिप्राय है कि चाहे हमको घोर पाप या महा पाप भी करना पड़े किन्तु किसी प्रकार संसार में विधवा विवाह चल जावे। इसी सिद्धान्त को आगे रख विधवा विवाह ग्रन्थों के लेखक ऋषि और मुनियों के नाम से झूठे प्रमाण बना लेते हैं तथा फिर उन को किसी ग्रंथ के नाम से अपनी पुस्तक में लिख देते हैं इस अयोग्य, अनुचित पापका अवलम्बन कर लेखक संसार को धोखे में डाल रहे हैं। पं० बदरीदत्त जी जोशी की बनाई हुई 'विधवोद्वाह मीमाँसा' नामक पुस्तक में हमको कुछ ऐसे प्रमाण मिले कि जो सर्वथा बनावटी और जाली हैं। यद्यपि जोशी जी ने लिख दिया था कि "स्वर्गीय डाक्टर मुकुन्दलाल आगरा निवासी ने ये प्रमाण "सनातनधर्म" नामक पुस्तक में लिखे हैं और उन्हों ने दीवान बहादुर पं० रघुनाथ राव की पुस्तक से संगृहीत किये हैं तथा वह पुस्तक हम को प्राप्त नहीं हुई इस का हम को खेद है" इस लेख को देख कर हमने इन प्रमाणोंके खोजनेमें बड़ा परिश्रम किया "कुलशील विहीनस्य"

और "विवाहो जायते राजन्" इन प्रमाणों को तो हम पहिले ही से जानते थे शेष प्रमाणों की खोज में हमने बड़ा परिश्रम किया। बाज बाज तो ग्रन्थ ही न मिले एवं बाज बाज ग्रन्थोंमें प्रमाण नहीं मिले, विवश हो चुप रह गये और जान गये कि ये बनावटी झूठे प्रमाण साधारण जनता को जाल में फांस विधवा विवाह चलाने के लिये किसी हजरतने बनाकर तैयार किये हैं। हमने एक और उचित समझा, संभवहै पुस्तक लिखते समय ये प्रमाण जोशी जी को न मिले हों एवं बादमें मिलगये हों उन से भी हम एक बार पूछ लें। यह समझ कर हमने अपने मित्र जोशी जीको एक रजिस्ट्री चिट्ठी लिखी वह यह है।

चिट्ठी।

अमरौधा—कानपुर।

ता० १। १२। २८।

मित्रवर श्री पं० बदरीदत्त जी जोशी अध्यापक प्रेम विद्यालय। अनेक शुभ नमस्कार

आज कल मैं "विधवा विवाह निर्णय" नामक ग्रंथ लिख रहा हूँ। इस ग्रन्थ की पूर्ति के लिये मुझे आप की लिखी "विधवोद्वाह मीमांसा" भी देखनी पड़ी है। मैंने उत्तम रीति से देखा और प्रमाणोंको ग्रन्थों से मिलाया किन्तु बहुत प्रमाण ऐसे हैं कि जिन का पता नहीं लगता, आप हमारे ऊपर दया कर के इन नीचे लिखे प्रमाणों का ठीक पता दें जिस से हम इन का विवेचन कर सकें।

कुलशीलविहीनस्य षण्ढस्य पतितस्य च।
अपस्मारि विधर्मस्य रोगिणो वेशधारिणः॥
दत्तामपि हरेत्कन्यां सगोत्रोढां तथैव च।

(स्मृतितत्वधृत वसिष्ठ वचन)

मरणानन्तरं भर्तुर्यद्यनाहतयोनयः।
स्त्रियो विवाहमर्हन्ति नात्र कार्या विचारणा॥

गोतम।

पुरुषाणामिव स्त्रीणां विवाहा बहवो मताः।
भर्तृनाशे पुनः स्त्रीणां पुंसां पत्नीलये यथा॥

वैशंपायन।

आषोडशवयो नार्यो यदि ता मृतभर्तृकाः।
पुनर्विवाहमर्हन्ति न तत्र विशयो भवेत्॥

कश्यप।

ब्राह्मणाः क्षत्रियावैश्याः शूद्रा स्वकुलयोषिताम्।
पुनर्विवाहं कुर्वीरन्नान्यथा पापसंभवः।

जावालि।

भर्त्रभावे वयः स्त्रीणां पुनः परिणयो मतः।
न तत्र पापं नारीणामन्यथा तद्गतिर्नहि॥

अगस्त्य।

पत्निनाशे यथा पुंसो भर्तृनाशे तथा स्त्रियाः ।
पुनर्विवाहः कर्तव्यः कलावपि युगे तथा ॥

व्याघ्रपात ।

भर्तृसम्बन्ध शून्यानां भर्तृनाशे तु योषिताम् ।
पुनर्विवाहं कुर्वीत पापं नैव मनागपि ॥

वशिष्ठ ।

अज्ञातभर्तृसम्बन्धा भवन्ति यदि योषितः ।
गतप्रिया यदा तासां पुनः परिणयो भवेत् ॥

वृहस्पति ।

अस्पृष्टलिंगयोनीना-माविंशतिवयः स्त्रियाः ।
पुनर्विवाहः कर्तव्यश्चतुर्ष्वपि युगेष्वपि ॥

विश्वामित्र ।

पूर्वन्निषेकान्नारीणां मृते पत्यौ ततः परम् ।
दशाहाभ्यंतरे कुर्याद्विवाहन्तु पुनः पिता ॥

च्यवन ।

निषेकोनन्तरं स्त्रीणां भर्तुर्भर्तृत्वमुच्यते ।
पाणिग्रहणमात्रेण न भर्ता सर्वयोषिताम् ।

मार्कण्डेय

आगर्भ धारणात्स्त्रीणां पुनः परिणयः स्मृतः ।
भर्तृनाशे तु मांगल्यं प्राप्तुमर्हन्ति योषितः ॥

याज्ञवल्क्य

गर्भाधानविहीनानां स्त्रीणां कर्माधिकारिता।
भर्तॄणां विषयेणैव म्रियमाणेषु तेष्वपि॥

शौनक।

यदि सा बालविधवा बलात्यक्ताऽथवा क्वचित्।
तदा भूयस्तु संस्कार्या गृहीत्वा येन केनचित्॥

वीरमित्रोदय धृत ब्रह्मपुराण वचन।

विवाहो जायते राजन् कन्यायास्तु विधानतः।
पतिर्मृत्युं प्रयात्यस्या नोचेत्संगं करोति च॥
महा व्याध्यभिभूतश्च त्यागं कृत्वा प्रयातिवा।
उद्वाहितायां कन्यायामुद्वाहः क्रियते बुधैः॥

पद्मपुराण भूमि खण्ड अ० ८५

षण्ढेनोद्वाहितां कन्यां कालातीतेऽपि पार्थिवः।
जानन्नुद्वाहयेद्भूयो विधिरेषः शिवोदितः॥६६॥
परिणीता न रमिता कन्यका विधवा भवेत्।
साप्युद्वाह्या पुनः पित्रा शैवधर्मेष्वयं विधिः॥६७

महानिर्वाणतंत्र उल्लास ११

जिन ग्रन्थों में इन श्लोकों का पता दिया है, उन को हमने खूब टटोला किन्तु इन श्लोकों का पता न चला। अब आप इन श्लोकों का पूरा पता अध्याय

और श्लोक संख्या सहित लिखने की कृपा करें, आपको कष्ट अवश्य होगा किन्तु निर्णय भी हो जावेगा।

कालूराम शास्त्री मु: पो० अमरौधा जि० कानपुर

चिट्ठी पाने पर भी जोशी जी ने हमको उत्तर नहीं दिया यह उनकी इच्छा। यद्यपि हम उत्तमरीति से जानते हैं कि ये श्लोक जोशी जी के बनाये नहीं है बनावटी श्लोकों को धर्म शास्त्र के नाम से लिख देना यह किसी चलते पुर्जे उस्ताद का काम है तो भी जोशी जी दोषी हैं उन्हों ने अपनी पुस्तक में इन बनावटी श्लोकों को स्थान क्यों दिया? जोशीजी लिखते हैं हमको खेद है कि दीवान बहादुर का ग्रंथ हमको नहीं मिला उनका यह लिखना मूर्खों के ऊपर अपना जाल फैलाना है। दीवान बहादुर के ग्रंथ देखने की क्या आवश्यकता थी? यदि दीवान बहादुर का ग्रंथ जोशी जी को मिल जाता और उसमें ये श्लोक भी मिल जाते तो क्या ये श्लोक सत्य हो सकते थे? क्या इनको प्रमाण माना जा सकता था क्या दीवान साहब वेद के रचयिता निराकार ईश्वर थे या धर्मशास्त्रों के निर्माता कोई महर्षि, कुछ भी नहीं। क्या दीवान बहादुर होने से इन का लेख प्रमाण हो जायगा? हरगिज़ नहीं। इन प्रमाणों के नीचे जो आर्ष ग्रन्थों के पते लिखे हैं जोशी जी को उन ग्रन्थों की खोज करनी चाहिये थी, उनमें निकलते तो ये प्रमाण मान्य होते? उन ग्रथों को या तो जोशी जी ने देखा

नहीं या आर्षग्रन्थों में जोशी जी को ये प्रमाण मिले नहीं ? पुस्तक का स्वरूप बढ़ाने के लिये ये जाली श्लोक जोशी जी ने अपनी बनाई पुस्तक में लिख दिये और कलंक का टीका डाक्टर मुकुन्दलाल एवं दीवान बहादुर रघुनाथ राव के मत्थे मढ़ दिया। क्या लेखकका यह कर्तव्य नहीं है कि जिस लेख को वह अपने ग्रंथ में उद्धृत करे उद्धृत करने से पहिले लेख की सत्यता को जांच ले ? जोशी जी इस कर्तव्य से विमुख क्यों हुये ? जाल फैलाने के लिये, विधवाविवाह को धर्म सिद्ध करने के लिये ? जोशी जी के इस कार्य को हम घृणा की दृष्टि से देखते हुये धार्मिक हिन्दुओं को सचेत करते हैं कि तुम इन सुधारकों के जाल में मत फंसो, ये बनावटी श्लोकों को अपने ग्रन्थों में लिख तुम्हारे धर्म और तुम्हारी जाति का मटिया मेट कर तुमको ईसाई बना रहे हैं।

नकल।

विधवाविवाह विधायक ग्रंथों के रचयिता विधवा विवाह के निर्णय के लिये श्रुति स्मृति, पुराण इतिहास को नहीं देखते वरन् किसी विधवा विवाह विधायक ग्रंथ से प्रमाण उठा भाषा में रद् बदल कर प्रमाणों को आगे पीछे डाल पुस्तक तैयार कर देते हैं और उस पर अपना नाम लिख पंचम सवार की भांति पंडित बन जाते हैं। विधवा विवाह के लेखकों की यह दशा है इसके ऊपर कोई भी विचार शील,

मनुष्य आंसू बहाये विना नहीं रह सकता। इनको धर्मशास्त्र का निर्णय नहीं कहते, नकल करना कहते हैं।

योग्यता।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर एवं गोस्वामी राधाचरण तथा महामहोपध्याय पं० प्रमथनाथ प्रभृति कुछ सज्जनों को छोड़ कर शेष जितने भी विधवा विवाह विधायक पुस्तकोंके लेखक हैं उनको संस्कृत में कुछ भी योग्यता नहीं। आप उनके संस्कृत और भाषार्थोंको देखिये तो ज्ञात होजायगा कि इनको तो प्रमाणों के अर्थ करने भी नहीं आते। जब ये संस्कृत पदों के अर्थ भी नहीं कर सकते तो फिर वेद और धर्मशास्त्र का विवेचन कौन करेगा? ये लोग तो प्रमाणों को आगे रख मन-माना अण्ड बण्ड अर्थ लिख रहे हैं, इनका लेख ही यह सिद्ध कर देता है कि इनमें वेद तथा धर्मशास्त्र के निर्णयकी योग्यता ही नहीं?

बस वेद शून्य, धर्मशास्त्र शून्य, पुराण इतिहास के विज्ञान शून्य मूर्ख मनुष्योंने ही पुस्तकें लिख संसारको धोखेमें डाल आज विधवाविवाह का कोलाहल मचाया है धार्मिक लोग इनके बनावटी जाल में न फंसें ग्रंथों को पढ़ें, देखें, विचारें ऐसा करने पर लेखकों की पोल खुलेगी और धर्म का ज्ञान होगा।

श्रोत्रियवर्ग! आप धार्मिक हैं, धार्मिकों की संतान हैं, क्या आपका यह धर्म नहीं है कि धार्मिक ग्रंथोंको पढ़ें? यदि संस्कृत नहीं जानते तो भाषा टीका देख लें, इनके प्रमाणोंको मिलावें,

इन स्वार्थी लोगों का भण्डा फोड़ा होगा और आप लोगों को धर्मका ज्ञान होगा। आप "कौआ कान लेगया" इस कहावत को अपने ऊपर चरितार्थ न करें। मुझे आशा है कि आप मेरी प्रार्थना पर ध्यान देंगे। मैं आज अपने व्याख्यान को यहां पर ही समाप्त करता हूँ कल के व्याख्यान में आपको दिखलाऊंगा कि धर्मशास्त्र किस जोर के साथ विधवाविवाह का खण्डन करता है। एक बार बोलिये भगवान् कृष्णचन्द्र की जय। -

कालूराम शास्त्री।

* श्रीहरिश्शरणम् *

विधवा विवाह निषेध

श्रियाश्लिष्टोविष्णुः स्थिरचरगुरुर्वेदविषयो,
धियां साक्षी शुद्धो हरिरसुरहंताब्जनयनः।
गदीशंखीचक्री विमलवनमाली स्थिररुचिः,
शरण्योलोकेशो ममभवतु कृष्णोऽक्षिविषयः ॥१॥
यतः सर्वं जातं वियदनिलमुख्यं जगदिदं,
स्थितौ निःशेषंयोऽवति निजसुखांशेन मधुहा।
लये सर्वं स्वास्मिन्हरति कलया यस्तु स विभुः,
शरण्योलोकेशो मम भवतुकृष्णोऽक्षिविषयः ॥२॥

सुधारक भेद।

र्तमान कालमें सुधारकों में तीन भेद हैं उच्च, मध्यम, निकृष्ट। जो उच्च श्रेणी के सुधारक हैं उनकी दृष्टि में वेद पुराण, धर्मशास्त्र-दर्शन बेवकूफ लोगों के बनाये हैं। उनकी दृष्टि में हिन्दू-मुसलमान, ईसाई-यहूदी सब एक हैं, वे लोग धर्म या मजहबों को किंचित् भी नहीं मानते, उनका कथन है कि श्रुति-

स्मृति पुराण-इतिहासमें विधवा विवाह नहीं लिखा तो न सही किन्तु विधवाविवाह होना चाहिये इनकी आन्तरिक इच्छाहैकि मनुष्योंमें जो धार्मिक और जाति भेद हैं इनको जल्दीसे जल्दी संसार से उठा देना चाहिये, ये लोग योरुप की लेडियों से विवाह करने में प्रतिष्ठा समझते हैं, इन्होंने सर्वांश में हिन्दू सभ्यता की अन्त्येष्टि करने पर कमर बांध हिन्दुओं को नकली ईसाई बनाने का प्रबल उद्योग कर रक्खा है। इसी गिरोह के मनुष्य देश के लीडर हैं। कांग्रेस, जातीय सभाएं एवं हिन्दू सभा तथा आर्य समाज में इनका साम्राज्य है। आज इनकी आवाज का भारतवर्ष में प्रभाव है ये उच्चश्रेणीके सुधारक हैं।

हिन्दुओं ने बड़ी गलती खाई है जो इनको लीडर मान लिया। ये लोग देश की तरक्की, स्वराज्य की प्राप्ति का लोभ देकर हिन्दूधर्म का नाश कर रहे हैं यह बात अनुभवी लोगों के अनुभव में आ चुकी है कि देशोन्नति और स्वराज प्राप्ति के पहिले ही ये लोग हिन्दूजाति को ईसाई सांचे में ढाल हिन्दू सभ्यताको नष्टकर देंगे,यदि स्वराज पहिले मिलगया तो फिर ये लोग अत्याचार से धार्मिक लोगों को दबा डालेंगे इतने पर भी हिन्दू इनके काबू में न आ सके तो फिर ये लोग काबुलकी भांति धर्माचार्य, साधु, पंडित, उपदेशकोंको फांसी पर लटका कर प्राचीन सभ्यता को उड़ावेंगे, हिन्दूधर्मके लिये सुधारकों का यह दल बड़ा भयंकर है और शेष दोनों दल इसके इशारे पर काम करते हैं।

सुधारकों का मध्यम दल भी घोर नास्तिक है, यह स्वतः वेदादि सच्छास्त्रों को बिलकुल नहीं मानता, धार्मिक हिन्दुओं को धोखा देने के लिये यह धार्मिक बनने का ढोंग फैलाता है, विधवाविवाह विधायक पुस्तकों के सभी लेखक प्रायः इसी दल के हैं, धोखा देकर धर्म छुड़ाना धोखा देने वाली पुस्तक लिखना या अखबारों में बनावटी लेख लिखकर संसार को धोखा देना अथवा सभाओं में जाली व्याख्यानों से पबलिक का धर्म भगा कर नास्तिक बनाना बस यह एक ही लक्ष्य इनके जीवन का है। अभीतक इनमें कुछ लज्जा है उस लज्जा के भय से यह दल स्पष्ट नहीं कहता कि हम वेद शास्त्रों को नहीं मानते इसी से इस दल का नाम माध्यमिक दल है।

सुधारकों का तृतीय दल निकृष्ट दल है। अभी यह दल स्वतः घोर नास्तिक नहीं हुआ, यह कुछ वेद शास्त्रोंको लेकर चलता है किन्तु जब यह सुनता है कि अछूतोद्धार से हिन्दुओं का संगठन होगा, शुद्धि से तादाद बढ़ेगी और विधवाविवाह से देश की तरक्की होगी तब इस दल की भी जबान से लार टपक उठती है, इसके अनन्तर जब यह अछूतोद्धारकी छोटी छोटी किताबें एवं शारदा की लिखी हुई 'शुद्धिचन्द्रोदय' तथा बदरीदत्त जोशी की लिखी 'विधवोद्वाहमीमांसा, प्रभृति पुस्तकें देखता है तब यह इनके धोखे को न जान समझ बैठता है कि श्रुति स्मृति, इतिहास-पुराण में अस्पृश्यों के साथ भोजन करना, शुद्धि में मुसलमानों के हाथ का हलुआ उड़ाना और

विधवा विवाह करना यह वेदादि सच्छास्त्र प्रतिपाद्य धर्म है धर्म समझ कर यह उच्च दल तथा मध्यम दल का साथ देता है। इस दलके मनुष्य को सत्संगति या पुस्तकावलोकनसे जब सत्य ज्ञान हो जाता है तब यह सुधारक रूप कांठी को दूर फेंक देता है यह तीसरा दल है। मध्यम दल और निकृष्ट दल जब तरक्की करेंगे तब उच्चदल में शामिल हो जावेंगे।

इस प्रकार के तीन दल सुधारकों में हैं आज मध्यम दल का कुछ विवेचन करना है। इस दल के लेखक यह दावा करते हैं कि श्रुति स्मृति, पुराण-इतिहास में विधवा विवाह को धर्म माना है। ये स्वतः जानते हैं कि हमको हिन्दू ग्रंथ मान्य नहीं वरन् ग्रंथों की आड़ से हिन्दुओं को ईसाई बनाना हमारा कर्तव्य है। ये लोग यह भी जानते हैं कि श्रुति स्मृति में विधवा विवाह को पाप बतलाया है इतना जान कर भी संसार को अपने जाल में फांसनेके लिये आस्तिक से नास्तिक और हिन्दू से ईसाई बनाने के लिये श्रुति स्मृति में विधवा विवाह है यह झूठा दावा करते रहते हैं।

आज हम यह दिखलावेंगे कि स्मृतियों में विधवाविवाह का घोर खण्डन है, जिन प्रमाणोंको हम आपके आगे रक्खेंगे उन प्रमाणों को ये नास्तिक लेखक चोरी से छिपाया करते हैं यदि कोई दूसरा पंडित इन्हीं प्रमाणोंको इन नास्तिक लेखकों के आगे रख दे तो फिर ऐसे भागते हैं जैसे गधे के शिर से सींग गये। आज उन प्रमाणों को हम आपके आगे रखते हैं

आप सुनिये और उन प्रमाणों को नोट कीजिये, नोट हुवे प्रमाणों का चक्कू बनाकर इन नास्तिक लेखकों की नाक काट डालिये। झूठे मनुष्यको जब तक सजा न दी जायगी तब तक वह हरगिज न मानेगा, बुरी आदत को छुड़ाने के लिये सजा देनी आवश्कीय है बस इनकी यही सजा हैकि आजके प्रमाणों को इनके आगे रक्ख दो,ये झूठे बन जायगे और दश आदमियों के बीचमें जब झूठे बनेंगे तो फिर नाक कटनेमें क्या संदेह है।

विवाह भेद।

धर्मशास्त्रों ने एक ही प्रकार का विवाह नहीं बतलाया वरन् विवाह के आठ भेद किये हैं, इन आठ भेदों का वर्णन सुनिये।

ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः॥ २१

मनु० अ० ३

ब्राह्म. दैव, आर्ष, प्राजापत्य. आसुर, गान्धर्व, राक्षस और अधम पैशाच ये आठ प्रकार के विवाह हैं।

आठ प्रकार के विवाह केवल मनुस्मृति में ही नहीं है वरन् इन विवाहों का वर्णन अनेक स्मृतियोंमें है पुष्टिके लिये हम शंख स्मृति का प्रमाण और दिये देते हैं सुनिये

ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः ॥२॥

शंख० अ० ४।

ब्राह्म; दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच ये आठ प्रकार के विवाह हैं इन में आठवां पैशाच अधम नाम नीच है।

स्मृतियों ने श्रेष्ठ और निकृष्ट भेद से आठ प्रकार के विवाह बतलाये हैं. कोई भी स्मृति नौ विवाह नहीं बतलाती। जब स्मृतियों में आठ ही प्रकारके विवाह हैं तो फिर नवम विधवा विवाह क्या कुरान को स्मृति मान कर चलाया जावेगा ? स्मृतियों ने आठ प्रकार के विवाह बतलाये हैं और इन आठ प्रकार के विवाहों में विधवा विवाह है नहीं, फिर कौन कह सकता है कि स्मृतियों में विधवा विवाह है ? स्मृति विरुद्ध नवम विधवा विवाह चलाना स्मृतियोंका गला घोटना है तथा फिर नवम विधवा विवाह को स्मृति प्रतिपाद्य कहना सुधारकों का वह सफेद झूठ है जो स्थान स्थान पर नीचा दिखलावेगा। स्मृतियां आठ विवाह और उन के नाम बतला कर नवम विधवा विवाह का घोर खण्डन कर रही है, यदि स्मृतियों की दृष्टि में विधवा विवाह-विवाह होता तो स्मृतियां आठ की जगह नौ नाम लिख देतीं किन्तु इन की दृष्टि में "ब्राह्म दैव आर्ष प्राजापत्य आसुर गान्धर्व राक्षस और पैशाच" ये आठ विवाह हैं; इन से भिन्न शेष स्त्री पुरुष का संयोग व्यभिचार तथा पाप है। स्मृतियों ने विवाह के आठ नाम लिख कर विधवा विवाह को व्यभिचार सिद्ध किया है अब कौन कह सकता है कि विधवा विवाह स्मृतियों की दृष्टि में धर्म है ?

सुधारकों के समस्त जालों को तोड़ डालने के लिये स्मृतियों की विवाह संख्याही काफी है। जब स्मृतियोंने आठही विवाह माने और उन में विधवा विवाह आया नहीं तो फिर विधवा विवाह स्मृति सम्मत हुआ कैसे ? क्या कोई सुधारक इस का उत्तर देगा ? एक भी सुधारक चूं नहीं करेगा। जब चोर नकब (सेंध) पर पकड़ लिया जाता है तब चोर की समस्त बनावटी बातें कूच कर जाती हैं: आज हमने चोरटे सुधारकों को ठीक मौके विवाह संख्या पर पकड़ा है, अब ये अपनी उछल कूद को भूल कर घर में धंसने के सिवाय और कुछ नहीं कर सकते। यहां इन की जबान बन्द, लेखनी बन्द, हां-अलबत्ते इन के पास एक इलाज अवश्य है वह यह कि जब इनके आगे कोई मनुष्य यह प्रश्न रख दे कि स्मृतियों में विवाह तो आठ ही हैं नवम विधवा विवाह कहां है ? तब सुधारकों के पास यह इलाज है कि वहाँ से फौरन भाग दें, भागने के सिवाय और कोई इलाज नहीं। भागते समय भी हमारी यह राय है कि इन के पीछे पीछे प्रश्न वाला भी भाग दे तथा इन से यह कहता जाय कि नवम विधवा विवाह कहां से आया ? इन के घर जाके भी यही सवाल करे, ऐसा करने पर फिर ये स्वप्न में भी विधवा विवाह का नाम न लेंगे।

योग्य कन्या।

धर्मशास्त्रों ने प्रत्येक द्विजाति को विवाह के योग्य कन्या से विवाह करना लिखा है और अनन्यपूर्विका को विवाह के

योग्य बतलाया है "अनन्यपूर्विका का अर्थ है" जो पहिले किसी अन्य के साथ विवाह या संगम न कर बैठी हो"। अब इस के प्रमाणों को सुनिये। प्रथम प्रमाण यह है।

अविप्लुतब्रह्मचर्यो लक्षण्यां स्त्रियमुद्वहेत्।
अनन्यपूर्विकां कान्तामसपिण्डां यवीयसीम्॥५२॥

याज्ञवल्क्य अ० १।

अखंडित ब्रह्मचर्य द्विज अच्छे लक्षणों वाली सुन्दर रूपवती अतिशय युवति कन्या के साथ विवाह करे कि जिसका अन्य किसी पुरुष के साथ विवाह या संयोग न हो चुका हो।

व्यास स्मृति लिखती है कि—

अनन्यपूर्विकां लघ्वीं शुभलक्षणसंयुताम्॥३॥

व्यास० अ०।२।

जिस कन्या का अन्य के साथ पहिले विवाह न हुआ हो, जो विशेष मोटी न हो, शुभ लक्षणों वाली हो ऐसी कन्या के साथ विवाह करे।

इसी बात को गौतम स्मृति कहती है कि—

गृहस्थः सदृशीं भार्यां विन्देतानन्यपूर्वां यवीयसीम्॥ १ ॥

गौतम अ०।४।

गृहस्थ पुरुष ऐसी स्त्री को विवाहे जो अपने समान उत्तम कुल की हो, जिस का किसी के साथ विवाह न हुआ हो, जो ठीक युवति हो।

वसिष्ठ स्मृति में लिखा है कि—

गृहस्थो विनीतक्रोधहर्षो गुरुणानुज्ञातः स्नात्वाऽसमानार्षामस्पृष्टमैथुनां यवीयसीं सदृशीं भार्यां विन्देत ॥ १ ॥

वसिष्ठ अ० ८।

ब्रह्मचारी गृहस्थाश्रम में रहे तो गुरु की आज्ञा से समावर्त्तन स्नान करके अधिक क्रोध हर्ष का त्याग करता हुआ राग द्वेष रहित होके जिसका किसी पुरुष से संग न हुआ हो, जो अपने गोत्रकी न हो ऐसी युवति अपने तुल्य कुल सम्पत्ति आदि वाली स्त्री से विवाह करे।

इसकी पुष्टि में पाराशर माधव लिखते हैं कि

अनन्यपूर्विकामिति दानेनोपभोगेन वा पुरुषान्तराऽगृहीताम्। अनेनपुनर्भूर्व्यावर्तते।

'अनन्यपूर्विका' इसका अर्थ है कि दान से और उपभोग से जो दूसरे पुरुष ने न ग्रहण की हो। इससे पुनर्भू के साथ विवाह करने का निषेध सिद्ध है।

इसी बातको कहती हुई मिताक्षरा लिखती है कि—

अनन्यपूर्विकां दानेनोपभोगेन वा पुरुषान्तरा परिगृहीताम् ॥

'अनन्य पूर्विका' इस कथन से यह सिद्ध हुआ कि जो

स्त्री दान और मैथुन से दूसरे ने नहीं ग्रहण की उसके साथ विवाह करे।

इस विषय में काम सूत्र भी लिखता है कि—

सवर्णायामनन्यपूर्वायां शास्त्रोऽधिगतायां धर्मार्थे पुत्राः सम्बन्धः।

वात्स्यायन कामसूत्र।

अपने वर्ण की 'अनन्य पूर्वा' जिसका दान भोग किसी अन्य पुरुष के साथ नहीं हुआ, जिसके विवाहने की आज्ञा शास्त्र ने दी है धर्म के लिये पुत्रार्थ सम्बन्ध करना चाहिये।

श्रोत्रिय वर्ग ! आपने सुन लिया, सभी स्मृतियां प्रत्येक द्विजके लिये आज्ञा देती हैं कि तुम ऐसी स्त्रीसे विवाह करना जिसका विवाह किसी अन्य पुरुषसे न हुआ हो। हमने बरातोंमें देखा है कि बाज बाज चोर मनुष्य अवसर मिलने पर किसी बरातीके जेवर को चुरा लेते हैं इसी प्रकार सुधारक चोरदे स्मृतियों के इन उपरोक्त प्रमाणों को ऐसा चुराते हैं कि किसी के सामने नहीं आने देते, इनके मुंह से विधवा विवाह की बात को सुनकर यदि कोई विद्वान् इन प्रमाणों को आगे रख दे तब इनको यही सूझता है कि किसी प्रकार इससे पिण्ड छुड़ाओ ? तब ये पंडित की प्रशंसा करते हुये भागने के अवसर को टटोला करते हैं। कहिये, सच बतलाइये सुधारक चोर हैं या नहीं ? सुधारक धोखेबाज हैं या हम झूठ

कहते हैं ? स्मृति तो कहैं कि ऐसी स्त्री से विवाह करो जिस का विवाह किसी अन्य पुरुष से न हुआ हो और सुधारक कहैं कि स्मृतियों में विधवा विवाह लिखा है इस झूठ और चाल-बाजी की भी कोई हद है ? श्रोताओ ! यदि तुम को तमासा करना हो तो रास्ता हम बतलाये देते हैं, जब कोई सुधारक यह कहने लगे कि स्मृतियों में विधवा विवाह लिखा है तब तुम पहिले सुधारक का हाथ पकड़ लो, जब वह कहे कि तुमने हाथ क्यों पकड़ा तो तुम कहो कि चोर के साहस नहीं होता, वह घर वालों का शब्द सुनते ही भाग जाता है। तुम चोर हो, हमारी बात सुनते ही भागोगे, इस कारण तुम्हें पकड़ लिया है ? पकड़ कर फिर इन प्रमाणों को आगे रख दो बाद में उस का मजा देखो, कैसी चिकनी चुपड़ी २ मीठी २ बातें कर के भागने का उद्योग करता है।

हम नहीं देखते कि संसार में कोई ऐसा सुधारक हो जिस को स्मृतियों के इन श्लोकों पर कुछ उत्तर सूझता हो, सभी की जबान बन्द हो जाती है क्यों कि ये धर्मशास्त्र के पंडित नहीं हैं चोरी करने और धोखा देनेके पंडित हैं धिक्कार है ऐसे सुधारकों पर जो पापी पेट के निमित्त टका कमाने के लिये शास्त्र की चोरी तथा संसार को धोखा देकर घोर पाप कमा रहे हैं।

मन्त्र प्रवृत्ति।

जब तक सप्तपदी नहीं होती तब तक स्त्री कन्या रहती है,

सप्तपदी होने पर कन्यात्व धर्म निवृत्त हो पत्नीत्व धर्म आ जाता है। वेद के मंत्रोंमें विवाह होना कन्याका ही लिखा है,कन्यात्व निवृत्त होनेके पश्चात् फिर विवाहके लिये वेद मंत्रोंकी प्रवृत्ति ही नहीं होती इसका निर्णय करती हुई स्मृति लिखती है कि—

पाणिग्रहणिका मंत्राः कन्यास्वेव प्रतिष्ठिताः।
नाकन्यासु क्वचिन्नृणां लुप्तधर्मक्रिया हि ताः॥२२६॥

मनु० अ० ८॥

"अर्यमणं नु देवं" इत्यादिक वैवाहिक वेद मंत्रों में कन्या शब्द का श्रवण है इस कारण वेद मंत्र कन्या में ही व्यवस्थित हैं अर्थात् कन्या के ही विवाह को कहते हैं स्पष्ट यों समझिये कि इन मंत्रों से कन्या का ही विवाह होता है। अकन्या के विषय में किसी शास्त्र में भी धार्मिक विवाह के लिये इन मंत्रों की प्रवृत्ति नहीं लिखी स्पष्टार्थ यहहै कि कोई भी ग्रंथ यह नहीं कहता कि विवाह के मन्त्र अकन्या का विवाह करवा देते हैं क्योंकि विवाह के पूर्व दूषित होने पर धर्म क्रिया लुप्त हो जाती है।

जो कन्या विवाह से पहिले दूषित हो जाती है वेद की दृष्टि में वह भी कन्या नहीं रहती (वेद ने अक्षत योनि को ही कन्या माना है) उसके विवाह में भी 'अर्यमणं' इत्यादि वेद मंत्रों की प्रवृत्ति नहीं होती किन्तु जिस कन्या का किसी अन्य पुरुष के साथ विवाह होगया है और सप्तपदी के सप्तम पदमें वर ने "मामनुव्रता भव" कह दिया है उसका विवाह वेद

मंत्रों से कैसा होगा? इसका कन्यात्व धर्म दूर होकर इसमें पत्नीत्व धर्म आगया है। यह कन्या रही नहीं, वेद मंत्र कन्या का विवाह करते हैं इस कारण वेद मत्रों से इसका विवाह न होगा।

विधवा विवाह चलाने वाले अपने कानों का मैल वसोले से निकलवा कर मनु के इस कथन को सुनलें, मनु कह रहे हैं कि वेद मंत्रों में कन्या के विवाह करने की शक्ति है जिसका सप्तपदी से कन्यात्व क्षय हो चुका है उसका विवाह वेद मंत्रों से नहीं हो सकता फिर विधवा का विवाह क्या सुधारक बाइबिल से करवावेंगे? विधवा विवाह के लेखकों को निर्भीकता के साथ स्पष्ट कहना चाहिये कि हम स्वयं ईसाई बन चुके और संसार को ईसाई बनाना चाहते हैं इस कारण हम विधवा विवाह चलाते हैं क्या कोई सुधारक इतनी विद्या रखता है जो मनु के इस श्लोक में कहे हुये कन्या विवाह से भिन्न विधवा के विवाह में वेद मंत्रों की प्रवृत्ति दिखलादे? वेद का गला घोटने वाले धोके बाज सुधारको! तुम कहां तक झूठ बोलोगे, कहां तक पाप करोगे, आखिर तुम्हारी कलई खुल ही जावेगी? याद रक्खो शेर की खाल ओढ़ने से गधा शेर नहीं बनता, धर्म शास्त्र के श्लोक लिख आलू का अर्थ जूता और पूरी का अर्थ तमंचा लिखकर तुम त्रिकाल में पंडित नहीं कहलाओगे?

सुधारको! तुम जागो आज हम तुमको जाल साज और

मूर्ख कहते हैं, आज विधवा विवाह के लेखकों की इज्जत हमने खूब कुचल डाली यदि तुममें सत्यता तथा हिम्मत है एवं स्मृतियां तुम्हारा साथ देती हैं तो तुम उठो, संसार को यह दिखला दो कि विधवा का विवाह भी वेद मंत्रों से होता है। हमें विश्वास है कि विधवा विवाहके लेखक पेट के गुलाम अब घर में ही धसेंगे, अब इन में इतनी हिम्मत नहीं है जो लेखनी उठा सकें, आखिर किसी न किसी दिन जालसाजों की जालसाजी का भंडा फोड़ हो ही जाता है।

श्रोताओं! जब तुम्हारे यहाँ कोई सुधारक आ जावे और वह विधवा विवाह का जिक्र छेड़ दे तब तुम कुछ न बोलो, ऊपर लिखा यह मनु का श्लोक एवं हमारी विवेचना उस के आगे रख दो इस को पढ़ कर उस का चेहरा ऐसा हो जावेगा मानों इस के घर का स्वाहा हो गया और फिर वह तुम्हारे आगे कभी विधवा विवाह का नाम न लेगा। सुधारक कहते थे कि स्मृतियों में विधवा विवाह लिखा है अब यह हुआ क्या? मनु के इस श्लोक को देख कर सुधारक सूर्य निकलने के समय उलूक की भांति घोसलों में धंसते हैं आखिर बुरे काम का बुरा फल।

कन्या दान।

धर्मशास्त्र विवाह का विवेचन करता हुआ लिखता है कि कन्या का दान एक ही वार होता है इस के विषय में मनु जी लिखते हैं कि-

सकृदंशो निपतति सकृत्कन्या प्रदीयते ।
सकृदाह ददानीति त्रीण्येतानि सतां सकृत् ॥४७॥
मनु० अ० । ६ ।

पिता की सम्पत्ति का भाग एक ही बार मिलता है इसी प्रकार कन्याका दानभी एक बार होता है, संकल्प करते समय 'ददाम्यहम्' मैं देता हूँ, यह एक ही बार कहा जाता है। पिता के दायभाग का बंटना, कन्या का दान, संकल्प मैं देता हूँ ये तीन काम श्रेष्ठ पुरुषों के यहां एक ही बार होते हैं।

हिन्दू लोग ज्ञान, वैराग्य, भक्ति, धर्म के गूढ़ अभिप्रायों को प्रचार के लिये हिन्दी कविता में भी प्रकाशित कर दिया करते हैं देखिये मनु के श्लोक के भाव का एक कवि किस प्रकार प्रकाशित करता है।

सिंह गमन, सज्जन वचन, कदली फल इक वार ।
त्रिया तेल, हम्मीर हठ, चढ़ै न दूजी वार ॥

जब धर्मशास्त्र कन्या का दान एक ही बार लिखता है दुबारा दान करने का निषेध करता है तो फिर विधवाविवाह में धर्मशास्त्र विरुद्ध 'विधवा दान' सच तो बतलाओ तुम कुरान से करोगे या बाइबिल से। इस प्रमाण को देख कर जोशी जी जल मरे मन में सोचने लगे कि मनु हमारी तरक्की को न देख सका इस को ध्यानमें रख जोशी जी इस श्लोक को और श्लोक के बनाने वाले मनु को लगे झूठा सिद्ध करने तथा आप संसार को धोखे में डाल फौरन मनु के बाप दादा

बन गये, यह जोशी जी की आस्तिकता गुस्से के मारे ऐसे जोर से टपकी कि जिस जोर से पका हुआ भारी कलमी आम टपक पड़े।

आप लिख बैठे कि "इस पद्य में कन्या का दान एक वार होना कहा गया है। इस का विशेष विवरण तो पाठक दूसरे अध्यायमें देखेंगे, यहाँ हम केवल इतना ही कहते हैं कि शास्त्रमें यदि माता पिता को कन्या दान देने का अधिकार दिया गया है तो प्रतिगृहीता के अपात्र होने पर या न रहने पर उसके लौटने का भी अधिकार दिया गया है"। वेद-धर्मशास्त्र-दर्शन-अंग इतिहास-पुराण किसी ग्रंथमें भी दान दी हुई कन्या का लौटाना नहीं लिखा, हमारा दावा है कि शास्त्र के आधार से दान होने पर कन्या का लौटाना किसी भी हिन्दूशास्त्र में नहीं लिखा, जोशीजी विधवा विवाह के निर्णय में लौटाना लिखते हैं यह सर्वथा झूठ बोल रहे हैं। न ये झूठ के पापसे डरते हैं, न इनको संसारी लज्जा है इसलिये लौटाना लिखा है। हां—योरोपीय सिद्धान्तों को लेकर जोशीजीके कुटुम्ब के लिये दो चार वर्ष से कोई नवीन स्मृति बनी होगी उसमें कन्या का दान करके फिर लौटाना लिखा होगा; उसी स्मृतिके अनुसार जोशीजी के कुटुम्बी कन्या का दान देकर वर्ष दो वर्ष के बाद लौटा लेते होंगे। इसीके आधार पर जोशीजी ने लिखा होगा कि 'लौटाने का भी तो अधिकार है'। यदि ऐसा नहीं, नवीन धर्मशास्त्र तैयार नहीं हुआ तब तो हम यही कहेंगे कि जोशीजी का कन्या

का लौटाना यह कथन सर्वथा झूठ है और इस झूठ लिखने का प्रयोजन मनुष्यों को धोखा देना है धिक्कार है उन सुधारकों को जो झूठे एवं जाल बनाने वालों को धर्म निर्णायक मानते हैं।

जोशी जी ! यह कन्या संकल्प द्वारा दान की गई है, जिसका दान संकल्प से हुआ है वह संकल्प द्वारा ही लौटेगी, ज़रा लौटनेका संकल्प तो बना दीजिये ? कैसे बनेगा "वसिष्ठगोत्रोत्पन्नोहं बद्रीदत्तशर्माहमिमां सालंकारां सवस्त्रां स्वकीयां पत्नीं भारद्वाजगोत्राय त्रिप्रवराय श्रीकृष्णाय कन्यात्वेन तुभ्यमहं संप्रददे" इसी प्रकार का संकल्प बनाओगे ? धर्मशास्त्रों ने कन्यादान लिखा तो जोशी जी ने पत्नीदान लिखा। यह दान आपको बाइबिल में मिला या कुरान में ? सच तो बतलाइये कहां मिला ? आप तो हमारे पुराने मित्र हैं, क्या हमसे भी कपट रक्खोगे, हमको भी इस दान का पता न बतलाओगे ?

जोशीजी ! दान देकर कन्या का वापिस होना तो कभी सिद्ध ही नहीं होसकता, सप्तपदी के सप्तमपद पर धर्मशास्त्र कहता है कि "स्वगोत्राद् भ्रश्यते नारी" कन्या सप्तम पद पर पिता के गोत्र को छोड़ कर पति का गोत्र स्वीकार कर लेती है अब मरणपर्यंत इसका यही गोत्र रहेगा। स्त्री पति के गोत्र को छोड़ देती है इसमें धर्मशास्त्र का प्रमाण दीजिये ? (२) "येनाग्निरस्याः" इस मंत्र में वर यह कहता है कि जैसे अग्नि ने पृथ्वी का हस्त ग्रहण किया है, वैसे ही मैं तेरा हस्त ग्रहण करता हूं। क्या अग्नि से पृथ्वी को वापिस कर लिया ? यदि

नहीं किया तो पृथ्वी की भांति जिस स्त्रीका हस्तग्रहण किया गया है वह वापिस कैसे होगी ? (३) "गृह्णामिते" इस मंत्र में स्पष्ट लिखा है कि भग, अर्यमा, सविता, पुरंध्रिइतने देवताओं ने कन्या विवाह के समय वर को दी है। ये देवता वरसे छीन कर फिर स्त्री को अपने अधिकार में कर लेते हैं इसका प्रमाण दीजिये (४) "सोमः प्रथमो विविदे०" इस वेदमंत्र में स्पष्ट बतलाया है कि कन्या एक ही मनुष्यज की पत्नी हो सकती है और अग्निदेव ने उसको दिया है क्या आप के पास कोई ऐसा प्रमाण है जिससे मनुष्य को दी हुई कन्या अग्नि वापिस करले ? (५) "अर्यमणम्०" इस मंत्र में वेद कहता है कि कन्ये ! जिस वर को तू दी गई है उसको और उसके कुटुम्ब तथा गोत्र को तू कभी न छोड़िये वेद का हुक्म है कि कन्या वर एवं वर के गोत्र तथा वरके कुटुम्ब को कभी नहीं छोड़ सकती। कन्या वापिस हो जाती है इसकी पुष्टि में जोशी जी तुम्हारे पास कोई प्रमाण है ? नहीं प्रमाण है तो वेद विरुद्ध वापिसी तुम्हारे लिखने से वही मानेगा जो आपकी भांति ईसाई धर्मके चरण चुम्बन को स्वीकार कर चुका है।

कहीं आप अपने को ईश्वर का दादा तो नहीं समझ बैठे, आप अपने मन में समझते होंगे कि दान दी हुई कन्या नहीं फिर सकती यह वेद में ईश्वर ने लिखा है और हम कहते हैं कि फिर जाती है ऐसी दशामें पबलिक

ईश्वर को सड़ियल दिमाग, मूर्ख छोटा समझ उनके कथन को छोड़ देगी एवं मुझे ईश्वर का दादा ईश्वर से भी विद्वान् अजरामर समझ कर पबलिक हमारे कथन को सत्य मानेगी यदि आपने अपने मन में ऐसा नहीं समझा तो फिर हम दावे के साथ कहते हैं कि कन्या दान होने के अनन्तर एक बद्रीदत्त तो क्या एक तो आप और नौ सौ निन्यानवे बद्रीदत्त और ये एक हजार बद्रीदत्त सोलह हजार जन्म धारण करके कन्या का वापिस होना सिद्ध नहीं कर सकते।

धोखा

जोशी जी धोखा देने में बड़े निपुण हैं। आप कन्या दान द्वारा दी हुई कन्या के वापिस होने में प्रमाण देतेहैं।

"सकृत्प्रदीयते कन्या हरंस्तां चौरदण्डभाक्।
दत्तामपि हरेत्पूर्वात् श्रेयांश्चेद्वर आव्रजेत् ॥६५॥

याज्ञवल्क्य० अ० १

यद्यपि कन्या एकही बार दी जाती है उसको हरने वाला चोरी का दण्ड भागी होता है तथापि यदि श्रेष्ठ वर आ जावे तो दी हुई कन्या को भी पहिले वर से छीन लेवे इस पद्य में याज्ञवल्क्य ने कन्यादान का एक बार होना मान कर भी यदि पुनः श्रेष्ठ वर मिले तो दी हुई कन्या को लौटा लेने की आज्ञा दी है ऐसी कन्या का पुनः दान करना वास्तव में सकृद्दान ही है क्योंकि ऐसी दशा में यह समझा जायगा कि पहिला दान दान ही न था"।

यहां पर जोशी जी ने समस्त संसार को तो मूर्ख समझा और आप पंडित बन बैठे ऐसी चालाकी की मानो कोई पकड़ ही न सकेगा। चालाकी के साथ जोशी जी मनमाना अर्थ करते हैं पहिले श्लोक का असली अर्थ देखिये।

कन्या एक बार दी जाती है, किसी के साथ विधिवत् विवाही हुई कन्या को यदि कोई अन्य को देने के लिये किसी प्रकार ले आवे तो उसको चोर के तुल्य राजदण्ड होना चाहिये। यदि वाणी मात्र से कन्या का दान किया हो परन्तु सप्तपदी पर्यंत विवाह न हुआ हो तो पहिले वर से लेकर अन्य आये हुये किसी श्रेष्ठ वर को दे देवे अर्थात् यदि उसी समय कोई श्रेष्ठवर मिल जावे तो ऐसा करे।

याज्ञवल्क्य स्मृति ने लिखा था कि यदि कन्या वाग्दत्ता हो और श्रेष्ठ वर मिल जावे तो जिस वरका वरण हुआ है उसको छोड़कर श्रेष्ठ को विवाह दी जावे। जोशी जी ने याज्ञवल्क्य के कथन वाग्दत्ता को तो छोड़ दिया और अपनी तरफ से कन्यादान होने पर कन्या का विवाह दूसरे पति से लिख दिया यह जोशीजी की खुल्लम खुल्ला चालाकी है तभी तो हम कहते हैं कि जोशी जी योरोपीय सभ्यता में सनकर घोर नास्तिक बन गये हैं। याज्ञवल्क्य के श्लोक के अर्थ में जहां पर वाग्दत्ता का श्रेष्ठ को दान लिखा था वहां पर विवाही हुई कन्या का श्रेष्ठ को देना यह बनावटी अर्थ करना पहिली चालाकी है। अब दूसरी चालाकी सुनिये। याज्ञवल्क्य ने "अविप्लुत ब्रह्मचर्यो" इस ५२ के श्लोक में

विवाहित कन्या से विवाह करने का निषेध किया था उस को छिपा लिया यह दूसरी चालाकी है।

यह भी खूब रहा। एक कन्या जमींदार को विवाही दूसरे दिन तहसीलदार आ गया तो अब जोशी जी उस कन्या को जमींदार से छीन कर दूसरे दिन तहसीलदार से विवाह करेंगे। शहर में नित्य श्रेष्ठ मनुष्य मिलते रहेंगे, जोशी जी की आज्ञा से स्त्रियों के नित्य ही विवाह होते रहेंगे संसार के घरों में रोज तो बरातें रहेंगी फिर ये कब कमा कर खावेंगे वाह जोशी जी ? स्त्रियों के लिये नित्य नये पति ? आपने तो यहां पर सभ्य स्त्रियां स रण्डियों की नाक कटवा डाली !

सत्यता किसी के छिपाये नहीं छिपती। याज्ञवल्क्य के श्लोक का जैसा हम अर्थ करते हैं कि सगाई होने पर श्रेष्ठ वर मिल जावे तो सगाई वाले से सगाई छुड़ाकर श्रेष्ठ को कन्या विवाह दे यह चाल तो संसार में है किन्तु जोशी जी ने जो याज्ञवल्क्य के श्लोक का यूरोपीय अर्थ निकाला है कि श्रेष्ठ वर आने पर विवाहित कन्या श्रेष्ठ से विवाह दो यह चाल तो ससार में है नहीं, जोशी जी इसका आरम्भ आप अपने यहां से कीजिये क्योंकि आप की दृष्टि में यह धर्म है, इस को तुम धर्म तो मानोगे करोगे नहीं ऐसा न करने पर तुम अपनी ही व्यवस्था से अधार्मिक पापी बन जाओगे ?

कौन कहता है कि "सकृत्प्रदीयते" इस याज्ञवल्क्यके

श्लोक में विवाहित कन्या का विवाह बतलाया है। हम तो संसार में एक भी सुधारक नहीं पाते जो पंडितों के सामने इस अर्थ को सत्य सिद्ध करदे। हम ऐसा भी सुधारक संसार में नहीं देखते जो श्रेष्ठ मनुष्यों के आने पर अपनी कन्या को जामातृ से छीन कर श्रेष्ठ को दे देता हो, जोशी जी! आपके कथन को तो सुधारक भी नहीं मानते? तुम तो सुधारकों की ही दृष्टि में झूठे हो! फिर हम अधिक क्या कहें। हाँ इतना अवश्य कहेंगे कि यदि आपने अपने जीवन का उद्देश्य झूठ बोलना और उससे टके कमाना ही बनाया है तो फिर आप लोग गवाही देने का पेशा स्वीकार करलें। इस पेशे में पेट भर कर झूठ बोलने का अवसर भी मिलेगा और टका भी मिल जावेगा।

जोशी जी की तो कलई खुल गई, अब क्या कोई दूसरा सुधारक इतनी हिम्मत रखता है जो "सकृदंशो निपतति" मनु के इस श्लोक को मिथ्या सिद्ध कर दे! एक न मिलेगा श्लोक को देखते ही सुधारक ऐसे भागेंगे जैसे वक्सीनेटर को देख कर लड़के और धुएं को देख कर मच्छर भागते हैं। श्रोत्रिय वर्ग! "सकृदंशो निपतति" इस श्लोक में मनु ने कन्या का विवाह एक ही वार बतलाया है तथा सुधारकों के पास इसका कुछ उत्तर भी नहीं फिर सुधारक किस हौसले पर कहते हैं कि धर्मशास्त्र में विधवा विवाह लिखा है? धर्मशास्त्र तो कन्या के दूसरे विवाह का ही खण्डन कर

रहा है। तुम लोग "सकृदंशो निपतति" मनुके इस श्लोक और हमारे विवेचन को विधवा विवाह को धर्म कहने वाले किसी सुधारक के आगे रक्खो, पढ़ते ही उसका चेहरा काला पड़ जावेगा एवं जबान बन्द हो जायगी। मजा करने के लिये कभी कभी ऐसा कर लिया करो।

स्त्री धर्म।

पति मरने के पश्चात् स्त्री का क्या धर्म है इस का निर्णय करती हुई पाराशर स्मृति लिखती है कि-

मृते भर्तरि या नारी ब्रह्मचर्यव्रते स्थिता।
सा मृता लभतेस्वर्गं यथाते ब्रह्मचारिणः॥३३॥
तिस्रःकोट्योर्द्ध कोटीच यानि लोमानि मानवे।
तावत्कालं वसेत्स्वर्गं भर्तारं याऽनुगच्छति॥३४
व्यालग्राही यथा व्यालं बलादुद्धरते विलात्।
एवं स्त्री पतिमुद्धृत्य तेनैव सह मोदते॥ ३५॥

पराशर० अ० ।४।

पति के मरे पीछे जो स्त्री ब्रह्मचर्य व्रत में स्थित रहती है वह मर कर स्वर्ग में इस प्रकार जाती है जैसे ब्रह्मचारी गये ॥३३॥ जो स्त्री पति के संग अनुगमन (सती होना) करती है वह साढ़े तीन करोड़ मनुष्य के शरीर में जो लोम हैं उतने ही वर्ष तक स्वर्ग में वसती है ॥ ३४ ॥ साँप को पकड़ने वाला जैसे विल में से सांप को निकाल लेता है ऐसे ही वह स्त्री भी

नरक से अपने पति का उद्धार कर के उस पति के संग ही स्वर्ग में आनन्द भोगती है ॥ ३५ ॥

प्रेमी श्रोताओ! यह क्या गजब होगया, सुधारक तो कहते थे कि स्मृतियों में विधवा विवाह लिखा है इस के विपरीत पाराशर स्मृति कह उठी कि विधवा स्त्रियोंके सती होना और ब्रह्मचर्य से रहना ये दो ही धर्म हैं, क्या सुधारकों ने स्मृतियों को देखा नहीं? या तो दिन में देखा है इस से इन को दीख नहीं पड़ा या योरुप का धुंधला चश्मा लगा कर देखा है। क्या ये नहीं जानते थे कि योरोपीय चश्मा से धार्मिक लेख दीखता ही नहीं, केवल पाप ही पाप दीखता है। जब स्मृति डंके की चोट कह रही है कि द्विजाति विधवा स्त्रियों के सती होना तथा ब्रह्मचर्य से रहना ये दो ही धर्म हैं एवं इन धर्मों के विपरीत सुधारक कहते हैं कि स्मृतियों में विधवा विवाह लिखा है ऐसी दशा में हम यह मान लें कि सुधारकों ने धर्म शास्त्रोंको बिल्कुल नहीं देखा और ये लोग अपने गुरु समुदाय ईसाई पादरियों की आज्ञा में बंध कर धर्मशास्त्रों में विधवा विवाह बतलाते हैं तो हमारा यह कहना क्या सर्वांश में सत्य न होगा?

आज पाराशर स्मृति ने विधवा विवाह विधायक पुस्तकों के लेखकों का भण्डा फोड़ कर दिया कि ये झूठे और इन की किताबें झूठीं; लेखक धोखेबाज, इन की किताबें धोखा देने वालीं क्या इस भण्डा फोड़ पर कोई सुधारक चूं कर

सकता है? झूठे और जालसाज की औकात कितनी वह तो जरासी जिरह में वकील के आगे रफू चक्कर हो जाता है फिर झूठे तथा जालसाज सुधारक धर्मशास्त्र वेत्ताओंके आगे कितने मिनट ठहरेंगे?

सुधारकों के द्वारा जो आज झूठ और दगाबाजी के अनर्थ हो रहे हैं इस का कारण तो दूसरा ही है, अंग्रेजी पढ़े लिखे मनुष्यों को नौकरियां तो मिलती नहीं फिर ये खावें क्या? जब कोई रोजगार नहीं मिलता तब पापी पेट के भरने के लिये यदि सुधारक झूठ बोलें, संसार को धोखा दें, झूठी कितावें लिख पेट को भर लें तो इस में बुराई क्या हुई? श्रुति-स्मृति विधायक धर्म का नाश होता है तो हो जाय, पेट को रोटियाँ तो मिलती हैं? मेरे प्यारे सुधारको! यदि तुम मिट्टी खोद, गिट्टी तोड़, जूता गांठ पेट भर लो तो इस से हजार जगह अच्छा। पाप तो शिर पर नहीं लदेगा? उपाध्याय जी और जोशी जी प्रभृति जितने भी विधवा विवाह विधायक ग्रंथों के लेखक हैं प्रायः सभी अंग्रेजी पढ़े हैं, अंग्रेजी पढ़े हुये संस्कृतके विद्वानोंको असत्यवादी सिद्ध करनेचले यही उन की अनधिकार चेष्टा है। कभी गीदड़ भी शेर को पछाड़ सकता है। शेरके आगे गीदड़की कोई हकीकत नहीं? तो संस्कृत के विद्वानोंके आगे अंग्रेजी पठितोंकी भी कोई हकीकत नहीं। दफ्तर के गुलाम बनाने के लिये जिस शिक्षाका सूत्रपात हुआ है वह शिक्षा क्या खाक संस्कृतका मुकाबला करेगी? है कोई दुनियाँ

में ऐसा सुधारक जो यह कहदे कि पाराशर स्मृति ने विधवा स्त्रियोंके सती होना या ब्रह्मचर्य से रहना ये दो धर्म नहीं बतलाये ? ऐसा सुधारक अट्टा अटारी मकान, मंहल, पाखाने नारदाने आदि खोजने पर भी नहीं मिलेगा। यदि कोई हो तो नथ पहिन कर घर में न बैठे, लेखनी उठा कर मैदान में कूदे किन्तु यह हिम्मत गुलाम बना देने वाली शिक्षा के शिक्षितों में कहां ?

श्रोत्रिय वर्ग ! सुधारकों की इस अकरणीय घटना को देख कर हमको लज्जा आती है कि हाय हमारा जन्म उसी हिन्दू जाति में हुआ जिस जाति में झूठे धोखेबाज हजारों सुधारक भरे हैं किन्तु इन विधवा विवाह विधायक ग्रंथों के लेखकों ने बेशर्मी का ऐसा जामा पहिना कि इनके पड़ोस में भी लज्जा जाकर नहीं फटकती। श्रोताओ ! तुम विधवा विवाह का धर्म बतलाने वाले सुधारकों से पूछो कि चोर देवताओ ! तुमने पाराशर स्मृति के तीन श्लोक क्यों चुराये ? तीनों श्लोक और हमारा विवेचन सुना दो सुनते ही सुधारक देव की नानी मर जावेगी, नीचे का श्वास नीचे और ऊपर का ऊपर रह कर बोल बन्द, यह दशा होगी मानो डाक्टर ने क्लोरोफार्म सुंघा दिया है, इसी हिम्मत पर सुधारक विधवा विवाह चलावेंगे ? शाबास बहादुरो, चींटी मरे नहीं और शेर मारने का इरादा ?

पुष्टि।

सती होना और ब्रह्मचर्य से रहना विधवा स्त्रियों के ये

दो ही धर्म पाराशर स्मृति ने बतलाये हैं, केवल पाराशर स्मृति ही विधवा स्त्रियों के दो धर्म नहीं बतलाती वरन् इसकी पुष्टि में अन्य शास्त्रों का सिंहगर्जन भी प्रत्यक्ष हो रहा है सुनिये।

मृते भर्तरि या नारी समारोहेद्धुताशनम् ।
सा भवेत्तु शुभाचारा स्वर्गे लोके महीयते ॥१७॥
व्यालग्राही यथा व्यालं बलादुद्धरते बिलात् ।
तथा सा पतिमुद्धृत्य तेनैव सह मोदते ॥ १८ ॥

दक्ष० अ० । ४ ।

पति के मरने पर जो स्त्री अग्नि में भस्म हुई सती होती है वह शुभ आचरण वाली होती और स्वर्ग में पूजा को प्राप्त होती है । १७ । जैसे सांपों को पकड़ने वाला बिल में से सांप को बल से निकाल लेता है वैसे ही वह स्त्री भी अधोगति को प्राप्त हुये अपने पति का उद्धार कर के उसी पति के संग स्वर्ग में आनन्द भोगती है । १८ ।

साथ ही साथ व्यास स्मृति की भी आज्ञा सुनिये—

पतिव्रता निराहारा शोष्यते प्रोषिते पतौ ।
मृतं भर्तारमादाय ब्राह्मणी वन्हिमाविशेत् ॥५२
जीवन्ती चेत्त्यक्तकेशा तपसा शोधयेद्वपुः ।
सर्वावस्थासु नारीणां न युक्तं स्यादरक्षणम् ॥ ५३

व्यास० अ० । २ ।

पतिव्रता स्त्री पतिमें व्रत रक्खे, अन्य पुरुष का मन से भी ध्यान न करे, अति सूक्ष्म आहार कर देह को कृश निर्बल कर दे ऐसी ब्राह्मणी आदि पतिव्रता कहलाती हैं वह मरे हुये पति को लेकर अग्नि में प्रवेश करे (सती हो जाय)। ५२। यदि जीवित रहे तो केशों को मुड़ा डाले, तपसे शरीर को शुद्ध करे, स्त्रियों की सब अवस्थाओं में (बालक से वृद्ध तक) पुरुषों को रक्षा करनी उचित है। ५३।

दक्ष स्मृति ने पति मरने पर सती होना साफ २ लिखा है और व्यास स्मृति ने सती होना या ब्रह्मचर्य से रहना स्पष्ट लिख दिया क्या अब भी कोई सुधारक यह कहने का साहस कर सकता है कि धर्मशास्त्रों में विधवा का विवाह कहा है? सुधारक इस लिये नहीं कहते कि धर्मशास्त्रों में विधवा विवाह लिखा है किन्तु धर्मशास्त्र में विधवा विवाह है यह कह कर संसारको धोखा दे रहे हैं, अंग्रेजी शिक्षा तथा अंग्रेजी शिक्षतों की संगति से सुधारकों ने झूठ बोलना, धोखा देना, बेईमानी करना, व्यभिचार और मदिरापान ये ही तो गुण सीखे हैं, सुधारकों के ऊपर अंग्रेजी शिक्षा का भूत सवार हो रहा है वह गालों पर थप्पड़ लगा लगा कर झूठ बुलवाता है एवं दगा करने का आर्डर दे रहा है, यदि ये होश में होते तो इतना पाप कभी न करते? स्मृतियां तो कहती हैं कि विधवा स्त्रियों के सती होना या ब्रह्मचर्य से रहना ये दो ही धर्म हैं, सुधारक कहते हैं कि स्मृतियों में विधवाविवाह लिखा है क्या

यह पाप नहीं है? सुधारक पाप की गठड़ी शिर पर क्यों लादते हैं, क्या राजी खुशी लादते हैं, वे तो चाहते हैं कि हम पाप की गठड़ी शिर पर न धरें किन्तु अंग्रेजी शिक्षा का भूत माने तब न? वह भूत कहता जाता है कि तुमने अंग्रेजी क्यों पढ़ी, अंग्रेजी पढ़े हुये लोगों की संगति क्यों की, अब करो पाप, बोलो झूठ, डालो संसार को धोखेमें, यदि तुम ऐसा नहीं करोगे तो मैं मारे थप्पड़ोंके तुम्हारे गाल लाल कर दूंगा। सुधारकों से जो पाप हो रहे हैं वे सब अंग्रेजी शिक्षा करवा रही है। सुधारको! इस संसार में तुम्हारा जन्म संसार को दुःखी करनेके लिये ही हुआ है, तुमने संसार को धोखा देकर और झूठ बोल बन्दरकी भांति नचा रक्खा है। ऐ धोखेबाज सुधारको! तुम सब मिल कर यह सिद्ध कर सकते हो कि व्यास स्मृति ने विधवा स्त्रियों के लिये सती होना और ब्रह्मचर्य से रहना ये दो धर्म नहीं बतलाये? क्या तुम इसके उत्तर में कुछ चीं चपड़ कर सकते हो? यदि तुम पाराशर, दक्ष, व्यास की स्मृतियों को छिपा कर स्मृतियों से विधवा का विवाह सिद्धकरते हो तो क्या तुम धार्मिक मनुष्यों के साथ दगा नहीं कर रहे? सुधारकों को हजार बार समझाओ; हजार गालियां दो; ये किसी की एक बात न सुनेंगे, यही कहते जायंगे कि धर्मशास्त्रोंमें विधवा विवाह है। शोक है उन मनुष्यों की बुद्धियों पर जो झूठे मूर्ख धोखे बाज सुधारकों के कहने पर कानों को बहरे बना किसीकी

आवाज न सुन दोनों आंखे बन्द कर कोई शास्त्र न देख धर्मशास्त्रों में विधवाविवाह मान बैठते हैं। ईश्वर सुधारक और उनके पिठलगुओं को बुद्धि दे जिस बुद्धि से वे हिन्दुओं को ईसाई बनानेके काम को बन्द करें।

रोक।

धर्मशास्त्रों ने सती होने और ब्रह्मचर्य से रहने के गुणों को दिखला कर एवं दूसरे पति के स्वीकार करने से स्त्री की दुर्गति होती है इसको दिखलाते हुये विधवा विवाह को एक दम रोक दिया। सुनिये प्रमाण

मृते जीवति वा पत्यौ यानान्यमुपगच्छति।
सेह कीर्तिमवाप्नोति मोदते चोमया सह ॥७५

याज्ञवल्क्य० अ० १

पतिके मर जाने या जीवित रहने पर जो स्त्री अन्य किसी पुरुष को मन वाणी और शरीर से कभी प्राप्त नहीं होती वह इस जन्ममें अच्छी कीर्ति प्रतिष्ठाको प्राप्तहो जन्मान्तरमें देवता रूप हुए अपने पतिके साथ देवी होकर आनंन्दित होती है।

सुधारकों को यह श्लोक याज्ञवल्क्य स्मृति में दीखता ही नहीं, नहीं मालूम इनकी आखें कैसी हैं, इनको केवल ऐसे ही श्लोक तो दीखतेहैं जिनके अर्थ बदल कर ये विधवा विवाह सिद्ध कर दें किन्तु जो श्लोक विधवा विवाह का चकनाचूर करते हैं या विधवा स्त्री को सती और ब्रह्मचर्य रखने का उपदेश करते हैं वे इनको विल्कुल नहीं दीखते ? ईश्वर ने

अच्छे स्वार्थ साधन टका कमाने वाले नेत्र दिये हैं । आंख होने पर भी न देखना इसी का नाम मतलबी है।

इन स्वार्थियों के बनावटी जाल को छिन्न भिन्न कर देने के लिये केवल मनु की लेखनी काफी है। ये तो कहते हैं कि धर्मशास्त्र में विधवाविवाह है किन्तु इनके कथन के विरुद्ध मनुजी लिखते हैं कि—

पाणिग्राहस्य साध्वी स्त्री जीवतो वा मृतस्य वा ।
पतिलोकमभीप्सन्ति नाचरेत्किंचिदप्रियम् ॥१५६

श्रेष्ठ स्त्री जो पति लोक की इच्छा करती है वह पाणिग्रहण करने वाले जीवित पति वा मृतपति का अप्रिय कार्य न करे।

कामं तु क्षपयेद्देहं पुष्पमूलफलैः शुभैः ।
न तु नामापि गृह्णीयात्पत्यौ प्रेते परस्य तु ॥ १५७

पवित्र मूल और फलों को खाकर अपने शरीर को सुखा भले ही दे किन्तु पतिके मर जाने पर द्वितीय पतिका नाम भी न ले।

आसीता मरणात्क्षान्ता नियता ब्रह्मचारिणी ।
योधर्म एकपत्नीनां काङ्क्षन्ती तमनुत्तमम्॥१५८

क्षमावाली होकर नियम में बंध मरणपर्यन्त निरन्तर ब्रह्मचर्यको धारण करके जो एकपति वाली स्त्री का सर्वोत्तम धर्म है उसका सेवन करे।

अनेकानि सहस्राणि कुमारब्रह्मचारिणाम् ।
दिवं गतानि विप्राणामकृत्वा कुलसंततिम् ॥१५८
मृते भर्तरि साध्वी स्त्री ब्रह्मचर्ये व्यवस्थिता ।
स्वर्गं गच्छत्यपुत्रापि यथा ते ब्रह्मचारिणः ॥ १६०

ब्राह्मणोंके सहस्रों कुमार ब्रह्मचारी सन्तान उत्पन्न करके अपने ब्रह्मचर्यके बलसे स्वर्गको चले गये श्रेष्ठ स्त्री पतिके मर जाने पर ब्रह्मचर्य को धारण करे वह भी सन्तानोत्पत्ति के बिना किये अपने ब्रह्मचर्य के प्रभाव से वैसे ही उत्तम गति को चली जावेगी जैसे वे ब्राह्मण कुमार गये हैं।

अपत्यलोभाद्या तु स्त्री भर्तारमतिवर्त्तते ।
सेह निन्दामवाप्नोति पतिलोकाच्च हीयते ॥१६१

संतान के लोभ से जो स्त्री व्यभिचार करती है उसकी इस लोक में निन्दा होती है और पतिलोक हाथ से जाता रहता है।

नान्योत्पन्ना प्रजास्तीह न चाप्यन्य परिग्रहे ।
न द्वितीयेश्च साध्वीनां क्वचिद्भर्तोपदिश्यते ॥१६२

पति के अतिरिक्त अन्य पुरुष से उत्पन्न हुई प्रजा उस स्त्री की प्रजा ही नहीं और वह प्रजा न उस पुरुष की होती है जिसने अन्य की स्त्री में उत्पन्न की है तथा श्रेष्ठ स्त्रियों को कहीं पर भी द्वितीय पति का विधान नहीं किया गया।

पतिं हित्वापकृष्टं स्वमुत्कृष्टं या निषेवते ।
निन्द्यैव सा भवेल्लोके परपूर्वेति चोच्यते ॥ १६३ ॥

क्षत्रियादि हीन जाति के पति की स्त्री भी अपनी छोटी जाति के पति को छोड़ कर उत्तम जाति के ब्राह्मण को जो पति बनाती है उसकी इस संसार में निन्दा होती है संसार यही कहता है कि पहिले इनका पति छोटी जाति का था अब बड़ी जाति का है तो भी यह निन्दनीय है।

व्यभिचारात्तु भर्तुः स्त्री लोके प्राप्नोति निन्द्यताम्।
शृगालयोनिं प्राप्नोति पापरोगैश्च पीड्यते ॥१६४॥

पाणिग्रहण से अन्य पुरुष के साथ समागम व्यभिचार करने से स्त्री निन्दा को प्राप्त होती है और मरने के पश्चात् वह शृगाल योनि में जाती है तथा उस पाप से उत्पन्न हुये रोगों से पीड़ित होती है।

पतिं या नाभिचरति मनोवाग्देहसंयता ।
सा भर्तृलोकमाप्नोति सद्भिःसाध्वीति चोच्यते ॥१६५

जो स्त्री मन, वाणी, शरीर इन तीनोंसे कभीभी व्यभिचार नहीं करती वह स्त्री पति लोक को प्राप्त होती है और श्रेष्ठ मनुष्य उसको श्रेष्ठ स्त्री कहते हैं।

अनेन नारीवृत्तेन मनोवाग्देहसंयता ।
इहाग्र्यां कीर्तिमाप्नोति पतिलोकं परत्र च ॥१६६

मनु० अ० ५

'यह जो पूर्व में नारी वृत्त कहा है मन वाणी शरीर से इस वृत्त का आचरण करती हुई यहां पर उत्तम कीर्ति को प्राप्त होती है और मरने के पश्चात् पति लोक में कीर्ति पाती है।

'पाणिग्राहस्य' इस श्लोक में यह कहा कि स्त्री जीवित या मृतक पति का अप्रिय न करे। जीवित पति का प्रिय सेवा सुश्रुषा से होता है और मृतक पति का प्रिय ब्रह्मचर्य रखने से होता है। प्रथम तो 'अर्यमणम्, इस मंत्र में यह कहा है कि कभी भी पति के कुटम्ब और गोत्र का त्याग न करे; इन के त्याग न करने से लोकान्तर में गये हुये मृतक पति को प्रसन्नता होती है (२) नारी ब्रह्मचर्य के बल से निकृष्ट गति में गये हुये पति को बल से खैंच कर उत्तम लोक को ले जाती है ये दो ही मृतक पति के प्रसन्न करने के कारण हैं। इनको स्त्री न छोड़े क्यों कि इनसे मृतक पति का प्रिय होगा यह मनुके श्लोक का अभिप्राय है। विधवा विवाह करने पर पतिके प्रेम के दोनों कारण नष्ट हो जाते हैं अतएव इस श्लोक में विधवा विवाह का निषेध है।

इसीके भाव को स्पष्ट करने के लिये मनु जी ने स्पष्ट लिखा कि "कामं तु क्षपयेद्देहम्" इस श्लोक में मनु जी ने बतलाया कि स्त्री भोजन की तंगी सहती हुई पुष्प,मूल, फल खा गुजारा करे, और इन पुष्पादिकों से शरीर को सुखा दे किन्तु पतिके मरने पर दूसरे पुरुष का नाम न ले। पहिले श्लोक में कहे हुये पत्यन्तर ग्रहण का निषेध इस श्लोक में साफ साफ दिखला दिया।

मनु ने "आसीता" इस श्लोक में यह दिखाया कि विधवा स्त्री सहन शील बन कर निरन्तर ब्रह्मचारिणी रहे और जब तक वह जीवे तब तक उम्र भर में एक पति स्वीकार करने का जो सर्वोत्तम धर्म है उसीकी इच्छा रक्खे। इस धर्म की पालना तभी हो सकती जब विधवा विवाह कभी मन में भी न आवे।

मनु जी "अनेकानि" इस श्लोकमें "अपुत्रस्य गतिर्नास्ति" अपुत्र की गति नहीं होती इस आने वाली शंका का निरशन करते हुये बतलाते हैं कि यह वाक्य उनके लिये है जिन्हों ने ब्रह्मचर्य का क्षय कर दिया। हमने अनेक सहस्र ब्राह्मणों के बालक ऐसे देखे हैं कि जिन्हों ने कुल वृद्धि के लिये सन्तान पैदा नहीं की और वे अपने ब्रह्मचर्य के बल से स्वर्ग को चले गये इसी प्रकार पति के मरने पर श्रेष्ठ स्त्री ब्रह्मचर्य में स्थित रहे, वह ब्रह्मचर्य के प्रभाव से इन ब्रह्मचारियों की भांति उत्तम गति को पहुँचेगी अतएव पत्यन्तर ग्रहण विधवा विवाह न करे, समस्त आयु में एक ही पति से संसर्ग करना यह जो स्त्रियोंके लिये सर्वोत्तम धर्म है इसीका पालन करे।

फिर "अपत्यलोभात्" इस श्लोक में मनु जी कहते हैं कि संतान के लोभ से जो स्त्री 'अर्यमणम्, इत्यादि वेद मंत्र में कही हुई पति की आज्ञा का उल्लंघन करेगी, पत्यन्तर ग्रहण कर लेगी वह इस लोक में निन्दा पावेगी और पतिलोक से वंचित रह जावेगी।

आगे "नान्योत्पन्ना" इस श्लोकमें मनु जी दिखलाते हैं कि पत्यन्तर से उत्पन्न हुई संतान स्त्री की संतान ही नहीं और न उस पुरुष की ही संतान है जिससे उत्पन्न हुई है यह तो वर्णसंकर चट्टे खाते की औलाद है। प्रजा के लोभ से दूसरा विवाह न करे क्यों कि श्रेष्ठ स्त्रियों को पत्यन्तर ग्रहण करने की आज्ञा ही नहीं है। आज्ञा नहीं है, यह भाव वेद का है उस भाव को आगे रख मनु जी स्त्रियों को विधवा विवाह से रोकते हैं।

मनु जी "पतिं हित्वा" इस श्लोक में दिखलाते हैं कि निकृष्ट जातिके पति को त्याग कर जो स्त्री उच्च जातिका पति स्वीकार कर लेती है वह भी निन्दनीया है। यहां पर जीवित और मृतक दोनों पति से अभिप्राय है। मृतक पति कहीं चला नहीं गया; जब यह स्त्री मरेगी तो पतिलोकको जायगी और वहां पर भी इसका वही पति होगा। यदि यह पत्यन्तर ग्रहण कर लेगी तो फिर पतिलोकको न जाकर नीच गतिको जायगी ऐसी दशामें असली पति छूट जाता है। इस स्त्री ने दूसरे पति के ग्रहण से इस पतिको छोड़ा है शास्त्र का यह अभिप्राय है; उच्च जातिके लोभसे भी जीवित या मृतक पति को न छोड़े।

अब कौन कह सकता है कि स्मृतियों में विधवा विवाह का खण्डन नहीं है। मनु ने तो यहां पर घोर खण्डन लिख दिया, जो इसको छिपा कर यह कहेगा कि स्मृतियोंमें विधवा विवाह लिखा है वह अपनी बेइज्जती करवाने से भिन्न दूसरा

कोई फल नहीं निकाल सकता किन्तु जो अंग्रेजों के गुलाम बन गये हैं, जिनको हिन्दुओं के शास्त्र सांप की भांति काट खाते हैं, जिनको बाइबिल से उत्कट प्रीति होगई है, जिनके शिर पर अंग्रेजी आचरण का भूत चढ़ बैठा, जिन्होंने अंग्रेजों की तरक्की पर लट्टू होकर अपनी बुद्धि का दिवाला निकाल दिया वे लोग मनु के इन श्लोकों को छिपा कर 'धर्मशास्त्र में विधवाविवाह लिखा है' पागलों की भांति बकते फिरते हैं।

शौक बुरा होताहै, अफीमचियोंको हजार बार समझाइये, उनके घर की तंगी दिखलाइये. उनकी दुर्दशा आगे रखिये आप कुछ भी करिये अफीमची अफीम नहीं छोड़ सकता क्योंकि उसको अफीम का शौक है। इसी प्रकार गाँजे का शौकीन गांजे को और भंग का शौकीन भंग को, शराबी शराब को कभी भी छोड़ नहीं सकेगा इससे सिद्ध है कि शौकीन लोग अपने शौक पर सर्वस्व निछावर कर देते हैं। जिन लोगों को ईसाई बनने का शौक लग गया उनको आप वेद-शास्त्र दिखलाइये,हिन्दूस्वरूप, हिन्दूसभ्यता, हिन्दूजाति, हिन्दूधर्म के संसार से उठ जाने का हेतु उनके आचरण को सिद्ध कर दीजिये, कुछ न होगा। जिनको ईसाई होने का शौक लगा है वे लोग विधवाविवाह, चोटी कटवाना. जनेऊ फेंक देना, होटलों में खाना ईसाइयों से विवाहादि सम्बन्ध जोड़ना, शराब पीना, धर्मशास्त्रों के नाम से संसार को धोखा देना, हिन्दुओं के दुश्मन बनना, हिन्दुशास्त्रों को दियासलाई

दिखलाना, हिन्दू ग्रंथोंको बेवकूफों के बनाये कहना, गोहिंसा को धर्म मानना, ब्राह्मणों को गाली देना, भंगी चमारों को सर्वोच्च समझना, सबका झूठा खाना, इनको कभी न छोड़ेंगे। शौक का छोड़ देना मामूली बात नहीं है। जिनको ईसाई बनने का शौक लगा है, जो लोग वेद और धर्मशास्त्र की तरफ से चौपटानन्द हैं वे ही विधवा विवाह चलाना चाहते हैं यदि हिन्दू इनके धोखे में फंस गये तो फिर कुछ दिन के पश्चात् संसार में एक भी हिन्दू न मिलेगा अतएव हिन्दुओं को हिन्दूवेषधारी इन गुप्त ईसाइयों के जाल से बच कर इन का भयङ्कर मुकाबला करना चाहिये।

करतूत।

एक नवीन सुधारक की करतूत सुनिये। आप काशी से निकलने वाले 'आज' नामक दैनिक पत्र में लिखते हैं कि 'कुल्लूक भट्ट ने 'न द्वितीयश्च साध्वीनाँ क्वचिद्भर्तोपदिश्यते' इस मनु वचन के व्याख्यान में कहा है 'बहुभर्तृकेयमिति लोकप्रसिद्धेः द्वितीयोऽपि भर्त्तैव लोके गर्हाऽप्रसिद्धावपि साध्वाचाराणां न क्वचिच्छास्त्रे द्वितीयोपभर्तोपदिश्यते। एवं च सति पुनर्भूत्वमपि प्रसिद्धम्। यह स्त्री बहुभर्तृका है, इस लोक प्रसिद्ध से पुनर्विवाह संस्कार के हो जाने पर दूसरा भी पति ही है। लोक में निन्दा की अप्रसिद्धि होने पर भी एक पतिव्रत करने वाली स्त्रियों के लिये शास्त्र में कहीं भी दूसरे पति का उपदेश नहीं है। ऐसी परिस्थिति में पुनर्विवाह भी धर्मशास्त्र

समस्त है। आचार्य कुल्लूक भट्ट का तात्पर्य यह है कि जो स्त्री काम्य एक पतिव्रत का पालन करना चाहती है उस के लिये पुनर्विवाह का शास्त्र में विधान नहीं है और जो स्त्री काम्य एक पतिव्रत का पालन करना नहीं चाहती उसके लिये पुनर्विवाह धर्मशास्त्र सम्मत है"।

इस महानुभाव ने अपनी बुद्धि के छोटे छोटे खण्ड बना कर मेम्टन रोड पर कौड़ियों में नीलाम कर डाले हैं, अब ये महानुभाव चालबाजों से मुफ्त में कुछ अक्ल उधार ले कर धर्म शास्त्र के विवेचन में लगे हैं, आपकी दृष्टि में श्रुति, स्मृति इतिहास, पुराण, ये सब झूटे हैं, आप को संसार में यदि कोई सर्वोत्तम प्रमाण दीखता है तो वह मनु स्मृति के ऊपर कुल्लूक भट्ट का टीका है इसी कारण आप कुल्लूक भट्ट के टीका का आश्रय ले कर और उस में कुछ जाल फैला कर वेद शास्त्रों को मिथ्या सिद्ध करते हुये कुल्लूक भट्ट के टीका से विधवा विवाह सिद्ध करने को तैयार हो गये हैं, ये क्या खाक विधवा विवाह सिद्ध करेंगे, अब इन को इतना भी ज्ञान नहीं कि वैदिक और आर्ष प्रमाण के आगे साधारण कुल्लूक भट्ट का निर्णय कभी भी मान्य नहीं हो सकता, यदि कुल्लूक भट्ट विधवा विवाह का होना लिख दें एवं धर्म शास्त्र; वेद तथा इतिहास पुराण विधवा विवाह का खण्डन करें तो कुल्लूक भट्ट के टीका को दूर फेंक दिया जावेगा। इस व्यवस्था को वही समझ सकता है कि जिसने श्रुति-स्मृति के विवेचन में

कुछ समय विताया है किन्तु जिस ने कभी स्वप्न में भी श्रुति स्मृति का अवलोकन नहीं किया और अपना समस्त जन्म "हिङ्ढाणम् , में खो दिया वह क्या जाने श्रुति स्मृति का दर्जा ऊंचा या कुल्लूक भट्ट के टीका का? इनको यह मालूम नहीं कि 'इयं नारी' इस मंत्र में पति के मरने पर वेद ने स्त्री का सती होना लिखा है, इन को यह मालूम नहीं कि 'उदीर्ष्व नारी' में पति मरने पर वेद ने स्त्री को ब्रह्मचर्य से रहना लिखा है, इन को यह भी मालूम नहीं कि "मृतेभर्तरि या नारी" प्रभृति श्लोकों से पाराशर तथा 'मृते भर्तरि' प्रभृति श्लोकों से दक्ष एवं 'पतिव्रता निराहारा' आदि श्लोकों से व्यास स्मृति 'इयं नारी' और 'उदीर्ष्व नारी' इन मंत्रों की पुष्टि कर के विधवा स्त्री सहगमन तथा ब्रह्मचर्य से रहना ये दो ही धर्म बतलाती है, इन को इतना भी ज्ञान नहीं कि द्विजाति मनुष्य को "अनन्यपूर्विका स्त्री से ही विवाह करना लिखा है, ये इतना भी नहीं जानते कि याज्ञवल्क्य स्मृति में "मृते जीवति वा पत्यौ" इस श्लोक में स्त्रियों के दूसरे पति का निषेध बतलाया है, इन को इतना भी ज्ञान नहीं कि मनु के पंचमाध्याय के कई श्लोक विधवा विवाह का घोर खण्डन करते हैं, इन को यह भी मालूम नहीं कि "अर्यमणम्" इत्यादि विवाह प्रकरण के मंत्रों में स्त्री को पुनर्विवाह करने का निषेध है; आपने कभी मनु का "सकृदंशो निपतति" यह श्लोक भी नहीं पढ़ा, आपने धर्म ज्ञान विषय में यदि कुछ जाना है तो

कुल्लूकभट्टकृत मनु का टीका ही जाना है और वह भी एक श्लोक का, समस्त वह भी नहीं पढ़ा, यदि कुल्लूक भट्ट का टीका ही समस्त पढ़ लेते तो फिर कभी स्वप्न में भी यह न कहते कि कुल्लूकभट्टने अपनी लेखनी से विधवा विवाह लिखा है ? आज हम श्रोताओंको "नोद्वाहिकेषु" इस मंत्रका कुल्लूक भट्टकृत टीका सुनाते हैं सुनिये—

"अर्यमणं नुदेवम्, इत्येवमादिषु विवाह-प्रयोगजनकेषु मंत्रेषु क्वचिदपि शाखायां न नियोगः कथ्यते। न च विवाहविधायकशास्त्रेऽन्येनपुरुषेणासह पुनर्विवाह उक्तः।

"अर्यमणम्" प्रभृति विवाह प्रयोग जनक मंत्रों में किसी शाखा में भी नियोग नहीं कहा और न विवाह विधायक शास्त्र में ही अन्य पुरुष के साथ पुनर्विवाह कहा है"।

यहां पर कुल्लूक भट्ट विधवा विवाह का खण्डन करते हैं और उस की पुष्टि में कहते हैं 'विवाह विधायक मंत्रों में कहीं भी पुनर्विवाह का करना नहीं लिखा' कहिये कुल्लूक भट्ट विधवा विवाह के प्रचारक हैं या निषेधक ? और सुनिये "कामं तु क्षपयेत्" इस श्लोक के टीका में भट्ट जी लिखते हैं कि—

वृत्तिसंभवेपि पुष्पमूलफलैः पवित्रैश्च देहं क्षपयेदल्पाहारेण क्षीणं कुर्यात्। न च भर्तरि

मृते व्यभिचारधिया परपुरुषस्य नामाप्युच्चारयेत्,, ॥

आजीविका रहने पर भी पवित्र पुष्प मूल फलादि स्वल्पाहार से शरीर को सुखा दे किन्तु पति के मरने पर परपुरुष संयोग व्यभिचार है इस बुद्धिसे पर पुरुषका नाम भी न ले।

अब बतलावें नवीन सुधारक कि कुल्लूक भट्ट विधवा विवाह का मण्डन करता है या खण्डन? अब उस लेख का उत्तर सुनिये जिस में नवीन सुधारकने भट्टजी को,विधवा विवाह का समर्थक बतलाया है। जिसको पाण्डुरोग होता है उसको संसार पीला नजर आता है वही हाल इस लेख में हुआ। सुधारक के मन में विधवा विवाह भरा है इस कारण इनको कुल्लूक भट्ट के टीका में विधवा विवाह दीखता है। कुल्लूक भट्ट के टीका से विधवाविवाह कैसे निकला, सुधारक ने "प्रतिषिद्धम्" पाठ के स्थान में अशुद्ध पाठ "प्रसिद्धम्" ले लिया। सालकोटिया कागज पर जो काशी की छपी हुई प्राचीन पुस्तक है उसमें "प्रतिसिद्धम्" पाठ है और गणपति कृष्ण के प्रेस में जो सात टीका की मनुस्मृति छपी है उसमें भी 'प्रतिसिद्धम्' पाठ है बहुत पुस्तकों में प्रतिसिद्धम् शुद्ध पाठ और बहुतों में प्रसिद्धम् अशुद्ध पाठ है आपने अशुद्ध पाठ को लेकर मनमाना अर्थ गढ़ा है यही सुधारक की करतूत है शुद्ध पाठ लेने पर जिस अर्थ की अन्त्येष्टि क्रिया हो जाती है। शुद्ध पाठ को छोड़

कर अशुद्ध पाठ क्यों लिया गया इस चालाकी के ऊपर कह सकते हैं कि लीडर बनने का शौक? यह शौक नहीं मालूम कितने अनर्थ करवावेगा शुद्ध पाठ का छोड़ना और अशुद्ध को लेना यह निर्णायक की नीचता और न्याय का गला घोटना है। आज शौक वश बड़े२ अन्यायोंसे विधवा विवाह चलाया जाता है ईश्वर ऐसे पुरुषों को बुद्धि दे।

विधवा विवाह का सर्वथा निषेध।

समस्त स्मृतियों में मुख्य मनुस्मृति द्विजों में विधवा विवाह का निषेध बड़े जोर से लिखती है सुनिये–

नान्यस्मिन्विधवा नारी नियोक्तव्या द्विजातिभिः।
अन्यस्मिन्हि नियुञ्जाना धर्मं हन्युः सनातनम् ॥६४॥
नोद्वाहिकेषु मंत्रेषु नियोगः कीर्त्यते क्वचित्।
न विवाहविधावुक्तं विधवा वेदनं पुनः ॥६५॥

मनु० अ० ९।

द्विजाति (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य) विधवा स्त्री का नियोग न करे जो द्विजाति एक पति के मरने पर अन्य पुरुष से नियोग कराते हैं वे सनातन पतिव्रत धर्म का नाश करते हैं। नियोग और विधवा विवाह क्यों नहीं करना इसमें हेतु दिखलाते हैं कि "अर्यमणम्" इत्यादि विवाह के मंत्रो में कहीं भी नियोग नहीं कहा और न विवाह विधायक शास्त्र में विधवा का विवाह कहा है।

इन श्लोकों पर विधवा विवाह के लेखकों की उछल कूद मारी जाती है बेहोशी में आकर अण्ड बण्ड बकने लगते हैं।

स्वामी की कल्पना।

इन दो श्लोकों से पिण्ड छुड़ाने के लिये स्वर्गीय पं० तुलसीराम स्वामी ने अपने दिमाग से अनोखी कल्पनायें निकाली हैं उन कल्पनाओं को सुनिये (१) कल्पना यह है कि श्लोकमें जो "अन्यस्मिन्" पद पड़ा है जिसका अर्थ 'दूसरे में न नियोजित करना, संबंध जोड़ लेताहै,तुलसीरामने 'अन्यस्मिन्'का अर्थ यह किया कि दूसरे वर्णमें न नियोजित करना अर्थात् ब्राह्मणी को ब्राह्मण से क्षत्रियाणी को क्षत्रियसे नियुक्त करदे अन्य वर्ण से न करे किन्तु इस कल्पना की पोल दूसरे श्लोक में खुल जाती है। दूसरा श्लोक कहता है कि विवाह विधायक वेद मंत्रों में नियोग नहीं तथा विधवा विवाह नहीं, इस कारण से नियुक्त न करे। इस हेतु से यह पाया गया कि दूसरे वर्ण का निषेध नहीं है वरन् दूसरे पुरुष का ही निषेध है। इसके ऊपर तुलसीराम ने (२) नवीन कल्पना उठाई आप ने लिखा कि 'नोद्वाहिकेषु' यह श्लोक मनु का बनाया नहीं है किसी पंडित ने बना कर मनु में लिख दिया।

पंडित जी ने दो नूतन कल्पनायें तो तैयार कीं किन्तु उन कल्पनाओं को सत्य सिद्ध न कर सके। मुकाबला पड़ने पर हमने स्वामी जी से पूछा कि "नोद्वाहिकेषु" यह श्लोक किस पंडित ने बनाया ? कब बनाया ? क्यों बनाया ? और जब इस

श्लोक की कही हुई बात विवाह विधायक मंत्रों में सोलहआने सत्य है तो यह श्लोक न भी हो तब भी इसका कथन तो सत्य है? उसको उड़ाने के लिये तुम्हारे पास कौन तोप है इसको सुन कर स्वर्गीय पंडित जी फड़ फड़ाये अन्त में मौन रह कर आठ हजार मनुष्यों में नीचा देख गये और यह सिद्ध होगया कि 'नोद्वाहिकेषु' यह श्लोक किसी पंडित का बनाया नहीं मनु का बनाया है। तुलसीराम को जब कुछ उत्तर न आया तब हार कर यही उत्तर सोचा कि यह लिख दो कि 'श्लोक मनु का बनाया नहीं है पंडित का बनाया है'। आज के शास्त्रार्थ में श्लोक मनु का बनाया सिद्ध हो गया और पं० तुलसीराम की हार हो गई।

उपाध्यायकी कल्पना।

'नान्यस्मिन्' इस श्लोक पर उपाध्याय जी अपनी अक्ल खर्च करना नहीं चाहते इस कारण तुलसीराम के अर्थ को ही मंजूर कर अपनी पुस्तक में लिख देते हैं। अब रही बात 'नोद्वाहिकेषु' इस श्लोक की, इस पर उपाध्याय जी एक कल्पना उठाते हैं। लिखते हैं कि "विवाह की विधि में नियोग नहीं, नियोगकी विधि में नियोग है विवाह की विधि अलग है और नियोग की विधि अलग"।

यहां पर विधवाविवाहके निपेधको तो उपाध्यायजी कच्चा ही चबा गये? समस्त टीकाकारों ने 'विधवा पुनर्वेदनम्' पदों का अर्थ किया है कि 'विधवा का पुनः विवाह नहीं होता;

श्लोक के अर्थ में वेईमानी करके विधवाविवाह को ऐसा उड़ा गये मानो इस श्लोक में विधवाविवाह का निषेध ही नहीं? धिक्कार है ऐसे निर्णायकों को।

नियोगमें जो यह कहा कि विवाह विधि में नियोग नहीं। क्यों नहीं? इस सबब को छिपा गये? कुल्लूक भट्टादि टीका-कार लिख चुके हैं कि "अर्यमणं नु देवम्" इत्यादि मंत्रों में स्त्री कह चुकी है कि मैं पति के गोत्र और पति के कुटुम्ब को न छोड़ूंगी, विवाह विधायक मंत्र इकरार करवा देते हैं कि मैं इस पति से भिन्न किसी मनुष्य के साथ संगम न करूंगी? मनु के इस अभिप्राय को कुचल तथा विवाह विधायक वेद के दश बारह मंत्रों के गले पर छुरी फेर अपना जाल फैला संसार को धोखा देने के लिये लिख देते हैं कि 'नियोग के मंत्रों में नियोग की विधि है'। विवाह विधायक मंत्रों के इकरार नामे को झूठा बनाना सिद्ध करता है कि उपाध्याय जी वेद के परम शत्रु हैं।

नियोग के मंत्रों में नियोग की विधि जो उपाध्याय जी ने बतलाई है यह उपाध्याय जी का सुफेद झूठ है। सृष्टि के आरम्भ से सं० १९३० तक किसी ऋषि-मुनि, आचार्य, पंडित ने वेद में नियोग नहीं बतलाया, इस टाइम के बाद दयानन्द ने वेद में नियोग बतलाया है, उपाध्यायजी होश में आइये दयानन्द के सिद्धान्त नितान्त चण्डूखाने की गप्प हैं उनको न कोई आज तक सत्य सिद्ध कर सका है, न आगे को

कर सकता है ? हम चितौनी देते हैं उपाध्यायजी तथा समस्त आर्यसमाजों को कि वे औरंगजेब से प्रबल वेदों के दुश्मन स्वामी दयानन्दके गपोड़ोंको वैदिक सिद्ध करें। नियोगको ही लीजिये, हमने सन् १६ में नियोग नामक ग्रन्थ लिखा था और उसके खण्डन करने वाले को एक हज़ार रुपया इनाम लिखा था, फिर आपने क्यों नहीं लेखनी उठाई ? क्या आप सो गये थे ? यदि आप सो गये थे तो आर्यसमाजें तो न सो गई थीं ? फिर क्यों लेखनी न उठी ? नियोग नामक ग्रन्थ को देख कर श्रद्धानन्द घबरा गये और उन्होंने 'आदिम सत्यार्थ प्रकाश, नामक ग्रन्थ में लिख दिया कि नियोग शूद्रों के लिये है, तबेले में ही दुलत्ती ? आप फिर द्विजों के लिये नियोग कहने लगे ? सन् १२ में हमने 'नियोग मर्दन' ग्रंथ लिखा था उसको देख कर आर्य समाज कानपुर के प्रधान उपदेशक तथा 'विधवोद्वाह मीमांसा' के लेखक पं० बद्रीदत्त ने नियोग का विस्तृत खण्डन कर 'सनातन धर्म पताका' में छपवाया तब आपने नियोग के सत्य सिद्ध करने के लिये लेखनी क्यों नहीं उठाई ? 'आर्य इतिहास' में नरदेव शास्त्री लिखते हैं कि नियोग का जुम्मेदार वेद नहीं है—स्वामी जी हैं, इनका लेख सिद्ध कर रहा है कि वेद में नियोग नहीं ? आप किस हौसले पर वेद में नियोग बतला रहे हैं ? पेशावर की दो अदालतों ने फैसले दे दिये हैं कि दयानन्द का चलाया नियोग निःसन्देह व्यभिचार है।

और बतलावें ? धर्म किताबों में लिखने के लिये ही होगा या आचरण करने के लिये भी होता है ? यदि आप नियोगको धर्म समझते हैं तो फिर आप मुझे बतलावें कि आप ने अपने कुटम्ब में कितनी स्त्रियों के नियोग करवाये ? और एक एक स्त्री के कितने कितने नियोजित पति हुये ? नियोग से सौ कोस भागना तथा किताब में नियोग को वैदिक धर्म लिखना यह धांखेबाजों का काम है ? नियोग-चण्डूखाने की गप्प है इसको तो आर्यसमाजों का आचरण सिद्ध कर रहा है ? स्वामी जी ने संवत् १९३३ में नियोग चलाया था और 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' में लिखा था कि नियोग शीघ्राति शीघ्र चलाया जावे किन्तु आज तक आर्यसमाजमें एक भी नियोग नहीं हुआ ? नियोगका न होना क्या यह सिद्ध नहीं कर रहा कि यह बहुत बुरी चीज है ? समस्त आर्य समाजोंने इसको पाप समझा है, आप इसको धर्म समझते हैं तो अपने कुटम्ब में चलाइये ? दयानन्द के सिद्धान्त तो प्याज हैं उनको जैसे जैसे उधेड़ोगे बदबूदार छिलके निकलेंगे ? भीतर सार कुछ भी नहीं ? उपाध्यायजी की झूठी कल्पना आर्य समाज के आचरण के आगे ढेर हो जाती है।

देखो, हम उपाध्याय जी के लेख से स्वामी जी को मूर्ख वेदानभिज्ञ, चण्डूखानेकी गप्प लिखने वाला सिद्ध करवाते हैं। स्वा० दयानन्द जी 'सत्यार्थप्रकाश' तथा 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका एवं 'संस्कारविधि' में विधवाविवाह का घोर खण्डन

करते हुये विधवा विवाह को वेद विरुद्ध बतलाते हैं और उपाध्याय जी विधवा विवाहको वैदिक सिद्ध करते हैं, अब उपाध्यायजी की दृष्टि में दयानन्द का यह लेख क्या चण्डूखाने की गप्प नहीं हुआ? उपाध्यायजी! तुम चण्डूखाने की गप्पों से सत्य को नहीं गिरा सकोगे? अब बतलावें आप मनु के इन दो श्लोकों पर क्या कहते हैं?

आप श्लोकों का क्या बतलावेंगे, पहिले हमारी चिट्ठी का तो जवाब दे दें? उपाध्याय जी ने वेदों के गले पर छुरा चलाया? उनको बूट से कुचला? अन्याय से वेदों से जबरन विधवा विवाह निकाल ही तो लिया? इस अन्याय को देख कर हमने उपाध्यायजी को एक रजिष्ट्री चिट्ठी लिखी, श्रोताओ! जरा उसे भी सुनलो।

चिट्ठी।

अमरौधा—कानपुर
५ । १ । २६

माननीय पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०
नमस्कार।

आज कल हम, 'विधवाविवाह निर्णय' नामक पुस्तक लिख रहे हैं। इसके लिये हम को श्रीमान् की बनाई हुई 'विधवा विवाह मीमांसा' भी देखनी पड़ी है। इसके देखने से ज्ञात हुआ कि श्रीमान् ने वेद मंत्रों के असली अभिप्राय को दबा कर मंत्रों से बलात्कार 'विधवा विवाह' निकाला है। इसकी

पुष्टिमें हम कुछ उदाहरण आपके पास भेजते हैं-आशा है कि श्रीमान् ठीक निर्णय करेंगे इस से यह ज्ञात हो जावेगा कि हमारा भ्रमहै और आपकी बातों को हम सत्य मानेंगे। सन्देह जनक प्रश्न ये हैं।

(१) 'इयंनारी' इस मंत्र में यजु० अथर्व० वेदों ने पति मरने पर पत्नी का सह गमन (सती होना) लिखा है आपने इस मंत्र से, विधवा विवाह की मिथ्या कल्पना कैसे उठाई, क्या आपने सायण भाष्य और सायण भाष्य गत स्मृति प्रमाण को नहीं पढ़ा?

(२) जब आपने 'उदीर्ष्वनारी' इस मंत्र पर सायण भाष्य देकर सायण भाष्य से विधवा विवाह सिद्ध किया है तो फिर आपको 'इयंनारी' इस अथर्व वेद के मंत्र पर लिखा भाष्य अप्रमाणिक कैसे हो गया?

(३) 'उदीर्ष्वनारी' इस मंत्र में 'एतत्' शब्द को आपने षष्ठी विभक्ति कल्पना कर अर्थ कैसे लिखा?

(४) 'जनित्वम्' पद का अर्थ 'जायात्वम्' सन्तति होता है तो फिर आपने "औरत" अर्थ कैसे कर दिया?

(५) 'उदीर्ष्व नारी' इस मंत्र में एक ही पति लिया गया आपने एक मरा हुआ और एक जीवित जिस से वह विधवा विवाह करेगी-दो क्यों माने? क्या ईश्वर अपनी गलती से एक पति लिख गया था, उस गलती को दूर करने के लिये आपने दो पति बना कर वेद की गलती दूर की है?

(६) 'उदीर्ष्व नारी' इस मंत्र में 'पत्युः' पद पड़ा है उसके दो विशेषण और हैं, एक तो 'हस्त ग्राभस्य' दूसरा 'दधिषोः, आपने 'दधिषोः'को अलग कर विशेषण क्यों तोड़ा ?

(७) इन दोनों मंत्रों का 'पितृमेध' देवता और अन्त्येष्टि कर्म में विनियोग है—आपने विनियोग और देवता दोनों को क्यों उड़ाया ? तथा देवताके विरुद्ध विधवा विवाह अर्थ क्यों निकाला इसकी पुष्टि में क्या प्रमाण रखते हो ?

(८) 'उदीर्ष्वनारी' इस मंत्र पर चार कल्प सूत्र हैं, आपने उनको क्यों उड़ाया ? जब क्षत्रिय जाति में स्त्री पति के पास बैठ कर नहीं रोती और स्त्री के स्थान में धनुष रक्खा जाता है तो क्या क्षत्रियों के यहां विधवा विवाह धनुष से होगा ?

(९) आपने 'उदीर्ष्व नारी' इस वेद मंत्र में पहिले तो विधवा विवाह की विधि दिखलाई और फिर मंत्र को साङ्केतिक माना 'उदीर्ष्व नारी' मंत्रमें कोई भी पद साङ्केतिक नहीं है, आपने साङ्केतिक कैसे माना ? विधि कभी भी सांकेतिक नहीं होती—आपने किस अधार पर सांकेतिक मानी ?

(१०) 'इयंनारी' इस मंत्र में सती होने की विधि और 'उदीर्ष्वनारी' इस मंत्र में बच्चों का पालन तथा ब्रह्मचर्य से रहना लिखा है। इन दोनों अर्थों को पाराशर एवं दक्ष व्यास स्मृतियों ने बिलकुल स्पष्ट कर दिया। इन तीनों स्मृतियों को आपने क्यों उड़ाया ? इसका हेतु लिखिये ?

(११) वेद व्याख्याता पं० भीमसेन जी ने प्रथम वर्ष के

ब्राह्मण सर्वस्व से नियोग खण्डन का आरंभ किया और चतुर्थ वर्ष तक नियोग खण्डन चला। उस में आप का यह भी मंत्र आगया जिस में लिखा है कि वेदव्याख्याता ने फिर कभी खण्डन नहीं किया ?

(१२) वेदव्याख्याता ने 'विधवा विवाह मीमांसा, नामक पुस्तक लिखी है। और आज भी उस में 'इयंनारी, से विधवा विवाह का खण्डन लिखा है। फिर आपने वेद-व्याख्याता के इस दूसरे प्रमाण को क्यों नहीं माना? एक मनुष्य का एक प्रमाण मानना और दूसरा न मानना क्या यह आप की दृष्टि में न्याय है।

(१३) वेदव्याख्याता के लिखे नियोग से आपने विधवा विवाह कैसे मान लिया। क्या आप की दृष्टि में नियोग और विधवा विवाह एक हैं ? एक हैं तो किस हेतु से ?

(१४) पं० बद्रीदत्त जोशी ने नियोग का खण्डन किया और विधवा विवाह का मण्डन किया। आर्यसमाज के जन्म दाता स्वामी दयानन्द जी ने वेदों के कई एक प्रमाण दे कर नियोग का मण्डन किया और सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, संस्कार विधि में विधवा विवाह का घोर खण्डन किया। क्या ये दोनों आप की दृष्टि में वज्र मूर्ख हैं जो नियोग और विधवा विवाह को पृथक् २ मानते हैं ?

(१५) आपने, 'कुहस्विद्दोषा' इस मंत्र में 'देवृकामा' पद पर 'देवरो दीव्यति कर्मा, इस निरुक्तके बचनको क्यों छिपाया?

और 'देवृकामा, का 'देवर से विधवा विवाह की इच्छा रखने वाली, यह अयोग्य अर्थ क्यों किया ? यदि आपका यह अर्थ ठीक है तो 'पुत्रकामा; धनकामा, भूकामा, अश्वकामा प्रभृति पदों का क्या अर्थ होगा ?

(१६) 'अघोर चक्षुः, इस मंत्र पर आपने देवर का अर्थ दूसरा पति किया है। यह मन माना है। संस्कृत साहित्य इस में साक्षी नहीं है। ऐसा कल्पित अर्थ क्यों किया गया ?

(१७) 'या पूर्वं पतिं वित्वा' यह मंत्र अजयाग प्रकरणका है और मूल वेद ने "अपदोवनेनिर्ग्र दुश्चरितं यच्चचार" मंत्रमें स्पष्ट कह दिया है कि अजयाग पाप के दूरीकरणार्थ होता है 'या पूर्व, मंत्र कहता है कि यदि पुनर्भूः स्त्री अजयाग करेगी तो फिर पति का वियोग न होगा। आपने इस में से विधवा विवाह कैसे निकाला ?

ऐसे २ सैकड़ों प्रश्न आप की लिखी 'विधवा विवाह मीमाँसा, पर उठ कर यह सिद्ध करते हैं कि आपने अंग्रेजी शिक्षा के मसाले से विधवा विवाह सिद्ध किया है ? और वेदों में विधवा विवाह की गंध नहीं ? कृपा कर इन १७ प्रश्नों का उत्तर लिखिये उत्तर आ जाने पर शेष प्रश्न आप की सेवा में भेजूंगा। दया बनाये रहें, पत्रोत्तर अवश्य दें।

कालूराम शास्त्री।

अमरौधा जिला कानपुर।

उपाध्याय जी ! आप 'नोद्वाहिकेपु, इस श्लोक पर तो

मिथ्या कल्पना क्या उठावेंगे पहिले आप हमारी चिट्ठी का तो जवाब दे दें ? हमें विश्वास है कि आप बातें तो बहुत बनावेंगे किन्तु चिट्ठी का जबाव न दे सकेंगे ? यदि आप चिट्ठी का जबाव नहीं दे सकते तो फिर किस हिम्मत पर 'विधवा विवाह मीमांसा' लिख बैठे ? और किस हिम्मत पर 'नोद्वाहिकेषु; इस श्लोक पर मिथ्या कल्पना उठा बैठे ? हम संसार में सिद्ध कर देंगे कि उपाध्याय जी झूठे, उन की लिखी किताब झूठी एवं उन की कल्पना झूठी ? उपाध्याय जी को वेद-धर्म शास्त्र से कोई प्रयोजन नहीं, धोखा देकर हिन्दुओं को ईसाई बनाने से प्रयोजन है ?

गांधी की कल्पना ।

घोड़े के जड़ी जाती थी नाल, मेंढकी ने भी पैर फैला दिया कि मेरे भी जड़दे यह न समझा कि मैं तो एक ही नाल से सातवें आसमान पर पहुँच जाऊँगी ? गान्धी ने देखा कि राष्ट्रीय लीडर तो हम बनही गयेहैं इस अन्धेरके जमानेमें जबर्दस्तीसे चलो धार्मिक लीडरभी बनें आप इन श्लोकोंपर लिखते हैं कि जो स्त्री विधवा विवाह न करे तो बहुत अच्छी बात है किन्तु जो नहीं रह सकती वह करले ।

ठीक है, मन की इच्छा है चाहे धर्म को माने या न माने। गान्धी अपनी शक्ति से नहीं वरन् इन के पेट में योरुप बोल रहा है, इतना तो गान्धी जी को याद ही रखना चाहिये कि यह सूत कातना और खद्दर बुनना नहीं है जो साधारण मनुष्य

भी कर लेगा इस का विवेचन वही कर सकता है जिसने धर्म शास्त्रों का उत्तम रीति से अध्ययन किया हो।

एक बादशाहने हुक्म निकाला कि कोई भी मनुष्य किसी मनुष्यके प्राण न ले नहीं तो प्राण लेने वाला फाँसी पर लटका दिया जावेगा, कुछ दिन के पश्चात् उस बादशाह के दीवान ने डुग्गी पिटवादी कि किसी मनुष्य की जान लेने वाला पुरुष बादशाह की दृष्टि में हत्यारा है और उस को फांसी की सजा मिलेगी अतएव हम पबलिकको सूचना देते हैं कि कोई मनुष्य किसी मनुष्य के प्राण न ले, क्या कोई विचारशील मनुष्य अब यह कह सकता है कि जिस की इच्छा हो वह अन्य पुरुष को न मारे एवं जिस की इच्छा हो मार दे? बादशाही हुक्म और दीवान की घोषणा इच्छा को दबाने के लिये ही निकली है जो आज्ञा को न मानेगा तथा आज्ञा के विरुद्ध मनुष्य वध करेगा वह अपराधी समझकर फांसी पर चढ़ा दिया जायगा।

यहां पर यह उज्र न सुना जायगा कि जिस की इच्छा हो वह मनुष्य वध न करें, हमारी इच्छा थी हमने किया, हम अपराधी क्यों? यदि अपराधी की तरफ से इस बहस को वकील उठावेगा तो मजिस्ट्रेट वकील की बहस पर स्पष्ट कह कह देगा कि तुम बड़े बेवकूफ हो; मानसिक इच्छा का गला घोटने के लिये ही तो बादशाहका हुक्म निकला है और उसी मानसिक इच्छा को कुचल देने के लिये दीवान की घोषणा हुई एवं उसी को तुम हमारे आगे रखते हो? सच बतलाओ

तुम भूल करते हो या नहीं ? वकील को चुप हो जाना पड़ेगा और अपराधी फांसी पर लटक जावेगा ।

कोई दलील, कोई बहस, कोई दिमाग मनुष्य वध करने वाले पुरुष को अपराध रहित सिद्ध कर के बचा नहीं सकता, यहां पर दलील बहस दिमाग लड़कियों का खिलौना हो जावेगा और बादशाह का हुक्म तथा दीवान की घोषणा माननी पड़ेगी ।

वेदने बतलाया कि कोई भी द्विजाति स्त्री पति के जीवित रहने पर या मरने पर पत्यन्तर ग्रहण न करे एवं जिस पति से विवाह हुआ है उसके कुटुम्ब तथा गोत्र को कभी न छोड़े नहीं तो स्त्री धर्म का नाश हो जावेगा । वेदों के मंत्री मनु ने वेद की इस आज्ञा को 'नोद्वाहिकेषु' इस श्लोक में घोषित कर दिया, अब इसके ऊपर मनकी इच्छा का कोई उज्र नहीं सुना जायगा, जो स्त्री विधवाविवाह करेगी वह अपराधिनी होगी और उसको नरकपात की सजा अवश्य मिलेगी फिर आप इच्छा का भूत लोगों के आगे क्यों रखते हैं ?

शास्त्रार्थ ।

जिस समय विधवाविवाह पर शास्त्रार्थ होताहै उस समय 'नान्यस्मिन्' और 'नोद्वाहिकेषु' मनुके ये दो श्लोक पकड़ लिये जावें तो विधवाविवाह चलाने वालों को बुरी तरह हार जाना पड़ता है । दो वर्ष होने को आये जहानाबाद सनातनधर्म सभा का वार्षिकोत्सव था उसमें मैं आरहा था, कानपुर के स्टेशन

पर रामचरण कान्यकुब्ज पाठशाला के प्रधानध्यापक पं०राम-सेवक जी व्याकरणचार्य मिलगये आपने कहाकि मेरा दिमाग खराव होगया है, मैंने दिमाग से वड़ा परिश्रम लिया; छः महीने रात दिन धर्मशास्त्रों के अवलोकन में लगा रहा, अव मुझे मालूम पड़ा कि धर्मशास्त्रों में डंके की चोट विधवा-विवाह लिखा है,व्याख्यान देनेवाले धर्मशास्त्रको क्या समझें ? पं० भीमसेन ने वड़ी नीचता की, सव प्रमाणों को वाग्दत्ता परक लगा दिया, मैं अव नहीं देखता कि कोई मेरे मुकावले आवेगा ? काशी के विद्वानों को तो मैं कुछ समझता ही नहीं हां केवल काशी में पं० नित्यानन्द जी शास्त्री कुछ पंडित हैं उनसे मैं अपनी पुस्तक पर सम्मति लिखवाऊंगा अगर नहीं लिखेंगे तो मैं शास्त्रार्थ करूंगा, फिर कलकत्ते में जाकर हल्ला मचाऊंगा देखिये क्या होता है ? मैं हंस कर रह गया। मैं पहिले से ही जानता था कि ये पंडित जी रात दिन अपनी वड़ाई किया करते हैं और अपने सामने दुनियां के विद्वानों को मूर्ख समझते हैं किन्तु जव शास्त्रार्थ का काम पड़ता है तव पं० चन्द्रशेखर जी विविधाचार्य प्रधानाध्यापक वलदेव-सहाय संस्कृत विद्यालय कानपुर और पं०केशवदत्तजी शास्त्री अध्यापक कल्लूमल संस्कृत पाठशाला कानपुर के सामने ये ही पंडित.जी ऐसे भागते हैं जैसे विल्ली को देखकर चूहा भागता है। अन्त में जहानावाद पहुँच सनातनधर्म सभा के सभापति असिस्टेंट कलेक्टर माननीय वा०आद्याशरणजी के

समक्ष में उन्हीं के कमरे में पंडितजी ने विधवा विवाह पर शास्त्रार्थ छेड़ा। हमने काव्यतीर्थ पं० ब्रह्मदेव जी शास्त्री को रोक कर कहा कि आप न बोलिये मैं बोलूंगा।

पं० जी ने पूर्वपक्ष में विधवा विवाह की पुष्टि में कुल्लूक भट्ट का टीका दिया। हमने पंडित जी से कहा कि कुल्लूक भट्ट कोई ऋषि मुनि नहीं हैं, वह भी एक पंडित हैं और आप भी पंडित हैं, हम भी पंडित है, मूल स्मृतियों से निर्णय क्यों न किया जावे? हमने पंडितजी के विधवा विवाह में दिये हुये मूलश्लोक "यस्याम्रियेत कन्यायाः" को वाग्दत्ता परक लगाकर पूर्व पक्ष को समूल नष्ट कर पं० जी के आगे "नान्य स्मिन्" श्लोक रख दिया। आपने अपने दिमाग की कल्पना तो कोई उठाई नहीं पं० तुलसीराम की कल्पना को लेकर चले कि दूसरे वर्ण के पुरुष के साथ स्त्री के नियोजित करने का निषेध है।

हमने कहा आप तो ऐसा न कहें क्यों कि मनुने जो "नोद्वाहिकेषु" इस श्लोक में निषेध का हेतु दिया है वह तो स्ववर्ण और परवर्ण सभी का निषेध करता है इतना सुनते ही पंडित जी की उछल कूद मारी गई तथा आप क्रोध में आकर बोल उठे कि आप हमको समझते क्या हैं? हम विधवा विवाह के शास्त्रार्थ में काशी के पंडितों को गिरा देंगे? हम भी चूकने वाले नहीं थे, हमने भी कह दिया कि काशी के पंडितों को जब जीतोगे तब जीतोगे पहिले हमसे तो

पिण्ड छुड़ाओ ? "नोद्वाहिकेषु" श्लोक ने तो आपको चारों खाने चित्त कर दिया ? पंडित जी जवाब न दे सके और क्रोध के मारे उठ गये। जब ये दो श्लोक व्याकरणाचार्य को भी धूल चटा देते हैं तब मामूली मनुष्यों के द्वारा बनाई गई मिथ्या कल्पनायें कहाँ तक सफल होंगी।

द्वितीय शास्त्रार्थ।

कोंच जिला जालौन में पं० बदरीदत्त जोशी के साथ हमारे दो शास्त्रार्थ हुये एक विधवाविवाह और दूसरा मूर्तिपूजा पर इन दो श्लोकों का कुछ भी उत्तर जोशी जी न दे सके और अन्त में हार गये। विजय पत्र सुनिये।

विजय पत्र

❀ श्रीहरिः ❀

कोंच जि० जालौन

ता०१२।४।१६११

इस शहर में आर्य समाज और सनातन धर्म दोनों का शास्त्रार्थ ठहरा उभयपक्ष ने मुझ को शास्त्रार्थ का सभापति नियत किया। आर्यसमाज की तरफ से पं० श्री बदरीदत्त जी उपदेशक आर्यसमाज कानपुर थे और सनातन धर्म की तरफ से पं० कालूराम शास्त्री अध्यापक संस्कृत पाठशाला अमरोधा थे। ता० ६ अप्रैल को विधवा विवाह पर और ता० १०अप्रैलको मूर्तिपूजन पर शास्त्रार्थ हुआ। उसमें सनातनधर्मने

विजय पाई अतएव यह विजयपत्र पं० कालूराम जी शास्त्री को देता हूँ।

शास्त्रार्थ के सभापति-

दः पं० श्री तिवारी मजबूतसिंह कोंच

मोहर—*Mazbut Singh.*

Konch, U. P.

तृतीय शास्त्रार्थ

आर्यसमाज और सनातन धर्म राठ जि० हमीरपुर में शास्त्रार्थ करने की ठहरी। सनातन धर्म सभा ने हमको बुलाया और आर्यसमाज ने पं० बद्रीदत्त जी को। शास्त्रार्थ होने से पहिले जोशीजी नियम बनाने के लिये मेरे स्थान पर आये। जोशी जी सभ्य बड़े अच्छे हैं हम कह सकते हैं कि आर्यसमाज में जोशी जी के बराबर कोई सभ्य नहीं। नियम बने हमने कहा कि यहां पर मूर्तिपूजा और विधवा विवाह पर शास्त्रार्थ न करिये, यह शास्त्रार्थ तो आपके साथ हमारे कोंच में हो चुके। जोशी जी ने कहा, नहीं। हमारी इच्छा इन्हीं विषयों पर है। हमने स्वीकार कर लिया शास्त्रार्थ हुआ। हमने मनुके येही दो श्लोक और विवाह विधायक मंत्रों को जोशी जी के आगे रख दिया। जोशी जी गिर गये। शास्त्रार्थ में हमारे पक्ष का विजय हो गया देखिये विजय पत्र।

विजयपत्र

राठ जि० हमीरपुर
ता०२३ । २ । १२

श्रीमान् माननीय उपदेशक पं० कालूराम ? प्रमाण

आपकी कृपा से सनातन धर्म दिन प्रति दिन बढ़ती पर है आपने राठ आने की कृपा की, आपने जो आर्यसमाज से शास्त्रार्थ कर मूर्तिपूजा और विधवा विवाह पर सनातनधर्म को विजयी बनाया है इसके हम सदा ऋणी रहेंगे। अब आर्यसमाजी भी आर्यसमाज को छोडने लगे हैं। जब से आप गये हैं आप का कोई पत्र नहीं आया। इस हमारी चिट्ठी को आप विजय पत्र समझें।

आपका वही शास्त्रार्थ का सभापति
रामसेवक नगायच।

शास्त्रार्थ के सभापति पं० रामसेवक जी ने अपने जिले की सनातन धर्म सभा हमीरपुर को कोई चिट्ठी लिखी, उस को पढ़ कर सनातन धर्म सभा हमीरपुर के सभापति बा० परमेश्वरी दयाल जी प्रसिद्ध वकील हाईकोर्ट हमको लिखते हैं वह यह है।

श्रीः हमीरपुर
ता०२६ । २ । १९१२

श्रीमान् पं० कालूराम जी शास्त्री । प्रणाम

आपने मुकाम राठ में जो पं० बद्रीदत्त के साथ विधवा

विवाह और मूर्तिपूजन पर शास्त्रार्थ किया था उसमें सनातनधर्म ने विजय पाई। पं० रामसेवक रईस जो कि शास्त्रार्थ के सभापति थे उन्हों ने इस सभा के पास विजय पत्र भेजा है कि जिसमें शहर के रईसों के दस्तखत हैं। लिहाजा आपको सूचना दी जाती है कि राठ की पवलिक ने विजय प्राप्ति आपको दी है।

भवदीय-बा० परमेश्वरीदयाल वकील हाईकोर्ट हमीरपुर।

सुधारक लोगों की उछल कूद, धूर्तता, चालबाजी, धोखा जितनी चालें हैं आज के व्याख्यान के प्रमाण सबको दिया-सलाई दिखला कर विधवा विवाह के खण्डन को सिद्ध कर देते हैं, इन प्रमाणों को देख कर विधवाविवाह के ठेकेदार ऐसे भाग जाते हैं जैसे शेर को देखकर गीदड़ भागे। श्रोताओं से हमारी प्रार्थना है कि जब कभी कोई विधवा विवाह वाला आवे तब इन प्रमाणों को आगे रखदो, देखते ही सुधारक की नानी मर जायगी, चेहरे पर स्याही लग जायगी कोई न कोई काम का बहाना बना कर फौरन चल देगा। सुधारक खोटे धर्मशास्त्रोंके प्रमाण देने तथा उनके अर्थ करने में बेईमानियां करते हैं, इन बेईमानों से तुम क्यों घबराते हो? धर्मशास्त्र विधवाविवाह का मण्डन नहीं करता वरन खण्डन करता है यह आज के व्याख्यान में हमने स्पष्ट दिखला दिया है। देर बहुत होगई. मैं अपने व्याख्यान को समाप्त करता हूँ और एकवार बोलिये प्रभु राघव रामचन्द्र जी की जय।

कालूराम शास्त्री

❀ श्रीहरिः ❀

इतिहास विवेचन !

शंभो महेश करुणामय शूलपाणे,

गौरीपते पशुपते पशुपाशनाशिन् ।

काशीपते करुणया जगदेतदेक—

स्त्वं हंसि पासि विदधासि महेश्वरोऽसि ॥१॥

अगणितगुणमप्रेयमाद्यं,

सकलजगत्स्थितिसंयमादिहेतुम् ।

उपरमपरमं परात्मभूतं,

सततमहं प्रणतोऽस्मि रामचन्द्रम् ॥२॥

अर्थं न धर्म न काम रुचि–पद न चहौं निर्वान ।

जन्म जन्म रति राम पद–यह वरदान न आन ॥ ३ ॥

जप बल तप बल ज्ञान बल–चौथा बल है दाम ।

हमरे बल एकौ नहीं–तुमही हो श्रीराम ॥ ४ ॥

बल प्रताप सभापति! एवं पूज्य विद्वन् मंडलि !! माननीय सद्गृहस्थ वृन्द !!! चालवाज सुधारकों की चालबाजियों का चकना चूर करके जब श्रुति स्मृति विधवा विवाह के प्रेमियों के मुख पर थप्पड़ लगाती हुई विधवा विवाह को पाप कह उस का घोर खण्डन कर देती है तब सुधारक हार कर एक दौड़ पुराणों पर लगाते हैं ।

जो सुधारक रात दिन पुराणों का खण्डन करते हुये पुराणों को पोप जाल बनावटी ढकोसले, संसार को गिराने वाले कहा करते हैं वे ही सुधारक "अभावे शालिचूर्णं वा" "भागते भूत की लंगोटी ही सही" "डूबते को तिनके का सहारा" इस न्यायको आगे रख पुराणोंको प्रमाण मान इन्हीं से संसार को विधवा विवाह दिखलाने लगते हैं। स्वार्थ बड़ी बुरी बलाय है, जिन पुराणों को ये नित्य मिथ्या कहा करते थे आज खुदगर्जी ने इन का गला दबा कर उन्हीं पुराणों को प्रमाण मनवा दिया। सुधारकों में यदि यह स्वार्थ ऐसा ही बना रहा तो किसी दिन यह पापी पेट भरने के लिये ये लोग स्पष्टरूप से बाईबल और कुरानको प्रमाण मान लेंगे। 'मरता क्या न करता' 'बुभुक्षितः किं न करोति पापम्" 'पेट की ज्वाला जितने पाप करवादे उतने कम हैं।

आज पेट भरने के लक्ष्य को आगे रख, विधवा विवाहको रोजगार बना उसकी सिद्धि के लिये पुराणों का प्रमाण रख कई एक इतिहास देकर पुराणों से विधवा विवाह की सिद्धि करते हैं। जिन आख्यायिकाओं को ये लोग विधवा विवाह में रखते हैं उन में से आज हम कई एक कथाओं का विवेचन करते हुये आप को स्पष्ट दिखला देंगे कि पुराणों में विधवा विवाह को धर्म नहीं माना गया, इतिहास किसी भी द्विजाति स्त्री के विधवा विवाह में साक्षी नहीं देता तो भी सुधारक लोग योरुप से सीखी हुई चालबाजियां फैला एवं संसार की

आंख में धूल झोंक विधवा विवाह सिद्ध करने का सर्वथा मिथ्या साहस करते हैं क्रम से आप कथाओं को सुनिये और सत्यासत्य का विचार कीजिये ।

दमयन्ती का स्वयम्वर।

शास्त्रानभिज्ञ कई एक मनुष्य यह कहा करते हैं कि प्राचीन काल में विधवाविवाह प्रचलित था, यदि उस समय विधवाविवाह की प्रणाली न होती तो दमयन्ती का दूसरा स्वयम्वर क्यों रचा जाता?

विधवाविवाह वाले अनुमान करते हैं कि विधवा विवाह प्रचलित होगा, यदि विधवाविवाह करने का रिवाज़ न होता तो दमयन्ती का स्वयम्वर न ठनता! इसके उत्तर में हमारा यह कथन है कि सृष्टि के आरंभ से दमयन्ती के स्वयम्वर तक इतिहास में एक भी विधवा नहीं हुआ फिर हम अनुमान मात्र से कैसे मान लें कि विधवाविवाह हुये होंगे? विधवा विवाह वालों के पास इसका कोई उत्तर है? क्या विधवा-विवाह को शास्त्र विहित बतलाने वाले दमयन्ती के स्वयम्वर से पहिले इतिहास में कोई विधवा विवाह बतला सकेंगे? या अपने सड़ियल दिमाग से निकले हुये मिथ्या अनुमान से ही विधवा विवाह बतलाते रहेंगे इस का किसी के पास कुछ उत्तर है?

दमयन्ती का दूसरा स्वयम्वर बतलाना संसार की आंखमें धूल झोंकना है। दमयन्ती का दूसरा स्वयम्वर रचा ही नहीं

गया, न तो स्वयम्बर रचनेका विचार था और न किसी प्रकार की स्वयम्वर की तैयारी थी तथा न ऋतुपर्ण को छोड़ कर अन्य राजाओं को ही स्वयम्वर के लिये निमंत्रित किया था एवं न कोई राजा आया ही था और न स्वयम्बरमें होने वाले वैदिक कृत्य की तैयारी थी तथा न वेद घोष के लिये ब्राह्मण बुलाये गये थे, केवल दमयन्ती ने नल के मिलने का उपाय सोचा था अब आप इसकी कथा सुनिये।

राजा नल को बहुत काल बीत गया किन्तु पता न लगा कि राजा नल कहां हैं। इस समय, पर्णाद, नामक ब्राह्मण किसी कार्य वश अयोध्या चले गये वहां जाकर राजा ऋतुपर्ण के यहां एक, बाहुक, नाम सारथी को देखा। इस को देख कर पर्णाद को यह सन्देह हुआ कि बाहुक नहीं है यह तो राजा नल है। इस सन्देह पर 'पर्णाद' नल से मिले और दमयन्ती की कथा छेड़ दी। दमयन्तीकी कथा को सुनकर 'बाहुक' रोने लगा। अब, पर्णाद को निश्चय होगया कि यह राजा-नल है और इसने अपना कल्पित नाम बाहुक रख लिया है। जब ठीक निश्चय होगया तब पर्णादने विदर्भ देशमें आकर समस्त समाचार 'दमयन्ती' को सुना दिया, इस पर दमयन्ती अति प्रसन्न हुई और बहुत सा धन दिया तथा यह कहा कि जिस समय राजा नल आ जावेंगे मैं और इनाम दूंगी। धनदान का श्लोक यह है।

अर्चयामासवैदर्भी—धनेनातीवभाविनी।

नले चेहागते तत्र—भूयो दास्यामि ते वसु ॥ १८॥

महाभा० वन० अ० ७०

इसके अनन्तर दमयन्ती ने यह सब कथा माता को सुना कर कहा कि—

दमयन्तीरहोऽभ्येत्य मातरं प्रत्यभाषत ॥ १४

अयमर्थो न संवेद्यो भीमे मातः कदाचन ।

त्वत्सन्निधौ नियोक्ष्येहं सुदेवं द्विजसत्तमम् ॥ १५

यथा न नृपतिर्भीमः प्रति पद्येत मे मतम् ।

तथा त्वया प्रकर्त्तव्यं-ममचेत्प्रियमिच्छसि ॥१६॥

महाभ० वन० अ० ७०

दमयन्ती एकान्त स्थानमें मातासे बोली कि नलके खोजने का जो उपाय मैं रच रही हूं, इसको आप पिता जी भीम से तब तक न कहना जब तक मेरे असली अभिप्राय को पिताजी न समझलें, अब तुम्हारे सन्मुख मैं 'सुदेव' को अयोध्या भेजती हूँ।

दमयन्ती के इस विचार को दमयन्ती और उसकी माता से अन्य कोई नहीं जानता था फिर इसको स्वयम्बर किस प्रकार कह सकते हैं। राजा नल के खोजने का उपाय है। इसी को दमयन्ती बनावटी स्वयम्बर के नाम से अपनी चिट्ठी में लिख कर ऋतुपर्ण को भेजेगी चिट्ठी का लेख यह है।

ततः सुदेवमाभाष्य दमयन्ती युधिष्ठिर !।
अब्रवीत्सन्निधौ मातुर्दुःखशोकसमन्विता ॥२२
गत्वा सुदेव नगरी-मयोध्यावासिनं नृपम्।
ऋतुपर्णं वचो ब्रूहि संपतन्निव कामगः॥ २३ ॥
आस्थास्यति पुनर्भैमी दमयन्ती स्वयम्बरम्।
तत्र गच्छन्ति राजानो राजपुत्राश्च सर्वशः ॥२४
तथा च गणितः कालः श्वोभूते स भविष्यति।
यदि संभावनीयं ते गच्छ शीघ्रमरिन्दम ॥२५
सूर्योदये द्वितीयं सा भर्त्तारं वरयिष्यति।
न हि स ज्ञायते वीरो नलो जीवति वा नवा॥२६

महाभा० वन० अ० ७०

उस समय सुदेव को सम्बोधन करके माता के समक्ष में दमयन्ती सुदेव ब्राह्मण से बोली बहुत जल्दी जाकर राजा ऋतुपर्णसे कहो कि दमयन्तीका दूसरा स्वयम्बर रचा गया है, अनेक राजा और राजपुत्र आवेंगे तथा चिट्ठी देते समय तुम यहभी कहना कि कलका दिन बीच मेंहै और परसों स्वयम्बर है। यदि आप पहुँच सकते हों तो जल्दी पहुँचें। अब यह पता नहीं कि नल जीवित है या मर गया, उनके अभाव में स्वयम्बर होगा।

दमयन्ती ने ऋतुपर्ण को जो आने का समय दिया है।

वह बड़े विचार से दिया है कि शाम को सुदेव ऋतुपर्ण को पत्र दे और दूसरा दिन बीचमें पड़े तथा तीसरे दिन स्वयम्बर हो। इस संकुचित समय के देने के कारण यह है कि इतने समय में अयोध्या से विदर्भ नगर में रथ पहुँचाने वाला इस समय भूतल पर यदि कोई मनुष्य है तो वह राजा नल है राजा नल से भिन्न इस अल्पकाल में विदर्भ देश में रथ पहुँचा देने के लिये वर्तमान समयमें भगवती पृथिवीने किसी दूसरे पुरुषको उत्पन्न नहीं किया। अयोध्या में यदि नल होंगे तो इस समय में रथ विदर्भ में आ सकेगा नहीं तो ऋतुपर्ण पहुँचनेसे विवश होकर न आ सकेंगे। रथ हांकने में राजा नल भूतल पर अपनी समता नहीं रखता था इसको महाभारत ने कई स्थानों में लिखा है। और जिस समय वाहुक ने अयोध्यासे रथको हांका है घोड़ों की चालको देख कर राजा ऋतुपर्ण कह उठाहै कि-

तथातु दृष्ट्वा तानश्वान्वहतो वातरंहस: ।
अयोध्याधिपति: श्रीमान्विस्मयं परमं ययौ ॥ २४
रथघोषंतु तं श्रुत्वा हयसंग्रहणं च तत् ।
वार्ष्णेयश्चिन्तयामास वाहुकस्य हयज्ञताम् ॥ २५
किंनु स्यान्मातलिरयं देवराजस्य सारथि: ।
तथा तल्लक्षणं वीरे वाहुके दृश्यते महत् ॥२६
शालिहोत्रोऽथ किंनुस्याद्धयानां कुलतत्ववित् ।

मानुषं समनुप्राप्तो वपुः परमशोभनम् ॥२७
उताहो स्विद्भवेद्राजा नलः परपुरंजयः ।
सोऽयं नृपतिरायात इत्येवं समचिन्तयत् ॥२८
अथ चेद्दनलो विद्यां वेत्ति तामेव बाहुकः ।
तुल्यं हि लक्षये ज्ञानं बाहुकस्य नलस्य च ॥२८

इस प्रकार से चलते हुये घोड़ों को देख कर जिन घोड़ों का वेग वायु के समान हो रहा है राजा ऋतुपर्ण आश्चर्य में पड़ गया ॥ २४ ॥ रथ का शब्द सुन कर और घोड़ों का संग्रहण देख वार्ष्णेय बाहुक की अश्व प्रवीणता का चिन्तन करने लगा ॥ २५ ॥ क्या यह मातलि इन्द्र का सारथी है क्यों कि बाहुक वीरमें वही लक्षण दीखता है ॥२६॥ क्या घोडोंके कुलोंके तत्व को जानने वाला यह शालिहोत्र मनुष्य शरीर में आ गया है ॥२७॥ या यह राजा नल है ? जहां तक हमारा विचार पहुँचा है यह राजा नल है यह ऋतुपर्ण विचार करने लगा ॥२८॥ या नलकी विद्या को यह बाहुक जान गया है ? रथ हांकनेमें बाहुक और नल दोनों का ज्ञान तुल्य है ॥ २९ ॥

इससे सिद्ध है कि नल के बराबर रथ हांकने में उस समय कोई न था इसी को जानकर दमयन्तीने अल्प काल पहुँचने के लिये रक्खा था दमयन्तीका यह दूसरा प्रण सिद्ध करता है कि दमयन्ती की इच्छा स्वयम्बर की नहीं है किन्तु नल के खोज

की है । नल न मिलेगा तो दमयन्ती क्या करेगी ? इसको वह अपने प्रण में कहती है ।

अद्य चन्द्राभवक्त्रान्तं न पश्यामि नलं यदि ।
असंख्येयगुणं वीरं विनक्ष्यामि न संशयः ॥८

महाभा० वन० ७३

यदि आज मैं चन्द्र मुख नल को न देख लूंगी तो मैं आज मर जाऊंगी । दमयन्ती के जितने उपायहैं, सब नल के मिलने के हैं स्वयम्बर करने का इन में किञ्चित् भी विचार नहीं ।

स्वयम्बराभाव ।

दमयन्ती का भाव स्वयम्बर द्वारा दूसरे पति को स्वीकार करने का नहीं है इसका प्रमाण हम दे चुके । अब हम इस बात का प्रमाण देंगे कि यहां स्वयम्बर रचना ही नहीं है और न स्वयम्बर का विदर्भ देश निवासी राजा प्रजा को कोई ज्ञान है ।

सतत्र कुण्डिने रम्ये वसमानो महीपतिः ।
नच किंचित्तदापश्यत् प्रेक्षमाणोमुहुर्मुहुः॥
सतुराज्ञा समागम्य विदर्भपतिना तदा ॥२१
अकस्मात्सहसा प्राप्तं स्त्रीमंत्रं नस्मविन्दति
किं कार्यं स्वागतं तेऽस्तु राज्ञा पृष्टः स भारत ॥२२
नाभिजज्ञे स नृपतिर्दुहित्रर्थे समागतम् ।

ऋतुपर्णोऽपि राजा स धीमान्सत्यपराक्रमः ॥ २३
राजानं राजपुत्रं वा नस्म पश्यति कं चन।
नैव स्वयम्बरकथां न च विप्रसमागमम् ॥ २४
ततोऽविगणयद्राजा मनसा कोसलाधिपः।
आगतोऽस्मीत्युवाचैनं भवन्तमभिवादकः ॥ २५
राजाऽपि च स्मयन्भीमो मनसा समचिन्तयत्।
अधिकं योजनशतं तस्यागमनकारणम् ॥ २६
ग्रामान्वहूनतिक्रम्य नाध्यगच्छद्यथा तथम्।
अल्पकार्यं विनिर्दिष्टं तस्यागमनकारणम् ॥ २७
पश्चादुदर्कं ज्ञास्यामि कारणं यद्भविष्यति।
नैतदेवं स नृपतिस्तं सत्कृत्य व्यसर्जयत् ॥ २८
विश्राम्यतामित्युवाच क्लान्तोऽसीति पुनः पुनः।
स सत्कृतः प्रहृष्टात्मा प्रीतः प्रीतेन पार्थिवः ॥ २९

महा भा० वन० अ० ७३।

ऋतुपर्ण–कुण्डिनपुर में रात्रि को वसा, वार वार चारों तरफ देखा किन्तु स्वयम्वरके कुछ भी चिन्ह दृष्टिमें न आये। ऋतुपर्ण–कुण्डिनपुर के राजा भीम से मिले, राजा भीम स्त्री विचार को नहीं जानते हैं कि जिस कारण से ऋतुपर्ण आये हैं। अतएव ऋतुपर्ण के आने का उन को आश्चर्य हुआ। २१—२२। भीम ने यह नहीं जाना कि ये दमयन्ती के लिये

आये हैं। ऋतुपर्ण ने भी किसी राजा और राजपुत्र को स्वयम्वर के लिये आये नहीं देखा। न वहां स्वयम्वर की कोई बात है और न स्वयम्वर के आरम्भ में होने वाले वेद घोष के लिये ब्राह्मण आये हैं। २३—२४। तब राजा ऋतुपर्ण भीम के पास पहुँच कर बोले कि मैं आप का अभिवादन करने के लिये ऋतुपर्ण आया हूं। २५। राजा भीम आश्चर्य में पड़ गया और विचार करने लगा कि सैकड़ों योजन चल के सैकड़ों गांवों को तै करता हुआ यह इतनी बात के लिये ही नहीं आया, इसने कष्ट तो बहुत उठाया और आगमन का कारण स्वल्प बतलाया। इतने काम के लिये सैकड़ों योजन तक आना असम्भव है। २६—२७। अस्तु अब रात बीतने दो, प्रातःकाल आगमन का कारण पूछेंगे। इस कारण से राजा ने सत्कार किया परन्तु उस को घर जाने की आज्ञा नहीं दी और कहा कि। २८। आप बहुत थक गये हैं इस कारण और ठहरो राजा भीम ने प्रसन्न हो कर ऋतुपर्ण का सत्कार किया और उस आदरणीय सत्कार से ऋतुपर्ण प्रसन्न हुआ॥ २६॥

यहां पर दमयन्ती का भाव स्वयम्वर का नहीं था। स्वयम्वर के बहाने से राजा नल को बुलाना था (२) यहां स्वयम्वर नहीं था। फिर यह कहना कि "यदि विधवा विवाह प्रचलित न होता तो दमयन्ती का दूसरा स्वयम्वर न होता? कितना विचार शून्य है। सुधारक लोग न तो साहित्य को देखें और न साहित्य पर विवेचन करें, आंख पर पट्टी बाँध

कर विधवा विवाह—विधवा विवाह चिल्ला रहे हैं। संसार में कोई भी मनुष्य ऐसा न निकलेगा जो दमयन्ती के दूसरे स्वयम्वर को सिद्ध कर दे। जब दमयन्ती का स्वयम्वर ही नहीं हुआ तो स्वयम्वर के ऊपर से विधवा विवाह का अनुमान करना अक्ल को बाजार में दो कौड़ी पर नीलाम करना नहीं तो और क्या है? पाश्चात्य शिक्षाके पंजेमें पड़ कर झूठ लिखना, झूठ बोलना, संसार को धोखा देना जबर्दस्ती से अपनी मूर्खता से धर्म को कुचल डालना मात्र रोजगार लीडर और सुधारकों का संसार में रह गया है। यदि ये सत्यता और शास्त्र पर पानी फेर कर विधवा विवाह सिद्ध न करें तो फिर इनका पेट कैसे भरे ये लोग तो कमा कर खा भी नहीं सकते, केवल विधवा विवाह की सहायता से पेट भरते हैं। बस सिद्ध होगया कि विधवा विवाह धर्म नहीं है सुधारकों के पेट भरने का अवलम्ब है।

कई एक मनुष्य यह कह देंगे कि यदि विधवा विवाह उस समय चालू नहीं था तो फिर ऋतुपर्ण विधवा विवाह के लालच से दमयन्ती के स्वयम्वर को सुनकर विदर्भ नगर में क्यों आया? ऋतुपर्ण का आना सिद्ध करता है कि उस समय में विधवा विवाह होने की चाल अवश्य थी?

इसके उत्तर में हम यह कह सकते हैं कि इन्होंने उस महा-भारत को तो ताक में रख दिया जिस से यह विधवा विवाह सिद्ध करना चाहते हैं किन्तु फिर इन्होंने झूठे अनुमानका घोड़ा

दौड़ाया है। जब तुम्हारा पहिला अनुमान कि "यदि विधवा विवाहकी चाल नहीं थी तो दमयन्तीका स्वयम्वर क्यों हुआ" महाभारत ने कुचल डाला तो अब—अनुमान की पूंछ कि "यदि विधवा विवाह चालू नहीं था तो ऋतुपर्ण क्यों आया" महाभारत के आगे कितनी देर ठहरेगी।

राजा ऋतुपर्ण को वाहुक के विषय में प्रथम से ही भ्रम है कि यह केवल रथ हाँकने वाला ही नहीं है; संसार का कोई प्रतिष्ठित पुरुष है। इसी को लक्ष्य में रख कर राजा ऋतुपर्ण ने वाहुक का वेतन दश हजार रुपये मासिक रक्खा है जो रथ हांकने वालों के लिये दिया जाना असंभव है।

इससे भिन्न वाहुक के मुख से कुछ अक्षर और भी संदेह जनक निकला करते थे वे ये हैं।

सवै तत्रावसद्राजा वैदर्भीमनुचिन्तयन्।
सायं सायं सदा चेमं श्लोकमेकं जगादह ॥ ९ ॥
क्वनु सा क्षुत्पिपासार्त्ता श्रान्ता शेते तपस्विनी।
स्मरन्ती तस्य मन्दस्य कं वाऽसाऽद्योपतिष्ठति ॥ १०

महाभा० वन० अ० ६७

वार वार वैदर्भी की चिन्ता करता हुआ राजा नल ऋतुपर्ण के यहाँ रहने लगा। नित्य सायंकाल में राजा नल एक श्लोक कहा करता था। उस श्लोक का अर्थ यह है कि-वह भूखी प्यासी थकी हुई कहाँ सोती होगी, उस मन्दको स्मरण करती हुई किन वस्त्रादिकों को पहिनती होगी।

इस श्लोकसे लोगों को कुछ सन्देह उत्पन्न होता था। एक दिन इस श्लोक को सुनकर 'जीवल'ने कहा था कि तुम किसका सोच किया करते हो? तब नल ने अपनी कथा को छिपाया और अपनी ही कथा को एक बनावटी कथा बना कर 'जीवल' को समझा दिया कि एक मनुष्य वन में आधा कपड़ा पहिने हुये स्त्री को छोड़ कर चला गया, उस स्त्री का दुःख मुझे याद आ जाता है।

नल सांयकाल रोज एक श्लोक पढ़ता था उस श्लोक के ऊपर से राजा का सन्देह और भी दृढ़ हो गया जब ऋतुपर्ण के पास स्वयम्बर की चिट्ठी आई तब सन्देह और अधिक हो गया, किन्तु अभी निर्णय नहीं हुआ कि बाहुक सचमुच राजा नल है। इसी सन्देह पर ऋतुपर्ण विदर्भ को चल दिया रास्ते में रथ के वेग को देख कर और भी ऋतुपर्ण को सन्देह बढ़ गया। अन्त में इसकी जाँच करनी चाही कि बाहुक नाम कल्पित करने वाला यह राजा नल है या सचमुच यह बाहुक नामका कोई अन्य पुरुष है इसका ज्ञान करने के लिये नल को गणित विद्या पढ़ाई, जिस विद्या से नल का पाप और कर्कोटक नाग का जहर नल के शरीर से निकल कर वह दिव्य राजा नल दिखलाई देने लगा अब यह बात सिद्ध होगई कि ऋतुपर्ण जो विदर्भ देश को चला था वह स्वयम्बर द्वारा दमयन्ती का विवाह सामने रख कर नहीं चला था किन्तु बाहुक राजा नल है या कोई अन्य है, इस हृदयस्थ सन्देह को दूर करने के

निमित्त ऋतुपर्ण ने भीम के यहां जानेके कष्ट को सहन किया था यह भाव महाभारत के श्लोकों से निकलता है। जो लोग यह भाव निकालते हैं कि वह दमयन्ती का विवाह करने के लिये चला था उनका यह भाव तीन हेतुओं से कल्पित मन गढ़न्त सिद्ध होता है (१) वेद में एक स्त्री को दूसरा पति नहीं लिखा (२) धर्मशास्त्र में भी एक ही पतिकी आज्ञा है (३) ऋतुपर्णसे पूर्व द्विजातियोंमें एक स्त्रीके दो पति कभी हुये ही नहीं फिर ऋतुपर्ण के मन में दमयन्तीका विवाह किस प्रकार आ सकता था? अतएव पत्नी मिलने की आशा से ऋतुपर्ण विदर्भ देश को गया था यह कल्पना सर्वथा मिथ्या है और सन्देह की कल्पना जो हमने पर्वालक के आगे रक्खी है वह महाभारत के श्लोकों से सिद्ध है अब यह पता लग गया कि ऋतुपर्ण क्यों गया अतएव इस आख्यायिका में अब कोई भी अंश ऐसा अवशिष्ट नहीं रहा कि जिस अंश को लेकर हम दमयन्ती का दूसरा विवाह सिद्ध कर उसके ऊपरसे वर्तमान समय में विधवाविवाह का मण्डन कर सकें। आज एक भी सुधारक ऐसा न निकलेगा जो दमयन्ती का दूसरा विवाह सिद्ध करे तोभी बलात्कार दमयन्ती के पवित्र चरित्रसे विधवा विवाह सिद्धकरना यह धर्मनाशकों की नास्तिकता तथा धोका देने का चमकता हुआ उदाहरण है ऐसे धोके बाजों से जनता को सावधान होना चाहिये नहीं तो ये लोग कुछ दिन में ही हिन्दू जाति का सर्वनाश करके हिन्दुओं को ईसाई बना देंगे।

तारा मन्दोदरी ।

कई एक मनुष्यों का कथनहै कि बालिके मरने पर सुग्रीव ने तारा से विधवाविवाह कर लिया और रावण के मरने पर मन्दोदरी के साथ विभीषण ने विवाह किया यदि उस समय में विधवा विवाह चालू न होता तो ये विवाह कैसे हो गये।

मन्दोदरी और तारा का विवाह बतलाने वाले संसार को धोखे में डाल रहे हैं। वाल्मीकीय, अध्यात्म, मार्कण्डेय महारामायण, तुलसीकृत प्रभृति जितनी रामायण उपलब्ध होती हैं किसी रामायण में भी तारा सुग्रीव और मन्दोदरी विभीषण का विवाह नहीं लिखा फिर हम इन विवाहों को किस आधार पर मान लें। कहीं तारा और मन्दोदरी सुधारकों के कान में तो आकर नहीं कह गईं कि हमारा विवाह हुआ था। जब इन का विवाह किसी भी ग्रंथ में नहीं लिखा तो कैसे मान लिया जावेगा? कई एक मनुष्य यह प्रश्न कर बैठेंगे कि जब किसी ग्रन्थ में विवाह नहीं लिखा तो सुधारक इनका विवाह किस आधार पर बतलाते हैं और इसके बतलानेका कारण क्या है?

इसके उत्तरमें हम बड़े जोर से कहेंगे कि मन्दोदरी और तारा के विवाह का कोई भी आधार सुधारकों के पास नहीं है। आधार न होने पर भी जो ये विधवा विवाह बतलाते हैं इसके बतलाने का कारण यह है कि पाप कर्म विधवा विवाह

को धर्म का रूप देकर पूर्व प्रचलित सिद्ध करने के लिये हिन्दुओं को धोखे में फांस ईसाई बनाना चाहते हैं।

वालि ने सुग्रीव की स्त्री रुमा से व्यभिचार किया और सुग्रीव ने वालि की स्त्री तारा से। यह रामायणों में लिखा है विवाह कहीं नहीं लिखा किन्तु विभीषण का मन्दोदरी के साथ न किसी रामायण में विवाह है और न व्यभिचार।

मन्दोदरी।

मन्दोदरी के विषय में वाल्मीकीय रामायण में केवल इतना लिखा है कि रावण के मरने पर मन्दोदरी विभीषण के घर में रही, इतने से न विधवा विवाह सिद्ध है और न व्यभिचार। घर में तो बुआ, माता, बहुएं, लड़कियां सभी रहती हैं। जो लोग घर में रहने से ही विधवा विवाह मानते हैं यह उनकी भूल है। घरमें रहने वाली सभी स्त्रियाँ पुरुषकी पत्नियां नहीं हो जातीं, संभव है सुधारकों के यहां ऐसा होता हो ये लोग घर में रहने वाली समस्त बहू बेटियां को पत्नी बना लेते हों और इसी स्वीयाचरण पद्धति से विभीषण के घर में रहने वाली मन्दोदरी को विभीषण की विवाहिता स्त्री बतलाई हो। यदि सच ही सुधारक ऐसा करते हैं तब तो भयंकर पापी शैतान हैं और इनके इस आचरण को कोई भी धर्म नहीं कह सकता। विभीषण ने जो रावण की किसी पत्नी के साथ ऐसा किया तो वह विवाह नहीं पाप सम्बन्ध कहा जावेगा। हां-केवल तुलसीकृत रामायण से यह सिद्ध होता

है कि विभीषण ने रावण की किसी स्त्री के साथ ऐसा किया किन्तु स्त्री का नाम तुलसीकृत रामायण नहीं लिखती, तुलसीकृत रामायण का विवेचन हम आगे कहेंगे क्यों कि उस प्रमाण में बालि सुग्रीव और विभीषण तीनों की चर्चा है इस कारण हम प्रथम बालि और सुग्रीव के विषय का लेख देते हैं

राम भाषण ।

रामचन्द्र जी ने बालि के जब तीर मारा तब बालि ने भगवान् राम जी को यह कहा कि आपने मुझे क्यों मारा, मैंने आपका कौन कार्य बिगाड़ा था ? इस प्रश्न का उत्तर देते हुये प्रभु राम जी कहते हैं कि—

तदेतत्कारणं पश्य यदर्थं त्वं मया हतः ।
भ्रातुर्वर्तसि भार्यायां त्यक्त्वा धर्मं सनातनम्॥ १८
अस्य त्वं धरमाणस्य सुग्रीवस्य महात्मनः ।
रुमायां वर्तसे कामात्स्नुषायां पापकर्मकृत् ॥ १९

वाल्मीकि० किष्कि० स० १८

बालि ! तुम उस कारण को सुनो जिस कारण से हमने तुमको मारा है । तुम सनातन धर्म को तिलांजलि देकर इस जीवित सुग्रीव की भार्या रुमा से व्यभिचार करते हो जो धर्म शास्त्र की दृष्टि में तेरी पुत्रवधू होती है । तुम पापी हो; पापियों को दण्ड देना हमारा काम है ।

प्रभु राम जी के इस कथन को हिन्दी साहित्य के सम्राट् गोस्वामी तुलसीदास जी लिखते हैं कि—

अनुज वधू भगिनी सुत नारी।
सुन शठ ये कन्या सम चारी॥
इन्हें कुदृष्टि बिलोके जोई।
ताहि वधे कछु पाप न होई॥

अरे शठ! छोटे भाई की स्त्री, बहिन, पुत्र की पत्नी, कन्या ये चारों तुल्य होती हैं, जो मनुष्य इनको कुदृष्टि से देखता है उसके मारने से हत्या का पाप नहीं लगता।

सुग्रीव चरित्र।

तारा के साथ जो सुग्रीव का सम्बन्ध है इस सम्बन्ध को महर्षि वाल्मीकि पार सम्बन्ध लिखते हैं सुनिये—

स्थैर्यमात्ममनः शौचमानृशंस्यमथार्जवम्।
विक्रमश्चैव धैर्यं च सुग्रीवेनोपपद्यते॥ २॥
भ्रातुर्ज्येष्ठस्य यो भार्यां जीवितो महिषीं प्रियाम्।
धर्मेण मातरं यस्तु स्वीकरोति जुगुप्सितः॥ ३॥
कथं स धर्मं जानीते येन भ्रात्रा दुरात्मना।
युद्धायाभिनियुक्तेन विलस्यपिहितं मुखम्॥४॥

वाल्मीकि० किष्किं० स० ५५

सीता की खोज को गये हुये वानर समुद्र तट पर बैठे हुये विचार कर रहे हैं कि अब क्या करें? कुछ वानरों ने कहा अब वापिस चलो, सुग्रीवसे कहो कि सीता का कुछ पता नहीं लगता। इसको सुन कर अंगद ने जो कुछ कहा है वही इन

तीन श्लोकों में है। अंगद कहता है कि आत्मा और मन की स्थिरता, पवित्रता, अनिन्दनीय व्यवहार, कोमलता, पराक्रम और धैर्य ये धर्म के लक्षण सुग्रीव में नहीं हैं, सुग्रीव पापी है तुम आंख से देख रहे हो कि जेठे भाई की रानी प्रिया भार्या जो धर्म से सुग्रीव की माता लगती है उस मेरी माताको मेरे जीवित रहने पर ही माता के साथ में जुगुप्सित (निन्दित) कर्म करना स्वीकार कर लिया। वह धर्म को कैसे पहिचानेगा जो सुग्रीव युद्ध में गये हुये भाई बालि को गुफा में बन्द कर आया था। उस समय भी यही इच्छा थी कि मैं तारा के साथ व्यभिचार करूं। पापी होने के कारण वह सब बन्दरोंको मरवा डालेगा इस कारण लौट कर घर चलने का इरादा मत करो।

रुमा के साथ बालिने जो सम्बन्ध किया उस सम्बन्ध को भगवान् राम ने पाप बतलाया और तारा के साथ जो सुग्रीव ने सम्बन्ध किया उसको अंगद ने मातृ गमन बतलाया। अब रह गई विभीषण की कथा विभीषण ने मन्दोदरी के साथ विवाह या व्यभिचार किया इसका किसी भी रामायण में पता नहीं चलता, जब कोई भी रामायण मन्दोदरी के विवाह या व्यभिचार को नहीं लिखती फिर हम किस आधार पर मन्दोदरी का विवाह बतलावें। तुलसीकृत रामायणने विभीषण के बारे में तो पापाचरण बतलाया है किन्तु मन्दोदरी का नाम तक नहीं लिया गया सुनिये तुलसीकृत रामायण का लेख—

जेहि अघ हत्यो व्याध इव वाली ।
सोई सुकंठ पुनि कीन्ह कुचाली ॥
सोई करतूत विभीषण केरी ।
सपनेहुँ जो न राम हिय हेरी ॥

जिस पापसे व्याध की भांति राम ने वालि को मारा वही पाप कुचाली सुग्रीव ने किया और इसी प्रकार की पापिष्टा करतूत विभीषण की रही, अन्तर इतना रहा कि वालि के दुष्ट कर्म पर राम जी का ध्यान गया और इन दो पापियों के लिये कभी हृदय में विचार नहीं किया।

यहां पर हिन्दी साहित्य के सम्राट् गोस्वामी तुलसीदास जी व्यभिचारी होने के कारण वालि-सुग्रीव और विभीषण तीनोंको पापी लिखते हैं तथा अन्यत्र प्रकरणोंमें वालि का रुमा के साथ एवं सुग्रीव का तारा के साथ व्यभिचार सम्बन्ध बतलाया है किन्तु तुलसी कृत रामायण में मन्दोदरी के साथ विभीषणका व्यभिचार सम्बन्ध कहीं नहीं लिखा और तुलसी-कृत रामायण से भिन्न भी किसी रामायण में नहीं लिखा फिर हम कैसे मानलें कि मन्दोदरी व्यभिचारिणी थी? यह कह सकते हैं कि रावण के बहुत स्त्रियां थीं उन में से किसी के साथ विभीषण ने व्यभिचार किया होगा उसी व्यभिचार से तुलसीदास जी ने विभीषण को पापी लिख दिया। रावण की किस स्त्री के साथ व्यभिचार किया था इस का पता रामा-यणों के टटोलने पर हमको नहीं मिला, संभव है तुलसीदास जी को भी पता न लगा हो अतएव उन्होंने स्त्री का नाम

छोड़ दिया। हम कह सकते हैं कि मन्दोदरी सात्विक प्रकृति की थी अतएव यह भ्रष्ट नहीं हुई क्यों कि सात्विक प्रकृति के नर नारी समस्त कष्टों को सह कर भी धर्म नहीं छोड़ते, रावण की अन्य स्त्रियां राजस और तामसी प्रकृति की थीं किसी तामसी स्त्री के पंजे में पड़ कर विभीषण भ्रष्ट हो गया होगा। जब तक किसी अन्य आर्ष ग्रन्थ में विभीषण के भ्रष्ट होने का सविस्तर प्रकरण न मिले तब तक हम यह कहने को तैयार नहीं हैं कि रावण की फलां स्त्री के साथ विभीषण का पाप सम्बन्ध था।

रामायणों से सिद्ध है कि बालि का रुमा के साथ और सुग्रीव का तारा के साथ एवं विभीषण का रावण की आसुरी प्रकृति वाली स्त्री के साथ व्यभिचार सम्बन्ध था यह पाप था, पाप करने से ये तीनों पापी थे. विवाह सम्बन्ध कहीं नहीं पाया जाता। रामायणों ने यहां पर सुधारकों की नाक जड़ से काटी है इन नककटे सुधारकों से पूछो कि इन के विवाह कहाँ लिखे हैं? किसी सुधारक के पास विवाह का कोई प्रमाण है? दो चार सुधारक नहीं, हजारों नककटे सुधारक रोज माथा फोड़ें किन्तु बालि, सुग्रीव आदि का रुमा तारा आदि स्त्रियोंसे विवाह न मिलेगा, विवाह बतलाने वाले बेईमान सुधारकों को होश में आ जाना चाहिये, दगाबाजी या धोखा देने से काम न चलेगा।

भूतल पर वह कौन मनुष्य पैदा हुआ है कि जो विभीषण

पुनर्भूस्तां गृहीत्वा न प्रजा न धर्मं विन्देत्।

बौधायन।

वाग्दत्ता, मनोदत्ता, अग्निके समीप प्राप्त हुई, सप्तपदी होगई जिसकी, जो भागी गई, जिसको गर्भ रह गया, जिसके संतान हो चुकी इन के पश्चात् पुनर्भू होने वाली सात प्रकार की जो स्त्रियां हैं उन स्त्रियोंमें से किसीको ग्रहण करके प्रजा और धर्म को प्राप्त नहीं होता।

धर्मशास्त्रोंके इन वचनोंमें पुनर्भूको अधम कहा तथा पुनर्भू स्त्रीकी संतानको पिताकी सम्पत्तिमें दायभागका निषेध किया, फिर लिखा कि पुनर्भू से संतान पैदा करने वाला न तो संतान ही का होता है और न उस को धर्मकी प्राप्ति होती है। सिद्ध हो गया कि पुनर्भू के साथ सम्बन्ध जोड़ना धर्म के गले पर छुरी चलाना है। धर्म के परम शत्रु अंग्रेजोंके दत्तक पुत्र हिन्दू सुधारक इन श्लोकों को खूब छिपाते हैं; समझते हैं कि ये श्लोक आगे आ गये तो हमारी कलई खुल जावेगी और हमारे बनावटी जाल में एक भी मनुष्य न फंसेगा किन्तु चोरी कहाँ तक चलेगी, चोरकी माँ कब तक खैर मनावेगी? धर्म शास्त्रों के ज्ञाता जब इन प्रमाणों को विधवा विवाह के नशेबाजों के आगे रख देते हैं तब इन लोगों का चेहरा उतर जाता है और चुपके से ही चल देते हैं यह इन के बनावटी जाल का फल है जो इन को कदम कदम पर नीचा दिखलाता है।

कि मातृ भगिनी पुत्र वधू प्रभृति स्त्रियोंके साथ गमन करने से पापी हो जाता है और उस पापके बदले उसको दण्ड भोगना पड़ता है यह कर्म फल केवल मनुष्य जाति को ही पतित तथा दण्डनीय बनावेगा। यदि घोड़ा मातृ भगिनी ज्येष्ट भाई की स्त्री और पुत्र वधू से भोग कर ले तो उसको पाप नहीं है भाव यह है कि वेदादि सच्छास्त्रों में कहे हुये धर्मों का आचरण न करना एवं शास्त्रों में कहे हुये अधर्म का आचरण करना इन दोनों का फल मनुष्यको भोगना पड़ता है भोग योनिका नहीं।

शास्त्र के इस सिद्धान्त को दृष्टिमें रख वि० महोदय डोरीलाल जी चंदौसी शंका करते हैं कि प्रभु रामचन्द्र जी ने वालि को क्यों मारा? और वालि से यह क्यों कहा कि तुम अपने छोटे भाई सुग्रीव की स्त्री जो आपकी पुत्र वधू है उस के साथ व्यभिचार करते हो अतएव तुम पापी हो एवं पापियों को दण्ड देना हमारा काम है, वालि मनुष्य नहीं है बन्दर है? बन्दर पशु, भोग योनि है, भोग योनि को कर्मफल कैसा?

इसका उत्तर यह है कि वालि साधारण बन्दर नहीं है ये जितने रीछ और वानर हैं सब देवांश हैं। दैवी सृष्टि का प्राणी जब मनुष्यादि योनियों में आता है तब उसका अपना चरित्र पवित्र रखना पड़ता है। भीष्म, सीता, द्रोपदी, विदुर, हनुमान इसके चमकते हुये उदाहरण हैं जब वालि देव योनि से बन्दर योनि में आया और वह इच्छा पूर्वक स्वाभाविक दैवीशक्ति से जब चाहे तब अपने शरीर को मनुष्य शरीर बना सकता है तो

फिर उसको शास्त्राज्ञानुसार अपना चरित्र पवित्र रखना होगा। वालि ने इस नियम को तोड़ डाला अतएव वह पापी और दण्डनीय हुआ। जब वालि शरीर छोड़ देवयोनि को वापिस होगा तब इस के साथ कर्म जा नहीं सकता इस कारण प्रभु राम जी ने वालि के कुकर्म का फल इसी शरीर से भुगता दिया।

पं० नीलकंठ पंजाब रजमट डोगरा कम्पनी छावनी सागर शंका करते हैं कि प्रभु रामचन्द्र जी ने व्यभिचारी वालि को तो दण्ड दे दिया और यही दोष सुग्रीव तथा विभीषण में था, इन दोनों को दण्ड नहीं दिया फिर राम जी मर्यादा पुरुषोत्तम कैसे हुये ?

इस का उत्तर यह है कि पापियों को दण्ड देना प्रभु राम जी का कर्तव्य है और यह धर्म मर्यादा है किन्तु यह भी तो ईश्वरीय मर्यादा है कि—

कोटि विप्र वध लागै जाही।
आये शरण तजौं नहिं ताही॥

करोड़ों ब्राह्मणों के वध का पाप जिस को लगा हो यदि ऐसा पापी भी प्रभु की शरण में चला जावे तो फिर उस को राम जी नहीं त्याग सकते उस की रक्षा ही करेंगे।

यह मर्यादा तुलसीकृत रामायणमें ही नहीं है वरन् गीतामें प्रभु राम जी लिखते हैं कि—

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोचयिष्यामि मा शुच॥

अर्जुन ! तू समस्त धर्मों को छोड़कर मेरी शरणमें आजा, मैं तुझे समस्त पापों से छुड़ा लूँगा पापों का सोच मत कर।

यह मर्यादा रामायण तथा श्रीमद्भगवद्गीता में ही नहीं दिखलाई गई वरन् वेदों में भी है।

ईसाई मुसलमान यहूदी पार्सी जितने भी ईश्वर के मानने वाले धर्म संसार में हैं वे सब इस बात को मानते हैं कि पापी से पापी मनुष्य भी जो ईश्वर की शरण में चला जाता है ईश्वर उस के पापों को क्षमा कर देते हैं अतएव उस मनुष्य का पापजन्य दुःखों से छुटकारा हो जाता है। भारतवर्ष के इतिहास में भी यह बात सिद्ध है कि भगवत्शरण जाने से अजामील सदृश पापियों का उद्धार हो गया।

अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव में वहे हुये सुधारक स्वामी दयानन्द जी ने भी इस बात को माना है कि ईश्वर पापी मनुष्यों के पाप को क्षमा कर देता है इस की पुष्टि में स्वामी दयानन्द जी ने जो कुछ लिखा है वह यह है।

देवकृतस्यैनसोऽवयजनमसि । मनुष्यकृतस्यैनसोऽवयजनमसि । पितृकृतस्यैनसोऽवयजनमसि । आत्मकृतस्यैनसोऽवयजनमसि । एनस एनसोऽवयजनमसि । यच्चाहमेनो विद्वांश्चकार । यच्चाविद्वांस्तस्य सर्वस्यैनसोऽवयजनमसि ॥

यजु० ८ । १३

आर्याभिविनय द्वि० प्र०मं० १६ पृष्ठ १२०

हे सर्व पाप प्रणाशक "देवकृत०" इन्द्रिय विद्वान् और दिव्य गुण युक्त जन के दुःख के नाशक एक ही आप हो अन्य कोई नहीं। एवं मनुष्य (मध्यस्थ जन) पितृ (परमविद्या—युक्त जन) और 'आत्मकृत०' जीव के पापों तथा 'एनस०' पापों से भी बड़े पापों से आपही अवयजन हो अर्थात् सर्व पाप से अलग हो और हम सब मनुष्यों को भी पाप से दूर रखने वाले एक आप ही दयामय पिता हो। हे महान्त विद्य! जो २ मैंने विद्वान् वा अविद्वान् हो के पाप किया हो उन सब पापों का छुड़ाने वाला आपके विना कोई भी इस संसार में हमारा शरण नहीं है इससे हमारे अविद्यादि सब पाप छुड़ा के शीघ्र हम को शुद्ध करो। १६।

ईश्वर की शरण में गये हुये मनुष्य का पापों से छुटकारा हो जाता है जब यह सर्वतंत्र सिद्धान्त है तो फिर प्रभु राम जी की शरण में पहुँचे हुये विभीषण और सुग्रीव को प्रभु ने पाप फल से मुक्त कर दिया तो कौन आश्चर्य होगया? भाव यह निकला कि पाप कर्म के बदले वालि को दण्ड दिया और पापी विभीषण तथा सुग्रीव को शरण में आने से मुक्त कर दिया।

धर्म की आस्था।

सुधारक लोग मन्दोदरी और तारा को तो आगे रखते हैं किन्तु सुलोचना के चरित्र को संसारके सामने नहीं रखते। सुलोचना के पवित्र चरित्र को छिपाने का यही प्रयोजन है कि

कहीं इसके चरित्र से स्त्रियों को पवित्र शिक्षा मिल गई तो वे विधवाविवाह के करने से इन्कार कर देंगी और यदि सुलोचना की कथा मनुष्य सुन बैठेंगे तो फिर इस पातिव्रत धर्म को 'इयंनारी, इस वेद मंत्र से मिला कर वेदोक्त धर्म कह डालेंगे तब भी विधवाविवाह में बाधा पहुँचेंगी। विधवा विवाह रुक जावेगा इस कारण सुलोचना का चरित्र छिपा लिया जाता है।

इस चालबाजी को धूल में मिला देने के लिये आज हम सुलोचना की कथा श्रोताओं को सुनाते हैं। यह सभी लोग जानते हैं कि रावण के प्रिय बलिष्ठ पुत्र मेघनाद की पत्नी का नाम सुलोचना था। यह स्त्री सच्ची पतिव्रता थी।

जिस समय लंका में राम रावण संग्राम होने लगा उस समय इसका पति मेघनाद भी युद्ध के लिये रावण की आज्ञा से रण में उतरा। रामायण में मेघनाद का युद्ध बड़े विस्तार से वर्णित है हम विषयान्तर होने से उसको छोड देंगे। अन्त में लक्ष्मण ने मेघनाद का शीश तीक्ष्ण बाणों से धड़ से अलग कर दिया। मेघनादके मरने पर वानर भालुओं को बड़ी खुशी हुई और मेघनाद का शिर उठाकर प्रभु रामचन्द्र जी के पास पहुँचे. रामचन्द्र जी ने मेघनाद के शीश को अपने पास रख लिया, यह तो राम शिविर की कथा है। अब कुछ कथा रावण के महलों की भी सुनलें। लक्ष्मण ने जब मेघनाद की भुजा में एक बाण मारा तो वह भुजा शरीर से कट कर पक्षी

की भांति उड़ती हुई सुलोचना के महल में आकर गिरी। वह भुजा रुधिर से भरी हुई एक दासी ने देखी और भुजा में आभूषणों को देखा। दासी पहिचान गई यह भुजा मेघनाद की है। दासी ने सुलोचना से कहा, सुलोचना आश्चर्य में पड़ गई। आश्चर्य में पड़ी भुजा के पास आई आकर भुजा को पहिचान लिया। यह निश्चय हो गया कि यह भुजा मेरे प्राण प्रिय पतिकी है। आश्चर्यमें पड़ी हुई सुलोचना कहने लगी कि—

नींद नारि भोजन परि हरई। बारह वर्ष तासु कर मरई ॥
करि विचार मन टेक दै-मैं पति दैवत नारि।
भुज लिख मेटहु दुचितई-सुनि कर दीन्ह पसारि ॥

लखि रुख तासु सखी उठ धाई। सो तेहि खोज खरी ले आई ॥
दीन हाथ मणिमय अंगनाई। लिखत लखन कीरति रुचि राई ॥
नींद नारि भाजन शत कोटी। तजत तासु महिमा अति छोटी ॥
अजित अखण्ड अलख अविनाशी। अतुल अमित घट घट के वासी ॥
प्रगटहिं पालहिं पुनि संहरहीं। त्रिगुणरूप त्रय मूरति धरहीं ॥
जो कालहु कर काल भयंकर। बरणत शेष शारदा शंकर ॥
लीलातनु सुर सेवक हेतू। जासु नाम भवसागर सेतू ॥
मुनि मन पुण्डरीक जाके घर। वचन विवेक विचार बुद्धि वर ॥

कोटि कल्प वर्णत निगम-अगम जासु गुण गाथ।
तम शरीर जड़ जीह बिनु-किमि वर्णत लिखि हाथ ॥

मम शिर गयो दरश रघुराई। तव प्रतीत लगि भुजा पठाई ॥
इह विधि लिखेउ सकल भुज बाता। परी भूमि तव अति बिकलाता ॥

जब सुलोचना को पति मरने का निश्चय होगया तब पति 'सहगमन' का निश्चय कर मेघनाद का शीश लेने के

लिये राम शिविर में पहुँची। मृतक भुजा द्वारा लेख लिखा जाना इस आश्चर्यमयी घटना को सुन कर समस्त उपस्थित भालू वानर सुलोचना के कहने को बनावट समझ बैठे और यह कहा कि यदि तेरे पातिव्रत धर्म में इतनी शक्ति है तो मेघनाद का शिर तेरी प्रार्थना पर हँसे तब हम भुजा लेख को सत्य मानें? रामदल के इस कथन पर सुलोचना ने पति शीश से प्रार्थना की। उस प्रार्थना को आप सुनिये—

जो मन वचन कर्म यह देही। पति देवता न आन सनेही॥
तौ प्रभु सभा बीच शिर बोलै। रहिय छाय तव सुयश अमोलै॥
जो जानति तय यह गति साईं। बोल पठावत पितहि सहाई॥
सुनि तिय वचन हंसेउ तब शीशा। चौंके चकितभालु भट कीशा॥

इस आश्चर्य जनक घटना को देख कर उपस्थित जन वृन्द चकित हो गया। प्रभुराम जी ने मेघनाद का शीश सुलोचना को दे दिया और यह पतिव्रता पति के साथ सती हो गई।

जिस रामायण से मन्दोदरी और तारा का बनावटी विवाह सिद्ध किया जाता है उसी रामायणमें लिखा हुआ सुलोचना का सती होना क्यों नहीं दिखलाया जाता? सुधारकों को यह भय है कि यदि सुलोचना का चरित्र स्त्रियां समझ बैठेंगी तब तो विधवाविवाह ही चालू न होगा। इनको आदर्श प्यारा नहीं है विधवाविवाह चल जाना ही इनका उद्देश्य है। बड़े स्वार्थी हैं, चालबाजियों से संसारको अंधा बना रहे हैं। स्वार्थ बड़ी बुरी बलाय है। स्वार्थ के पीछे पड़े हुये मनुष्य को

धर्म अधर्म और अधर्म धर्म दीखने लगता है। तथा वह विवेक को छोड़कर बनावटी बातों पर उतारू होजाता है। इस विषय में एक हमको दृष्टान्त याद आ गया वह यह है कि—

एक दिन एक नास्तिक बुढ़िया जाड़े के दिनों में स्त्रियों के चक्कर में पड़ कर मन्दिर में चली गई। सब स्त्रियों ने भगवान् के दर्शन किये, इसने भी किये। पुजारी जी चरणामृत देने लगे, सब स्त्रियों ने ले लिया यह चुपचाप बैठी रही। अन्त में पुजारी जी बोले कि बुढ़िया चरणामृत ले ले। बुढ़िया बोली कि बेटा! किस चीज का है? पुजारी ने कहा जल है। इतना सुन कर बुढ़िया बोली कि बेटा मेरे तो दांत दाढ़ नहीं हैं मुझसे न खाया जायगा। पुजारी चुप चाप रह गये। फिर पुजारीने सब स्त्रियों को नैवेद्य दिया बुढ़िया को देने लगे बुढ़िया ने फिर प्रश्न किया कि बेटा! नैवेद्य क्या है? पुजारी जी बोले पेड़ा है। यह सुन कर बुढ़िया बोली बेटा दे दे पपोल के खा जाऊंगी। देखो बुढ़िया की चालाकी? दांत दाढ़ के बिना जल तो चबाया नहीं जाता और पेड़ा खा जाती है। क्या सुधारकों की यह चालाकी बुढ़िया से कुछ कम है कि जो धर्मानुकूल सुलोचना के पवित्र चरित्रका तो नाम नहीं लेते और व्यभिचार को आगे रख विधवा विवाह का जाल बिछाते हैं?

कई एक सज्जन कहते हैं कि सुलोचनाकी कथा गोस्वामी तुलसीदास जी की लिखी नहीं है क्षेपक है। यह तो हम भी

मानते हैं कि सुलोचना की कथा क्षेपक है और वाल्मीकीय रामायण में भी इसका वर्णन नहीं किन्तु क्षेपक कथाभी किसी आधार पर बनती है। क्या कोई मनुष्य यह कह सकताहै कि यह कथा किसी रामायण में नहीं है? जब यह रामायण में है तो फिर तुलसीदास जी ने न कही तब क्या इसकी सत्यता पर कोई सन्देह हो सकता है? हुज्जत बाज सज्जनों को महा रामायण देखनी चाहिये फिर न कह सकेंगे कि यह इतिहास अप्रामाणिक है।

धर्म मर्यादा।

श्रोताओ! जिस समय में सुधारक-तारा और मन्दोदरी का विवाह बतलाते हैं उसी समय प्रभु रामचन्द्र जी ने धर्म मर्यादा दिखलाते हुये लक्ष्मण को आज्ञा दे दी थी कि शूर्पणखा के नाक और कान काट लो। राम की आज्ञा पा शूर्पणखा को वीर लक्ष्मण ने विरूपा कर दिया, । स्त्री के नाक कान काटना वीरता नहीं है, क्यों काटे गये? धर्म की रक्षा के लिये? शूर्पणखा स्त्री धर्म पर आघात कर रही थी; विधवा होकर विवाह करना चाहती थी इस कारण नाक कान काटे गये। उस समय में जब कोई विधवा स्त्री विवाह का नाम ले दे और धर्म दृष्टि से मर्यादा पुरुषोत्तम प्रभु राम जी ऐसी स्त्री को नाक कान काटने का दण्ड दें फिर कौन कह सकता है कि उस समय में विधवा विवाह की चाल थी?

कई एक मनुष्य विधवा विवाह के ठेकेदार यह कह देते

हैं कि शूर्पणखा विधवा नहीं थी। एक दिन भारतवर्ष के प्रसिद्ध भजनोपदेशक पं० भवानीदत्त जी जोशी ने सभा में यह कह दिया कि शूर्पणखा विधवा होकर विवाह चाहती थी इस कारण राम जी ने उसके नाक कान कटवा डाले। इसको सुन कर सैकड़ों मनुष्य चिल्ला उठे-कि झूठ! झूठ!! बिलकुल झूठ!!! हम खूब जानते हैं कि शूर्पणखा विधवा नहीं थी अविवाहिता थी। जोशी जी के नाकमें दम कर दिया लाचार होकर जोशी जी ने फिर इतिहास का मामला रक्खा। मसाले की खुशबू आते ही सुधारकों की नानी मर गई। ये हैं धर्मवक्ता जो पुस्तकों को तो देखते नहीं और झूठ झूठ कह बैठते हैं। जोशी जी ने धर कर डाँटा कि तुम्हारे कैसा बेईमान संसार में अन्य कोई नहीं हो सकता जो ग्रन्थ को बिना देखे गिरोह बांध कर किसी सच्ची बात को झूठी कहते हैं।

हमारी इच्छा है कि इस विषय में हम भी इस बात का विवेचन करदें कि शूर्पणखा विधवा थी। सुनिये-

ततोऽश्मनगरं नाम कालकेयैरधिष्ठितम्।
गत्वातु कालकेयांश्च हत्वा तत्र बलोत्कटान्॥१७
शूर्पणख्याश्च भर्तार-मसिना प्राच्छिनत्तदा।
श्यालं च बलवन्तं च विद्युज्जिह्वं बलोत्कटम्॥१८

वाल्मीकि० रामा०उत्तरका०स० २३

इसके पश्चात् कालकेय नामक दैत्यों से अधिष्ठित अश्म नगर में रावण पहुँचा। वहां पर बड़े बड़े बली कालकेय संज्ञक दैत्योंके साथ रावणका संग्राम हुआ युद्धमें रावणने सब को मार गिराया। उस समय अति बलवान् विद्युज्जिह्व अपने बहनोई शूर्पणखाके पति का रावण ने तलवार से शिर काट डाला।

बस सिद्ध होगया कि त्रेता में विधवा विवाह पाप समझा जाता था फिर यह किस मुख से कहा जाता है कि मन्दोदरी का विभीषण के साथ और तारा का सुग्रीवके साथ विवाह हुआ था। सुलोचना के पातिव्रत धर्म और शूर्पणखा के नाक कान कटनेके कारणको छिपा कर तारा और मन्दोदरी के व्यभिचार से जो विधवा विवाह सिद्ध करते हैं वे संसार को धोखे में डाल रहे हैं। और अपने इस घृणित कार्य से नर जाति में उत्पन्न होकर भी पशु बनने का दावा कर बैठे हैं। भूतल पर एकभी मनुष्य ऐसा न निकलेगा जो मन्दोदरी और तारा के विधवा विवाह को सिद्ध करे, हम उसको एक सहस्र रुपया देने को तैयार हैं। तथा जो बिना ही ग्रन्थ के देखे मन्दोदरी तारा के विधवा विवाह को दुनियां में बकते फिरते हैं ऐसे झूठे जाल साज लोगों के मुख को काला कर देने के लिये हमारा यह कथन जादू कैसा काम कर देगा। अधिक कहने सुनने की कोई आवश्कया नहीं।

सुधारक लोग इतिहास का सत्य निर्णय पबलिक के

आगे नहीं रखते। किन्तु—इतिहास को झूठे सांचे में ढाल हिन्दू धर्म की धर्म मर्यादा बिगाड़ उसकी बेइज्जती करना चाहते हैं। स्वार्थी मनुष्य अपने स्वार्थ के लिये बड़े २ अनर्थ कर डालते हैं। इसकी पुष्टि में आज हम आप लोगों के आगे एक दृष्टान्त रखते हैं। उसको सुनिये—

दृष्टान्त यह है कि—एक राजा के यहां बहुत से खुशामदिये रहा करते थे। खुशामदियों की बहुत दिनों से कोई पट्टी नहीं जमी थी अतएव ये लोग आपस में सम्मति करके कि राजा साहब से कुछ लेना चाहिये, राजा साहब के पास पहुँचे और राजा साहब से बोले कि-राजा साहब और तो आपने दुनियां में आकर सम्पूर्ण ऐश आराम कर लिये, पर कभी आपने इन्द्र की पोशाक भी पहिरी है ? राजा ने कहा नहीं क्या इन्द्र की पोशाक किसी प्रकार मिल सकती है ? खुशामदियों ने कहा हां सरकार, मिल तो सकती है पर उस में खर्च ज्यादा और कठिनता से मिल सकती है। राजा ने कहा इसकी कुछ परवाह नहीं तुम बताओ तो सही कि इन्द्र की पोशाक किस प्रकार मिल सकती है ! खुशामदियों ने कहा महाराज ! दश हजार रुपया हमें खजाने से दिया जाय तो हम लोग जाकर छः मास में ले कर लौट सकते हैं। राजा ने उसी समय दश हजार रुपये का हुक्म करा दिया। खुशामदियों ने दश हजार रुपये तो लाकर घर में रक्खा और छः मास तक इधर उधर बने रहे। जब छः मास व्यतीत

हो गये तो खुशामदिये दो ताला बन्द खाली सन्दूकें लेकर राजा की सभा में आ विराजे राजा साहब इन्हें देख कर बड़े ही प्रसन्न हुये और बोले कि-कहो तुम लोग इन्द्र की पोशाक ले आये। खुशामदियों ने उत्तर दिया कि हाँ सरकार इन्द्र की पोशाक तो ले आये परन्तु महाराज इन्द्र ने यह कह दिया है कि यह पोशाक असलों को दीख जायगी, दोगलों को कभी दीख नहीं सकती। राजा ने कहा "खैर" अब आप उसे खोलिये। खुशामदियों ने कहा कि प्रथम आप अपने पुराने कपड़े सब के सब उतार दीजिये। राजा ने वैसा ही किया। अब खुशामदियों ने खाली सन्दूकें खोल, खाली हाथ सन्दूक में डाल और खाली ही निकाल बोले कि राजा साहब ये लीजिये इन्द्र की धोती, इसे पहिनिये और इस पुरानी धोती को भी उतार दीजिये। राजा पुरानी धोती भी खोल नंगे हो गये। सभा के लोग बोले वाह-वाह क्या ही अच्छी इन्द्र की कामदार धोती है। क्यों कि सब डरते थे कि अगर हमने यह कह दिया कि धोती वोती कुछ नहीं है, राजा साहब आप तो नंगे हैं तो हमारी असलियत में फर्क लग जायगा और दोगले कहे जांयगे। इसी प्रकार खुशाम-दियों ने खाली हाथ डाल फिर कहा "राजा साहब" यह कमीज पहिनिये सबों ने कहा कि क्या ही अच्छी कमीज है फिर खुशामदिये बोले राजा साहब यह वास्कट पहनिये? फिर सभा के लोगों ने वाह वाह की। खुशामदियों ने कहा

कि राजा साहब लीजिये यह पाजामा पहिनिये। फिर सब लोगों ने वाह वाह की। इसी भांति सम्पूर्ण पोशाक पहिना राजा साहब से कहा "अब आप शहर की हवा खा आइये"। राजा साहब फिटन पर सवार हो नंगे शहर घूमने निकले परन्तु शहर में राजा साहब की यह शकल देख लोग कहते थे कि राजा क्या आज पागल हो गया है जो शहर में नंगा घूम रहा है? जब राजा ने सुना कि शहर वाले हमें नंगा कह रहे हैं तो राजा ने कहा कि ये सब दोगले हैं जब राजा साहब शहर घूम आये तो खुशामदियोंने कहा कि-राजा साहब जरा महलों में भी हो आइये ताकि इन्द्र की पोशाक सब रानियाँ भी देख लें। राजा साहब जब महल में पहुँचे तो रानियां राजा को नंगा देख सब इधर उधर भागने लगीं। राजा ने कहा कि तुम सब क्यों भागती हो? रानियों ने कहा महाराज! आज तुम्हें क्या हो गया है जो नंगे फिर रहे हो? राजा बोले कि तुम सब दोगली हो। हम तो इन्द्र की पोशाक पहिरे हुये हैं सो यह असलों को ही दीखती है, दोगलों को नहीं। रानियों ने हाथ जोड़ राजा साहब से प्रार्थना की कि महाराज! आप चाहे और सम्पूर्ण पोशाक इन्द्र की पहिनिये परन्तु धोती अपनी देश ही की रखिये।

यहाँ पर रुपये के लोभ से स्वार्थियों ने राजा पर पागल होने का कलंक लगा दिया। इसी प्रकार स्वार्थी लोग विधवाओंको बेच कर पेट भरने वाले हिन्दुओं के शत्रु टका कमाने

के लिये इतिहास पर विधवाविवाह का कलंक लगा बैठते हैं। इन के इस बनावटी जाल से धार्मिक मनुष्य सर्वदा सावधान रहें।

अर्जुन।

कई एक मन चले स्वार्थी अर्जुन का इतिहास आगे रख विधवाविवाहकी पुष्टि करने लगते हैं इनका कथन है कि अर्जुन ने अपना विधवाविवाह किया था, फिर हम क्यों न करें यह बड़ा मजा है। जो अर्जुन करेगा वही सुधारक करेंगे। और जो युधिष्ठिर करेगा, वह सुधारक न करेंगे। जैसे सुधारक कहते हैं कि अर्जुन ने विधवाविवाह किया था फिर हम क्यों न करें। वैसे ही हम इनसे कहते हैं कि राजा युधिष्ठिर ने विधवाविवाह नहीं किया इस कारण तुम भी मत करो। और इसके चर्चे को छोड़ दो? हमारे इस कथन पर सुधारकों की नानी मर जाती है, जबान बन्द हो कर हाथ पैर कांपने लगते हैं, कोई उत्तर नहीं आता। तो भी ये लोग हमारे प्रश्न को तो हजम कर जाते हैं और अर्जुन के विवाह का अड़ंगा लगाये ही रहते हैं। क्या यही मनुष्य का मनुष्यत्व है? कि दूसरे मनुष्य की बात न सुनना, और बकते ही रहना। अस्तु हम अर्जुन के प्रश्न का उत्तर दिये देते हैं। अर्जुन ने कभी भी किसी विधवा से विवाह नहीं किया बस हो गया उत्तर।

अब इस उत्तर को सिद्ध करने के लिये हम अर्जुन की

उस कथा को पब्लिक के आगे रखते हैं, जिससे सुधारक विधवाविवाह निकाल लेते हैं।

अर्जुनस्यात्मजः श्रीमानिरावान्नाम वीर्यवान्।
सुतायां नागराजस्य जातः पार्थेन धीमता ॥ ७
ऐरावतेन सा दत्ता ह्यनपत्या महात्मना।
पत्यौ हते सुपर्णेन कृपणा दीनचेतना ॥ ८ ॥
भार्यार्थं तांच जग्राह पार्थः कामवशानुगाम्।

महाभ० भीष्म प० अ० ६०

नागराज की कन्या से अर्जुन का इरावान् नामक एक श्रीमान् वीर्यवान् पुत्र उत्पन्न हुआ। सुपर्ण (गरुड़) ने इस कन्या के पति को मार डाला था। नागराज महात्मा ऐरावत ने इस दुःखिया विषादपूर्ण पुत्र हीना कन्या को अर्जुन के हाथ में दान दे दिया अर्जुन ने विवाह की इच्छुक इस कन्या का पाणिग्रहण किया।

जैसे शराब के नशे में शराबी का ध्यान चने पर टूट पड़ता है, जिस प्रकार भंगड़ी का मन भंग के नशे में मिठाई पर धंस बैठता है। इसी प्रकार सुधारकपनके नशेमें चोरी और बेइमानी में मन धंस बैठता है। सुधारकों का मुख्य कर्तव्य यही हो गया है कि संसारको धोखा दे दो, चोरी कर लो और बेईमानी से विधवाविवाह सिद्ध कर दो। यहां पर ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने भी ऐसा ही किया है। इस प्रकरण में आठ श्लोक हैं

विद्यासागर जी ने साढ़े पाँच की चोरी कर के अढ़ाई श्लोक पबलिकके आगे रक्खा, चुराये हुये श्लोकों को भी सुन लीजिये।

एवमेष समुत्पन्नः परक्षेत्रेऽर्जुनात्मजः । ९
स नागलोके संवृद्धो मात्रा च परिरक्षितः ।
पितृव्येन परित्यक्तः पार्थद्वेषाद्दुरात्मनः ॥ १०
इन्द्रलोकं जगामाशु श्रुत्वा तत्रार्जुनंगतम् । ११
न्यवेदयत चात्मान-मर्जुनस्य महात्मनः ।
इरावानस्मि भद्रं ते पुत्रश्चाहं तव प्रभो ॥ १३
मातुः समागमो यस्तु तत्सर्वं प्रत्यवेदयत् ।
तच्च सर्वं यथावृत्त-मनु संस्मार पाण्डवः ॥ १४
युद्धकाले त्वयास्माकं साह्यं देयमिति प्रभो ।
बाढमित्येवमुक्त्वा च युद्धकाल इहागतः ॥१७

भीष्म प० अ० ९०

इन समस्त श्लोकोंका सीधा सीधा अर्थ यह है कि इरावान् नामक अर्जुन का पुत्र बलिष्ठ नागराज की कन्या में अर्जुन से उत्पन्न हुआ ।७। सन्तति हीन महात्मा ऐरावतने इस कन्याको विवाह दिया था, इस का वह पति जब गरुड़ने मार डाला तो यह दीन चित्त वाली होगई। ८ ।उस कामवशा नागराजकी कन्या को अर्जुन ने ग्रहण कर लिया। इस प्रकार यह इरावान अर्जुन से परक्षेत्र (दूसरे की स्त्री) में उत्पन्न हुआ। ९।

वह माता से संरक्षित होकर नाग लोक में बढ़ते बढ़ते युवा हो गया, अर्जुन से उसके चाचा का इसी कारण से द्वेष हो-गया था अतएव चाचा ने लड़के को त्याग दिया। १०। उसने सुना कि अर्जुन इन्द्रलोक को गया है इसको सुनकर वह अति शीघ्र इन्द्रलोक में पहुँचा। ११। उसने अपने शरीर को अर्जुन के आगे अर्पण कर निवेदन किया कि इरावान मेरा नाम है और मैं आपका पुत्र हूँ। १३। मेरी माता के साथ आपका समागम हुआ था यह भी बतलाया, अर्जुन ने स्मरण किया तब वह समस्त वृतान्त अर्जुन को याद आ गया। १४। अर्जुन ने कहा अब हमारा और कौरवों का युद्ध होगा उसमें तुम हमको सहायता दो, उसने स्वीकार किया और युद्धावसर पर अर्जुन की सहायता के लिये वह कुरुक्षेत्र में आया। १७।

धोखा।

श्रोत्रिय वर्ग! आप विद्यासागर जी की चोरी तो समझ चुके। अब विद्यासागर जी अपनी चालबाजी का जाल विछाकर संसार को उसमें फांस विधवाविवाह जारी करना चाहते हैं, उस धोखे को भी समझने की कृपा करें। मूल श्लोक तो कहते हैं कि उस कन्या को ऐरावत ने विवाह दिया था उसका पति युद्ध में गरुड ने मार डाला, विद्यासागर जी इस विवाह को पहिले पति से उखेड़ अर्जुन के गले में बांधते हैं यह स्पष्ट धोखा दे रहे हैं। श्लोकों में पहले विवाह होना और बाद में पति मरना है, विद्यासागर जी

संसार को धोखा देने के लिये पहिले पति का मरना और फिर अर्जुन के साथ विवाह करना लिखते हैं जिसकी सत्यता या संगति दिखलाने वाला कोई भी सुधारक भूतल पर पैदा नहीं हुआ यदि कोई हो तो फिर लेखनी उठावे।

श्लोकों का भाव यह है कि नागराज की कन्या विधवा थी और 'कामवशानुगाम्' यह कामातुर थी अर्जुन के पास पहुँची, अर्जुन उससे अपने शरीर को नहीं बचा सका उसको 'भार्यार्थं' जग्राह' उस समय अपनी स्त्री बना लिया भोग किया लड़का उत्पन्न हुआ किन्तु वह लड़का 'औरस' न होकर 'क्षेत्रज' हुआ, विवाहिता स्त्री का लड़का 'औरस' होता है। इरावान् औरस् नहीं था क्षेत्रज था। श्लोक लिखता है कि "परक्षेत्रेऽर्जुनात्मजः" 'दूसरे की स्त्री में उत्पन्न हुआ अर्जुन का पुत्र'। जब इस लड़के को दूसरे की स्त्री का लड़का बतलाय' फिर नागराज की कन्या के साथ अर्जुन का विवाह होना धूल में मिल गया। अर्जुन ने जो निन्दनीय पद्धति से लड़का उत्पन्न किया इस कारण नागराज की कन्या के देवर की अर्जुन के साथ शत्रुता हो गई और उसने इस इरावान को निकाल दिया यह मूल श्लोक कह रहे हैं। लड़का दूसरे की स्त्री में पैदा हुआ और लड़के के चाचा ने लड़के का त्याग दिया मूल श्लोक में इन कही हुई घटनाओं को दबा देने के लिये विद्यासागर ने साढ़े पाँच श्लोक की चोरी की अर्जुन से वैर होना, लड़के को त्याग देना ये दो घटना इरावान् को निन्दनीय सिद्ध कर रही हैं और 'परक्षेत्रे' लड़के का

दूसरे की स्त्री में पैदा होना जो मूल में कहा गया है वह सिद्ध कर रहा है कि नागराज की कन्या के साथ अर्जुन का विवाह नहीं हुआ था। इरावान् हरामी संतान थी इस को धर्म मान कर जो सुधारक स्त्रियों को हरामी पिल्ले पैदा करने सिखलाते हैं इस को कोई भी मनुष्य धर्म नहीं कहेगा।

श्रोत्रिय वर्ग! न तो दमयन्ती का दूसरा स्वयम्बर हुआ और न मन्दोदरी तथा ताराका पुनः पाणिग्रहण एवं न अर्जुनके साथ नाग कन्याका विधवा विवाहही,सुधारक लोग अनभिज्ञ लोगों को इन सब के विधवा विवाह बतला कर धोखा दे रहे हैं यह बहुत बुरा है किन्तु करें भी क्या, अंग्रेजी पढे लिखे मनुष्यों के लिये कोई रोजगार तो दृष्टिगोचर ही नहीं होता फिर ये अपना गुजारा कैसे करें? पेट भरनेके लिये सुधारकों को धोखा देकर विधवा विवाह को शास्त्र सिद्ध कहना पड़ता है, भोली जनता इस को तो समझती नहीं वह यही समझ बैठती है कि वास्तव में विधवा विवाह पहिले से होते आये हैं। भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है कि—

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसंगिनाम्।

कर्म करने वाले जो अज्ञ पुरुष हैं उन की बुद्धि में कोई चक्कर न डाला जावे। हम सुधारकों से यही निवेदन करेंगे कि आप लोग कोई निन्द्य से निन्द्य कार्य कर अपना पेट भरलें किन्तु पेट भरने के लिये अज्ञ मनुष्यों को बनावटी विधवा विवाह के धोखेमें न फासें। प्रिय श्रोताओ! कोई मनुष्य आज

तक ऐसा पैदा नहीं हुआ जो पुराण इतिहाससे विधवाविवाह को धर्म और प्राचीन प्रणाली सिद्ध करदे एवं न आगे को हो सकता है। रही सुधारकों की बात, ये कोई विद्वान् नहीं हैं, ग्रंथ चुंबक हैं? जैसे कैसे प्रकरण टटोल उन के बहाने से विधवा विवाह की प्राचीनता सिद्ध कर रहे हैं क्यों कि इस कार्यसे आज सहस्रों मनुष्योंकी रोटियां चलती हैं। इतिहास में एक भी विधवा विवाह नहीं, आप सुधारकों के धोखे से बचें और धर्म की रक्षा करें यही आप लोगों से मेरी अंतिम प्रार्थना है। अब समय हो चुका मैं अपने व्याख्यान को यहां पर ही समाप्त करता हूं। एक बार बोलिये श्रीसनातन धर्म की जय।

कालूराम शास्त्री।

॥ श्रीहरिः ॥

पुराण चर्चा

आरम्भे नमनमभीष्टदं यदीयं ।
विश्वानि प्रथयति मङ्गलानि लोके ।
ब्रह्माद्यैर्नमितमनोज्ञ पादपद्मं,
देवेन्द्रं तमिह गजाननं नमामः । १

स शंखचक्रं स किरीट कुण्डलं,
सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम् ।
सहारवक्षस्थलशोभिकौस्तुभं,
नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ॥ २

काम क्रोध मद लोभ की, लगी हिये में आग ।
नारायण वैराग्य अट, सहित ज्ञान गयो भाग ॥ ३ ॥
कामिहि नारि पियारि जिमि, लोभी के प्रिय दाम ।
ऐसे है कब लागि हो, तुलसी के मन राम ॥ ४ ॥

प्रबल प्रताप सभापति ! पूजनीय विद्वन्मण्डलि ! आदरणीय सगृहस्थ वृन्द !!! श्रुति और स्मृति से जब विधवा विवाह सिद्ध नहीं होता तब विधवा विवाह के भक्त एक दौड़ इतिहास पर लगाते हैं। संस्कृत के प्राचीन इतिहास में न

तो किसी स्थान में विधवा विवाह की आज्ञा है और नहीं किसी स्त्री का विधवा विवाह मिलता है, तो भी विधवा विवाह के प्रेमी इतिहास को आगे रख इतिहास से विधवा विवाह की सिद्धि का मिथ्या साहस करते हैं। ये लोग स्वतः जानते हैं कि इतिहास में विधवा विवाह नहीं, फिर भी कुछ का कुछ अर्थ करके विधवा विवाह दिखलाते हैं। इस प्रकार के अनर्थ करनेका इनका अभिप्राय यह है कि जो लोग संस्कृत साहित्य नहीं जानते, हमारे बनावटी अर्थ से उनके अन्तः-करणमें तो विधवाविवाह बैठ ही जावेगा और धीरे धीरे धर्म से घृणा होकर भारतवर्ष योरोपीय सांचेमें ढल जावेगा।

दिव्या देवी।

जब ये इतिहास से विधवा विवाह दिखलाने लगते हैं तब सबसे प्रथम दिव्यादेवी के २१ विवाह बतलाते हैं। हम इन से पूछते हैं कि दिव्यादेवी के आचरण से और धर्म से क्या सम्बन्ध है? यह दिव्यादेवी कौन थी? क्या दिव्यादेवी मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् की अवतार थी? या कोई ऋषि मुनि या आचार्य थी? यह थी कौन? *सनातन धर्म की अम्मा या* काकी? दादी कि बुआ? जो इस का आचरण धर्म बन जावे, होगी कोई पहिले जन्म की रंडी। फिर इससे और धर्म से क्या सम्बन्ध? क्या यह धर्म का ठेका ले बैठी थी जो इसके चरित्र को हम धर्म मान लें? फिर दिव्यादेवी के २१ विवाहों को कौन कह सकता है, इसका तो एक भी विवाह नहीं हुआ

था। जिस दिव्यादेवी का एक भी विवाह न हुआ हो उस के २१ विवाह बतला देना क्या किंचित् भी पाप नहीं है? हम को कहना पड़ता है कि विधवा विवाह वाले झूठ बोलने, धोका देने और अत्याचार करने पर कूद पड़े हैं, इनके घृणित आचारों से इन को और इन के सहायकों को लज्जा नहीं आती, यही शोक है कि दिव्यादेवी की कथा सुनिये और फिर विचारिये कि इस के इक्कीस विवाह हुये या अविवाहिता ही मरी।

पद्मपुराण के भूमिखण्ड में यह कथा आई है। इस खण्ड में विष्णु और वेन का संवाद पहिले से चल रहा है। वेन ने विष्णु भगवान् से गुरुतीर्थ का स्वरूप पूछा है तब भगवान् विष्णु ने कई श्लोकों में गुरु के माहात्म्य का वर्णन करते हुये कहा कि इस सम्बन्ध में एक पुराना इतिहास च्यवन मुनि का सुना जाता है। भार्गव के कुल में एक च्यवन ऋषि हुये उन्हें एक बार यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि मैं कैसे ज्ञानी हो सकूंगा। बहुत विचार करने पर उन की समझ में आया कि घर बार छोड़ कर चलदूं और तीर्थ यात्रा करूं तो ज्ञान की प्राप्ति होगी, ऐसा विचार मन में आते ही उक्त महात्मा चल दिये और कलिकलुष नाशिनी भगवती भागीरथी तथा अन्यान्य नदियों के पवित्र तीर्थों पर घूमने लगे। तीर्थ यात्रा करने से उनका आत्मा पवित्र हुआ। इसी तरह नर्मदा के दक्षिणी किनारे पर अमर कण्टक में आकर शिवलिङ्ग के दर्शन किये इसके बाद ओंकारेश्वर में आये, वहां एक बरगद

का पेड़ था श्रम को दूर करने वाली उस बरगद की शीतल छाया में बैठ कर उन्हों ने पक्षियों की आवाज़ सुनी। उस पेड़ पर एक शुक (सुआ) कुंजल नाम वाला अपनी पत्नी सहित रहताथा, उसके चार पुत्र थे जिनके नाम क्रमसे उज्ज्वल समुज्ज्वल, विज्ज्वल और कपिञ्जल थे। ये चारों पुत्र बड़े धर्मात्मा तथा पिता माता के भक्त थे वे चारों शुक पुत्र पर्वतों के सघन कुञ्जों में घूम घूम कर अपने आहारोपयोगी फलों को खाया करते थे और कुछ फल अपने माता पिता के लिये भी ले आया करते थे एक दिन सायंकाल के समय वे चारों शुकपुत्र लौटकर आये तो उन्होंने अपने माता पिता को फलों से तृप्त किया। इसके बाद वे सब पिता पुत्र आपस में बैठ कर कथा कहने लगे। पिता कुञ्जल ने अपने पुत्र उज्वल के पूछा कि आज तुम कहाँ गये थे और वहां तुमने क्या अपूर्व बात देखी-तब पिता को प्रणाम कर के उज्ज्वल मनोहर कथा कहने लगा।

उज्ज्वल उवाच।

प्लक्षद्वीपं महाभाग! नित्यमेव व्रजाम्यहम् ॥४८॥
महता उद्यमेनापि आहारार्थं महामते।
प्लक्षे द्वीपे महाराज! सन्ति देशा अनेकशः ॥५०
पर्वताः सरिदुद्यान—वनानि च सरांसि च।
ग्रामाश्च पत्तनाश्चान्ये सुप्रजाभिः प्रमोदिताः ॥५१॥

सदा सुखेन सन्तुष्टा लोकाहृष्टा वसन्तिते।
दान पुण्यजपोपेताः—श्रद्धाभावसमन्विताः ॥५२॥
प्लक्षद्वीपे महाराज ! आसीत्पुण्यमतिः सदा।
दिवोदासस्तु धर्मात्मा- तत्सुतासीदनूपमा ॥५३
गुणरूपसमायुक्ता - सुशीला चारुमङ्गला ।
दिव्यादेवीति विख्याता- रूपेणाप्रतिमा भुवि॥५४
पित्रा विलोकिता सा तु - रूपतारुण्यमङ्गला ।
प्रथमे वयसि सा च - वर्तते चारुमङ्गला ॥ ५५
स तां दृष्ट्वा दिवोदासो दिव्यादेवीं सुतां तदा।
कस्मै प्रदीयते कन्या-सुवराय महात्मने ॥५६
इति चिन्तापरो भूत्वा-समाहूय नरोत्तमः ।
रूपदेशस्य राजानं-समालोक्य महीपतिः ॥५७
चित्रसेनं महात्मानं-समाहूय नरोत्तमः ।
कन्या ददौ महात्माऽसौ चित्रसेनाय धीमते॥५८
तस्या विवाहकाले तु सम्प्राप्ते समये नृप ।
मृतोऽसौ चित्रसेनस्तु कालधर्मेण वै किल॥५९
दिवोदासस्तु धर्मात्मा चिन्तयामास भूपतिः ।
सुब्राह्मणान्समाहूय पप्रच्छ नृपनन्दनः ॥६०

अस्या विवाहकाले तु चित्रसेनो दिवंगतः।
अस्यास्तु कीदृशं कर्म-भविष्यति वदन्तु मे ॥ ६१

उज्ज्वल बोला - हे महाभाग पितः! मैं नित्य ही प्लक्षद्वीप में जाता हूँ; हे महामते ! बड़े उद्यम के साथ भोजन की इच्छा से मैं जाता हूँ उस द्वीप में अनेक देश हैं। ५०। पर्वत, नदियां बाग - बगीचा, जंगल और तालाब, ग्राम और शहर सब उस प्लक्ष द्वीप में हैं, प्रजा प्रसन्न है। ५१। सदा सुखी रहती हुई प्रजा प्रसन्नता पूर्वक वहां निवास करती है, दान जप और पुण्य करने वाले वहां के लोग हैं तथा श्रद्धा के भाव से युक्त हैं। ५२। हे महाराज ! उसी प्लक्षद्वीप में सदा पवित्र मतिवाला सत्य धर्म में युक्त दिवोदास नाम वाला राजा रहताथा उसकी कन्या अनुपम थी। ५३। गुणों और रूप से युक्त अच्छे शील-वाली कल्याणकारिणी, पृथ्वी में अद्वितीय रूप रखने वाली उस कन्या का नाम दिव्यादेवी था। ५४। पिता ने देखा कि यह रूप और तारुण्य से युक्त है; विवाह की अवस्था इसकी हो गई है। ५५। वह राजा दिवोदास दिव्यादेवी को देख कर चिन्ता करने लगा कि इस कन्या को किसे देना चाहिये।५६। ऐसा विचार कर रूप देश के राजा को बुला कर। ५७। बुद्धिमान् चित्रसेन को अपनी कन्या देताहुआ। ५८। (ध्यान रहे कि यहां ददौ, क्रिया से मतलब केवल वाग्दान करने से है क्योंकि अभी तक विवाह नहीं हुआ है) उस दिव्यादेवी

के विवाह का समय प्राप्त होने पर काल के प्रभाव से वह राजा चित्रसेन मर गया। ५६। तब धर्मात्मा राजा दिवोदास चिन्ता कर विद्वान् ब्राह्मणों को बुला कर पूछने लगा। ६०। इस कन्या का विवाह काल उपस्थित होते ही चित्रसेन मर गया अब क्या कार्य होना चाहिये सो आप कहें। ६१।

ब्राह्मणा ऊचुः।

विवाहेद्दृश्यतेराजन् - कन्यायास्तु विधनातः।
पतिर्मृत्युं प्रयात्यस्या-नोचेत्सङ्गं करोति च॥६२
महाधिव्याधिना ग्रस्तस्त्यागं कृत्वा प्रयाति च।
प्रव्राजको भवेद्राजन्! धर्मशास्त्रेषु दृश्यते॥६३
अनुद्वाहितायाः कन्याया-उद्वाहः क्रियते बुधैः।
न स्याद्रजस्वला यावदन्यः पतिर्विधीयते॥ ६४
विवाहन्तु विधानेन-पिता कुर्यान्न संशयः।
एवं राजन्समादिष्टं-धर्मशास्त्रं बुधैर्जनैः॥ ६५
विवाहः क्रियतामस्या-इत्यूचुस्ते द्विजोत्तमाः।
दिवोदासस्तु धर्मात्मा-द्विजवाक्यप्रणोदितः॥६६
विवाहार्थं महाराज! उद्यमं कृतवान्नृप।
पुनर्दत्ता तु दानेन-दिव्यादेवी द्विजोत्तम!॥ ६७
रूपसेनाय पुण्याय-तस्मै राज्ञे महात्मने।

मृत्युधर्मं गतो राजा विवाहे तु महीपतिः ॥ ६८

यदा यदा महाभाग ! दिव्यादेव्याश्च भूपतिः।
भर्त्ता च म्रियते काले प्राप्ते लग्नस्य सर्वदा ॥६९
एकविंशति भर्त्तारः-काले काले मृताः पितः।
ततो राजा महादुःखी-सञ्जातः ख्यातविक्रमः ॥७०
समालोच्य समाहूय-समामन्त्र्य स मन्त्रिभिः।
स्वयंवरे महाबुद्धि-चकार पृथिवीपतिः ॥ ७१ ॥
प्लक्षद्वीपस्य राजानः-समाहूता महात्मना।
स्वयंवरार्थमाहूतास्तथा ते धर्मतत्पराः ॥ ७२ ॥
तस्यास्तु रूपसंमुग्धा-राजानो मृत्युनोदिताः।
संग्रामं चक्रिरे मूढास्ते मृताः समराङ्गणे ॥ ७३ ॥
एवं तातक्षयो जातः-क्षत्रियाणां महात्मनाम्।
दिव्यादेवी सुदुःखार्त्ता-गता सा वनकन्दरम् ॥७४॥
रुरोद करुणां बाला-दिव्यादेवी मनस्विनी।
एवं तात मया दृष्टमपूर्वं तत्र वै तदा ॥ ७५ ॥
तन्मे सुविस्तरं तात ! तस्याः कथय कारणम्।

ब्राह्मण बोले कि हे राजन् ! कन्या का विवाह विधान से देखा जाता है (अर्थात् विवाह की विधि पूरी हो जाने पर ही विवाह पूर्ण माना जाता है जब तक विवाह विधि पूर्ण न हुई

हो तब तक) यदि वह भावी पति मर जावे और उसके साथ सङ्ग न किया हो ॥ ६२ ॥ बड़ी किसी आधि या व्याधिसे ग्रस्त हो अथवा त्याग कर चला जावे या संन्यासी हो जावे तो धर्म शास्त्रों में विवाह देखा जाता है ॥ ६३ ॥ ऐसी अनुढाहिता कन्या का विवाह विद्वान् लोग करते हैं, जब तक रजस्वला न हो तभी तक विवाह कर देना चाहिये ॥ ६४ ॥ (यहां अनुढाहिता पद साफ पड़ा हुआ है, इस से स्पष्ट सिद्ध है जिस का विवाह पूर्ण न हुआ हो उसी कन्या के विवाह का विधान है) पर कन्या का विवाह पिता विधानसे करे, इसमें संदेह नहीं। विद्वान् मनुष्यों ने ऐसा धर्मशास्त्र में आदेश किया है ॥ ६५ ॥ ब्राह्मणों ने कहा कि इस का विवाह करना चाहिये। धर्मात्मा दिवोदास ब्राह्मणों के वचनों से प्रेरित हो कर ॥ ६६ ॥ दिव्या देवी के विवाह का पूर्ण आयोजन कर रूपसेन नामक पुण्यात्मा राजा को दिव्या देवीका दान देने लगा, पर वह राजा भी विवाह काल उपस्थित होते ही मृत्यु को प्राप्त हो गया ॥ ६७ ॥ इसी प्रकार जब जब दिव्या देवीका विवाह करना राजा प्रारंभ करता तब तब उसके भावी पति मरते गये ॥६६॥ इसी प्रकार २१ पति समय समय पर मरते गये तब प्रसिद्ध पराक्रम वाला वह राजा बड़ा दुःखी हुआ ॥ ७० ॥ इस के बाद मंत्रियों को बुला कर और उन से सलाह करके राजा ने दिव्यादेवी का स्वयंवर करना निश्चित किया ॥ ७१ ॥ उस महात्मा दिवोदास ने प्लक्ष द्वीप के राजाओं को बुलवाया और वे सब वहां आये

॥ ७२ ॥ उस दिव्या देवी के रूप से मोहित हो कर वे राजा मृत्युसे प्रेरित हुये परस्पर में संग्राम करने लगे और सब मारे गये ॥७३॥ इस प्रकारसे सब राजाओंका क्षय (नाश) हो गया और दुःखित हो कर दिव्या देवी बन में चली गई ॥ ७४ ॥ बन जाकर वहां वह रोने लगी, इस प्रकार से यह अपूर्व बात मैंने देखी है पितः! आप इस का कारण कहिये ॥ ७५ ॥

कुञ्जल उवाच।

तस्यास्तु चेष्टितं वत्स! दिव्यादेव्या वदाम्यहम्।
पूर्वजन्मकृतं सर्व-तन्मे निगदतः शृणु ॥ १ ॥
अस्ति वाराणसी पुण्या-नगरी पापनाशिनी।
तस्यामास्ते महाप्राज्ञः-सुवीरो नाम नामतः ॥२
वैश्यजात्यां समुत्पन्नो-धनधान्यसमाकुलः।
तस्य भार्या महाप्राज्ञ! चित्रानाम सुविश्रुता ॥३
कुलाचारं परित्यज्य-अन्याचारेण वर्तते।
न मन्यते हि भर्त्तारं-स्वैरवृत्या प्रवर्तते ॥ ४
धर्मपुण्यविहीना तु-पापमेव समाचरेत्।
भर्त्तारं कुत्सिते नित्यं-नित्यञ्च कलहप्रिया ॥ ५
नित्यं परगृहे वासो-भ्रमते सा गृहे गृहे।
परच्छिद्रं सदा पश्येत्सदा दुष्टा च प्राणिषु ॥ ६

साधुनिन्दापरादुष्टा-सदा हास्यकरा च सा ।
अनाचारां महापापां-ज्ञात्वा वीरेण निन्दिता ॥ ७
स तां त्यक्त्वा महाप्राज्ञ ! उपयेमे महामतिः ।
अन्यवैश्यस्य वै कन्यां-तया सह प्रवर्तते ॥ ८
धर्माचारेण पुण्यात्मा-सत्यधर्ममतिः सदाः ।
निरस्ता तेन सा छिन्ना-प्रचण्डा भ्रमते महीम् ॥ ९
दुष्टानां संगतिं प्राप्ता-नराणां पापिनां सदा ।
दूतीकर्म चकाराथ-सा तेषां पापनिश्चया ॥ १०
गृहभंगं चकाराथ-साधूनां पापकारिणी ।
साध्वीं नारीं समाहूय-पापवाक्यैः प्रलोभयेत् ॥ ११
धर्मभंगं चकराथ-वाक्यैः प्रत्ययकारकैः ।
साधूनां सा स्त्रियं छिन्ना-अन्यस्मै प्रतिपादयेत् ॥ १२
एवं गृहशतं भग्नं छिन्नया पापनिश्चयात् ।
संग्रामं सा महादुष्टाऽकारयत्पतिपुत्रकैः ॥ १३ ॥
मनांसि चालयेत्पापा-पुरुषाणां स्त्रियः प्रति ।
अकारयच्च संग्रामं-यमग्रामविवर्धनम् ॥ १४॥
एवं गृहशतं भंक्त्वा-पश्चात्सा निधनं गता ।
शासिता यमराजेन-बहुदण्डः सुनन्दन ! ॥ १५॥

अभोजयत्पुनरकान्-रौरवांस्तरणोःसुतः ।
पाचिता रौरवे चित्रा-चित्राः पीडाः प्रदर्शिताः॥१७
यादृशं क्रियते कर्म-तादृशं परिभुज्यते ।
तथा गृहशतं भग्नं-चित्रया पापनिश्चयात् ॥१७॥
तत्तत्कर्म विपाकोऽयं-तया भुक्तो द्विजोत्तम ।
तस्माद् गृहशतं भग्नं-तस्माद्दुःखं प्रभुञ्जति॥१८
विवाहसमये प्राप्ते-दैवञ्च पाकताङ्कतम् ।
प्राप्ते विवाहसमये भर्त्ता मृत्युं प्रयाति च ॥१८
यथा गृहशतं भग्नं-तथा वरशतं मृतम् ।
स्वयम्वरे तदा वत्स ! विवाहे चैकविंशतिः ॥२०
दिव्यादेव्या समाख्यातं-यथा मे पृच्छितं त्वया ।
एतत्ते सर्वमाख्यातं-तस्याः पूर्वविचेष्टितम् ॥२१॥

इन श्लोकों का संक्षेप से अभिप्राय यह है कि जब उज्ज्वल ने अपने पिता से दिव्यादेवी के इस दुर्भाग्य का कारण पूछा तब कुञ्जल कहने लगा कि हे पुत्र ! मैं उस दिव्यादेवी के पूर्वजन्म के किये कर्मों का पूर्ण वृत्तान्त कहता हूँ तुम ध्यान से सुनो। १। वाराणसी नाम की एक परम पवित्र नगरी है उसमें अत्यन्त बुद्धिमान् सुवीर नाम वैश्य रहता था। २। वह वैश्य खूब धनवान् था उसकी स्त्री का नाम चित्रा था। ३। कुलाचार को छोड़ कर वह स्त्री

अनाचार से रहती थी, पति की आज्ञा को न मान कर मन माना काम करती थी।४। वह नित्य पाप करती, नित्य पति की निन्दा करती और उसे लड़ाई प्यारी लगती थी।५। हमेशा दूसरे के घर में रहती तथा घर घर घूमती एवं दूसरों के छिद्रों को देखा करती थी।६। अच्छे आदमियों की निन्दा करती और हमेशा हंसती रहती थी उसकी यह पाप लीला देख कर पति ने उसकी भर्त्सना की।७। उस वैश्य ने उसका त्याग कर दिया और एक वैश्य की कन्या से विवाह कर लिया।८। वह वैश्य धर्माचरण से अपना समय व्यतीत करने लगा। चित्रा अपने पति से परित्यक्त होकर पृथ्वी पर घूमने लगी।९। दुष्ट पापी मनुष्यों की संगति पाकर वह दूतीपन का काम करने लगी।१०। वह दुष्टा-सज्जनों के घरों को बिगाड़ने लगी, पतिव्रता स्त्रियों को पाप की बातें सुनाने लगी।११। विश्वास दिलाकर उनका सतीत्व नष्ट कराने लगी। सज्जन गृहस्थों की स्त्रियों को वह पर पुरुषों से मिलाने लगी।१२। इस प्रकार उस चित्रा ने सौ घर बिगाड़ दिये और उनके पति पुत्रों से संग्राम करा दिया।१३। वह दुष्टा ऐसे काम करने लगी जिस से पुरुषों के मन स्त्रियों की तरफ चलायमान होने लगे और फिर उनमें परस्पर संग्राम कराने लगी।१४। इस तरह सौ घरों को नष्ट कर वह चित्रा मर गई, यमराज ने उसे खूब दण्ड दिया।१५ यमराज ने बहुत दिनों तक उसे रौरव नरक में डाला

और बड़ी कष्टदायक पीड़ायें दीं। १६। जैसा काम मनुष्य करता है वैसा ही फल उसे भोगना पड़ता है। उस चित्रा ने जान कर सौ घर बिगाड़ दिये थे। १७। इसी लिये उसे वैसा फल भोगना पड़ा, सौ घर बिगाड़ने से वह दुःख भोगती रही। १८। विवाह का समय प्राप्त होने पर दैव परिपाकावस्था को प्राप्त हुआ इसी लिये विवाह समय प्राप्त होने पर भर्त्ता मरते गये। १६। जिस कारण से उसने सौ घर नष्टकिये इसी से उसके सौ पति मर गये, विवाहों में २१ और बाकी स्वयम्बर में। २०। जो हाल दिव्यादेवी का तुमने पूछा मैंने उसके पूर्वजन्म का सब हाल तुमसे कह दिया। २१॥

श्रोताओ! आपने दिव्यादेवी की कथा को भली भांति सुना, बतलाइये तो सही–इस इतिहास में कहीं दिव्या देवी का एक भी विवाह हुआ है? विधवा विवाह के प्रचारक यह जानते हैं कि दिव्यादेवी का एक भी विवाह नहीं हुआ–तो भी ये लोग जान बूझ कर दिव्या देवी के २१ विवाह बतलाते हैं इस प्रकार के असत्य भाषण, धोका देने और जाल बनाने से इनका प्रयोजन यह है कि हिन्दू जातिकी पवित्रता और स्वरूप नष्ट हो तथा यह पवित्र जाति योरोपीय सांचे में ढले कि जिससे संसार में एक भी हिन्दू न रहे। आज इनको हिन्दू जाति की संसार में सत्ता खटक रही है, इस हिन्दू जातिको मिटाने के लिये इन्हों ने और उपायों के साथ में द्विजों में विधवा विवाह चलाने का उपाय भी जादू कैसा काम करने

वाला समझा है। इस अभिप्राय से ये विधवा विवाह चलाना चाहतेहैं और धार्मिक हिन्दुओंको विधवाविवाहकी धार्मिकता दिखलानेका धोखा दे रहे हैं। इनको फटकारो, इनका अपमान करो, इनकी बातें मत सुनो, इनको वह उत्तर दो कि जिस उत्तर से इनको नानी याद आ जावे, ऐसा करने पर ही तुम हिन्दूजाति और धर्मको संसारमें रख सकोगे यदि ऐसा न करोगे तो ये हिन्दू जाति के शत्रु कामयाव होंगे और सर्वदा के लिये हिन्दू जाति संसार से विदा हो जावेगी।

मनोरथ।

सुधारक लोग धोखा देकर संसार की आंख में धूल झोंक झूठ लिख जो विधवा विवाह चलाना चाहते हैं। इसके चलने से सुधारकों का मतलव क्या है-इसको हम एक दृष्टान्त से स्पष्ट करेंगे। हमें विश्वास है कि श्रोता• इस दृष्टान्त को वडी सावधानी से सुनेंगे।

एक मनुष्य व्यभिचारी हो गया था. रात दिन समस्त कार्यों को छोड कर व्यभिचार के ही चक्कर में रहता था। यह सज्जन किसी दिन व्यभिचार शिकार के लिये भ्रमण करता हुआ किसी तीक्ष्ण मिजाज के पास पहुँच गया, उसने अपने मन में विचारा कि यह नित्य मोहल्ले में आता है, स्त्रियों को पापिष्ठा बना देगा-हमारा कर्तव्य यही है कि पहिले से ही इसको कुछ दक्षिणा देदें। यह विचार कर इस हजरत को

अपने मकान में बुलाया और तेज चाकू से इसकी नाक जड़से उड़ादी। इस आपत्ति में पड़ा हुआ यह हजरत घर आया, चारपाई पर लेट गया, इलाज होने लगा, दो महीनेमें नाकका घाव अच्छा हो गया । घाव तो अच्छा हो गया किन्तु नाक कहाँ से आवे, विना नाक के इसको बड़ा संकोच हुआ लज्जा के मारे बाजार में न गया। नित्य यही विचार करता रहता था कि बाजार में कैसे जाऊं, लोगों को कैसे मुंह दिखलौऊं। यही विचार करते हुये एक दिन इसको अनोखी सूझ सूझगई इस सूझ से यह बड़ा प्रसन्न हुआ और बाजार में आने का पक्का इरादा कर लिया कि कल बाजार में अवश्य जाऊंगा ।

दूसरे दिवस यह बारह बजे दिन के घरसे चल कर बाजार के उस चौक में आया जहां आदमियों की अधिक भीड़ थी चौकमें खड़ा हुआ और खड़े होकर इसने आसमान की तरफ ऊपर को देखा, देख कर दोनों हाथ से ताली बजाई और बोल उठा कि "अहा! हा! क्या उत्तम छवि है। चार हाथ हैं चारों में क्रम से शंख चक्र गदा पद्म लिये हुये हैं; रेशमी पीत पट कैसे उत्तम हैं कि इस संसार में तो तैयार ही नहीं हो सकते, ओ! हो! मुकुट कितना टेढ़ा वंशी तो कांख में ही दबी है"। इसके कथन सुन कर बाजार के मनुष्य बोले कि क्या है। यह बोला गरुड़ पर सवार होकर भगवान् जारहे हैं मनुष्य ऊपर को देखने लगे। जब कुछ नहीं दीखा तब बोला कि कहां हैं? इसने ऊपरको अंगुली उठाई कि वे हैं। मनुष्यों

ने इशारे के स्थान को खूब देखा, जब कुछ नहीं दीखा तब बोले कि हमको क्यों नहीं दीखता ? और तुम्हें क्यों दीख पड़ता है ? ।

इस हजरत ने उत्तर दिया कि तुमको नहीं दीखेगा । मनुष्यों ने कहा क्यों ? इसके उत्तर में यह बोला कि तुमको नाककी आड़ पड़तीहै, नाक कटवाओ तो दीखे। एक आदमी तैयार हो गया कि लो हमारी नाक काटो। इसने कहा मुफ्त में हो, रुपये पांच लाओ। उसने पांच रुपये भी देदिये । इस हजरत ने रुपयों को पाकट में डाला और चक्कू से उसकी नाक काट ली। नाक काट कर कानमें बोलाकि नाक तो कटही गई अब जुड़ नहीं सकती, कह दो कि भगवान् दीखते हैं, नहीं तो तुम्हें दुनियां वेवकूफ बनावेगी। यह सुनकर वह भी लगा हल्ला मचाने कि "अहा हा ! मेरा तो जन्म सफल होगया, मैं तो कृतकृत्य हो गया, मुझे यह मालूम होता तो मैं पहिलेसे ही नाक कटवा डालता" अब क्या था, अब तो मनुष्य चक्कर में आगये। लगे नाक कटवाने। यह हजरत प्रत्येक मनुष्य से नाक कटवाई पांच रुपये पहिले ले लेता था । अब तो रुपया भी पैदा होने लगा और चेले भी बढ़ने लगे । चंद दिनमें सहस्रों चेले बन गये और हजारों रुपया जमा हो गया

बस यही हाल आज सुधारकों का हो रहा है। सुधारक लोग योरोपीय शिक्षा के पंजे में पड़ कर मुसलमान ईसाई, भंगी चमारों के हाथ का होटल में भोजन उड़ाने लगे, मांस

शराब के आदी होगये। ये उस मांस को भी खा लेते हैं जिस मांस के श्रवण से हिन्दुओं का कलेजा कांप उठता है। सुधारक योरोपीय शिक्षा के प्रभाव से नास्तिक बन गये, अब इनको श्राद्ध तर्पण, पूजा पाठ, कथा पुराण सांप की भांति काटता है। अब ये लोग जाति पांति को ढकोसला कहते हैं। इनकी दृष्टि में संसार में कोई आनन्द दायक पदार्थ है तो वह व्यभिचार है। ये लोग सनातन धर्म को तिलाञ्जलि दे, अपने बाप दादाओं को बेवकूफ बतला नककटे नर पशु बन गये हैं। ये चाहते हैं कि संसार में हमारे दुष्ट कार्यों की निन्दा न हो और हमको बिना कमाये रुपया भी मिल जावे इन दो कारणोंसे धार्मिक हिन्दुओंको ये अपना शिष्य बनाना चाहते हैं। इन दो मतलबों को छोड कर न तो इन को हिन्दू धर्म से प्रेम है और न हिन्दू जातिसे। यदि इनको हिन्दू धर्म और हिन्दूजाति से किंचित् भी प्रेम होता तो फिर ये हिन्दुत्व को छोड़कर साक्षात् राक्षस न बनते और न इनको हिन्दुओंकी विधवा रमणियों पर ही कुछ दया है। यदि इनको विधवाओं पर दया होती तो ये आश्रम खोल विधवाओं को बेंच गुलछर्रे न उड़ाते, ये केवल अपने पाप कर्म दबाने और विधवाओं को बेंच पापी पेट को भरने के लिये विधवाविवाह को धर्म बतला रहे हैं। इनकी चालबाजीसे बच कर विधवाओं की रक्षा करना और हिन्दू धर्म को बचाना यह आपका सबसे प्रथम कर्तव्य है। मुझे आशा है कि आप लोग हानियां

सहकर भूखे मर गले कटवा उसी प्रकार धर्म की रक्षा करेंगे जिस प्रकार पूज्य तेग बहादुर, पवित्रकीर्ति हकीकतराय और हिन्दू जाति के परम पुनीत मान्य गुरू गोविन्द सिंह के बच्चे धर्म रक्षा में कटिबद्ध हुये थे।

द्रौपदी।

कई एक शास्त्रानभिज्ञ सुधारक यह भी कहने लगे हैं कि द्रोपदी के पाँच पति थे इससे भी विधवाविवाह का होना सिद्ध हो जाता है।

ठीक है, स्वार्थ और मूर्खता संसारमें जितना अनर्थ करवा दे उतना थोड़ा है। जब अनभिज्ञ और स्वार्थी लोग संसार में बड़े बड़े असह्य अनर्थों के विचित्र चित्र खैंच कर आगे खड़े कर देते हैं तो द्रौपदी के चरित्र से विधवा विवाह सिद्ध करने का साहस करना कोई आश्चर्य जनक घटना नहीं है। जिन लोगों ने द्रौपदी के इतिहास को नहीं जाना तथा पांच पति होने के कारण को नहीं पढ़ा, जिन लोगों की बुद्धि में यह नहीं आया कि वास्तव में द्रौपदी का एक ही पति था वे लोगही द्रौपदीके अनेक पति बतला कर उससे विधवाविवाह निकाल बैठते हैं।

प्रथम हम द्रौपदी की कथा को श्रोताओं के आगे रखते हैं कथा के पश्चात् हम इसका विवेचन करेंगे कि इस चरित्रसे विधवाविवाह की सिद्धि होती है या नहीं। द्रौपदी के पाँच पति होने के विषय में ब्रह्मवैवर्त्त पुराण के श्रीकृष्ण

जन्म खण्ड अ० ११५ में लिखा है अग्नि देवताने भगवान् राम चन्द्र जी से कहा कि हे राम ! अब से एक सप्ताह में रावण नामक दुष्ट राक्षस दैवेच्छानुसार जानकी जी को अवश्यमेव हर ले जावेगा। तब भगवान् रामचन्द्र ने कहाकि अग्निदेव सीता को तुम ले जाओ और सीताकी छाया मात्र यहाँ छोड़ दो। तब असली सीता को अग्नि देव ले गये अर्थात् दिव्य माया शक्ति रूप सीता जी अग्निमें प्रविष्ट हो गई और रामजी के पास छाया मात्र रह गई उसी छाया रूप सीता को रावण हर ले गया तब कुटुम्ब सहित रावण को मार कर छायात्मक सीता को राम जी लाये। फिर अग्नि में परीक्षा होने के समय छाया रूप सीता अग्नि में प्रविष्ट होगई, अग्नि ने छाया को रख कर असली सीता को वापिस कर दिया। उसी छाया रूप सीता ने दिव्य सौवर्ष तक नारायण सरोवर में तप किया, जब शंभु भगवान् प्रसन्न हुये तब छायाने पांच बार करके वर मांगा महादेव जी ने कहा कि हे साध्वि ? तुमने पांच वार करके "पतिंदेहि-पतिंदेहि"ऐसे कहा है इस कारण—

साध्वि ? त्वं पञ्चधा ब्रूषं पतिं देहीति व्याकुला ।
पंचेन्द्राश्च हरेरंशा—भविष्यन्ति प्रियास्तव ॥१॥
ते च सर्वे च पञ्चेन्द्राश्चाधुना पञ्च पाण्डवाः ।
सापि छाया द्रौपदी च—यज्ञकुण्डसमुद्भवा ॥२॥
कृते युगे वेदवती—त्रेतायां जनकात्मजा ।

द्वापरे द्रौपदी छाया-तेन कृष्णा त्रिहायणी ॥३॥
वैष्णवी कृष्णभक्ता च तेन कृष्णा प्रकीर्तिता।
स्वर्गं लक्ष्मीर्महेन्द्राणां-सा च पश्चाद्भविष्यति॥४
अर्जुनाय ददौ राजा-कन्यायाश्च स्वयम्वरे।
पप्रच्छ मातरं वीरो-वस्तु प्राप्तं मयाऽधुना ॥५॥
तमुवाच स्वयं माता गृहाण भ्रातृभिः सह।
शम्भोर्वरेण पूर्वंच परञ्च मातुराज्ञया ॥ ६ ॥
द्रौपद्याः स्वामिनस्तेन हेतुना पञ्च पाण्डवाः।
चतुर्दशानामिन्द्राणां पञ्चेन्द्राः पञ्च पाण्डवाः॥७

उक्त प्रकार शंभु भगवानने कहा कि हे साध्वि! हरि भगवान् के अंश रूप पांच पाण्डव तुम्हारे पति होंगे। वे ही पंचेन्द्र इस समय पांच पाण्डव हुये हैं। तथा जिस सीता की छाया ने तप किया था वही द्रौपदी नाम दिव्य रूप कन्या यज्ञ कुण्ड से पैदा हुई है। सत्ययुग में जो वेदवती थी वही त्रेता में जानकी एवं द्वापर में द्रौपदी रूप से प्रगट हुई विष्णु भगवान् को सर्वोपरि मानने वाली कृष्ण भगवान् की भक्त होने से द्रौपदी का नाम कृष्णा हुआ, वही महेन्द्रों की लक्ष्मी पश्चात् हो जावेगी। राजा द्रुपदने कन्याके स्वयम्बर में द्रौपदी अर्जुन को दी थी। अर्जुन ने अपनी माता से कहा कि मुझे वस्तु मिली है। वस्तु को न देख कर माता ने कहा कि सब

भाइयों सहित ग्रहण करो। पहिले शंभु भगवान् के वरदान तदनुसार पीछे माता की आज्ञा इन दो कारणोंसे एक ही इन्द्र के पांच अंश रूप पांच पाण्डव द्रौपदी के पांच पति हुये, उन चौदह प्रकार के इन्द्रों में से पंचेन्द्र पांच पाण्डव कहाते थे।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में लिखी हुई द्रौपदी की कथा आप सुन चुके, अब महाभारत की कथा सुनिये। महाभारत आदिपर्व अध्याय १९३ से द्रौपदी की कथा चलती है। जब अर्जुन ने मत्स्य वेध कर दिया इस खुशीमें हर्षित पाण्डव कुन्तीके पास पहुँचे और माता से कहा कि मातः! हमने एक अलभ्य रत्न पाया है उसको कौन भाई ग्रहण करे। कुन्ती को यह स्मरण न रहा कि ये द्रौपदी की बाबत कह रहे हैं अतएव उसने यह कह दिया कि इस रत्न को लेने के तुम पांचो भाई अधिकारी हो। जब द्रुपद को यह निश्चय हो गया कि ये साधु वेषधारी क्षत्रिय पाण्डव हैं तब उन्हों ने अपनी पुत्री का विवाह करना विचारा राजा युधिष्ठिर से कहा कि कल दिन विवाह का है आप आजसे अपने धार्मिक कर्तव्यों को आरम्भ करदे और मुझे बतलावें कि मैं किसके साथ विवाह करूं? आप पांच भाई हो और पांचों उत्कट वीर तथा प्रबल धार्मिक हो, आप जिसको कहें मैं उसको कन्या देदूं? इसको सुन कर युधिष्ठिर ने कहा कि द्रौपदी के साथ हम पाँचो भाइयों का विवाह करना होगा, युधिष्ठिर के इस विस्मय जनक कथन को सुन कर द्रुपद बोल उठा कि—

एकस्य बह्व्यो विहिता महिष्यः कुरुनन्दन ।
नैकस्या बहवः पुंसः श्रूयन्ते पतयः क्वचित् ॥२७॥
लोकवेदविरुद्धं त्वं नाधर्मं धर्मविच्छुचिः ।
कर्तुमर्हसि कौन्तेय कस्मात्ते बुद्धिरीदृशी ॥२८॥

महा० आदि प० अ० १९५

हे कुरुनन्दन ! एक पुरुष के बहुत सी स्त्रियां हों यह तो विधि देखने में आती है परन्तु एकस्त्री के अनेक पति हों ऐसा तो पुरुष जो वेद कर्ता परमात्मा तिसके सकाश से सुनने में नहीं आता । २७ । तुम धर्मज्ञ और पवित्र हो इस कारण हे युधिष्ठिर ! लोक और वेद से विरुद्ध ऐसा काम करना तुम्हें शोभा नहीं देता । हे कौन्तेय ? तुम्हारी ऐसी बुद्धि क्यों हुई ?

इसके ऊपर राजा युधिष्ठिर ने कहा कि हे महाराज ! धर्म बड़ा ही सूक्ष्म है, हम उसकी गति को नहीं जानते इस कारण पहिले लोग जिस धर्म के मार्ग से गये हों उस के अनुसार ही हम वर्ताव करते हैं । मैं कभी भी झूठ नहीं बोलता हूं और मेरी बुद्धि कभी भी अधर्म पर नहीं जाती एवं हमारी माता ने हमें ऐसाही करने की आज्ञा दी है तथा मुझे भी ऐसा करना उचित मालूम होता है । हे राजन् ! यह धर्म निश्चल है इस कारण तुम किसी का विचार न करके इस को अंगीकार करो इस में जरा भी शंका मत करो ।

राजा के इस कथन को सुन कर द्रुपद धृष्टद्युम्न प्रभृति

इकट्ठे हो कर विचार करने लगे। इसी अवसर पर भगवान् वेदव्यास जी आगये, व्यास जी को देख कर द्रुपद को बड़ी प्रसन्नता हुई, व्यास जी को प्रमाण, अभिवादन, अर्घ्य पाद्य से सत्कृत किया और सुवर्णके सिंहासन पर बिठला दिया तत्पश्चात् यही विचार व्यास जी के आगे रख दिया, व्यास जीने विवेचन करना आरम्भ किया।

प्रथम वेदव्यास जी द्रुपद का हाथ पकड़ कर पृथक् ले गये और एक विस्तृत कथासे समझाया। समझाते समझाते कथा के अंत में यह प्रसंग लाये कि इन्द्र की दृष्टि में नदी में एक स्वर्ण का कमल आया, इन्द्र इस खोज को चला कि यह स्वर्ण का कमल कहां से आया है, चलते चलते वहाँ पहुँचा जहां से गंगा भारतवर्ष को प्रयाण करती थी, वहां पर पर्वत से उतरती हुई एक अत्यन्त रूपवती स्त्री देखी, वह रोती हुई पर्वत से उतरती थी और उस की आंख से आंसू गिरते थे, आंसू गंगा में गिर कर सुवर्ण कमल हो जाते थे। यह अद्भुत घटना देख इन्द्र ने पूछा कि तू कौन है और किस लिये रोती है? यह स्त्री इन्द्र के कथन को सुन कर बोली कि मैं जिस के लिये रोती हूं मेरे साथ आ उसको तुझे दिखलाऊं। इन्द्र उसी के साथ चला, थोड़ी दूर पर जाकर देखा कि एक युवा पुरुष सिंहासन से बैठा हुआ एक रूपवती स्त्री के साथ पाशों से खेल रहा है। इस को देख कर इन्द्र ने क्रोध से कहा कि हे युवा पुरुष! मैं सारे संसार का स्वामी हूं। उस युवा पुरुषने

आई हुई स्त्री को आज्ञा दी कि इस को हमारे पास पकड़ लाओ, स्त्री के छूते ही इन्द्र की नशें ढीली हो गई, उस गुवा पुरुष महादेव ने इन्द्र को आज्ञा दी कि तुम इस गुफा की शिला को हटा कर अन्दर गुफा में जाओ वहां तुम्हारे जैसे और भी इन्द्र बैठे हैं। इन्द्र गुफा में पहुँचा, वहाँ चार इन्द्र और देखे, इतने में महादेव भी आगये, पांचों इन्द्रों को हुक्म दिया कि तुम मर्त्यलोक में मनुष्य हो कर पैदा हो जाओ और पृथ्वी का भार उतार कर वापिस आओ। इन्द्रों ने निवेदन किया कि यह हमें स्वीकार है किन्तु हमारी उत्पत्ति पुरुषसे न हो, अश्विनीकुमार प्रभृति देवताओं से हो? महादेव ने स्वीकार किया इस नवीन इन्द्रने प्रार्थना की कि मैं अपने शरीरांश से द्वितीय रूप धारण कर के मर्त्यलोक में जाऊं और इस रूप से स्वर्ग का शासन करूं। महादेव ने कहा बहुत अच्छा। व्यास जी ने द्रुपद से कहा कि पांचों पाण्डव पाँच इन्द्र हैं और शापके कारण स्वर्गकी लक्ष्मी अयोनिजा तुम्हारी पुत्री द्रौपदी के पति होंगे। इस के पश्चात् व्यास जी ने द्रुपद को दिव्य नेत्र दिये उस दृष्टि से पांचों पाण्डवों को द्रुपदने इन्द्ररूप देखा और निःसंदेह हो कर अपनी पुत्री का विवाह पाण्डवोंके साथ कर दिया। यह महाभारतकी कथा है।

अब मार्कण्डेय पुराण की कथा सुनिये—

तेजोभागैस्ततो देवा-अवतेरुर्दिवो महीम्।
प्रजानामुपकारार्थं-भूभारहरणाय च ॥ २० ॥

यदिन्द्रदेहजं तेजस्तन्मुमोच स्वयं वृषः ।
कुन्त्यां जातो महातेजास्ततोराजा युधिष्ठिरः॥२१
बलं मुमोच पवनस्ततो भीमो व्यजायत ।
शक्रवीर्याद्धृतश्चैव जज्ञे पार्थो धनञ्जयः ॥ २२ ॥
उत्पन्नौ यमजौ माद्र्यां शक्ररूपौ महाद्युती ।
पञ्चधा भगवान्नित्य-मवतीर्णः शतक्रतुः ॥ २३ ॥
तस्योत्पन्ना महाभागा पत्नी कृष्णा हुताशनात् २४
शक्रस्यैकस्य सा पत्नी कृष्णा नान्यस्य कस्यचित् ।
योगीश्वराः शरीराणि कुर्वन्ति बहुलान्यपि ॥२५
पञ्चानामेकपत्नीत्व-मित्येतत्कथितं तव ॥ २६ ॥

मार्कण्डेय० अ० ५।

देवताओंने अपने तेजांश से मनुष्य शरीरों को धारण कर पृथ्वी पर अवतार लिया, इन अंशों द्वारा अवतार लेनेके मुख्य प्रयोजन दो थे (१) प्रजा का उपकार (२) पृथ्वी का भार उतारना ॥ २० ॥ इन्द्र ने अपने तेज को कुन्तीमें स्थापित किया उस तेज से तेजस्वी राजा युधिष्ठिर उत्पन्न हुये ॥ २१ ॥ वायु देवता ने अपने तेज बल को कुन्ती को में स्थापित किया इस के द्वारा बलशाली भीम का जन्म हुआ। इन्द्र के वीर्य स्थापित करने पर अर्जुन भी इन्द्र के ही तेज से प्रकट हुआ ॥ २२ ॥ इसी इन्द्र के अन्य तेज

भाग के स्थापित करने पर नकुल सहदेव का जन्म हुआ । इस प्रकार कुन्ती और माद्री के गर्भ द्वारा अकेला इन्द्र ही पाँच विभागों में विभक्त हो कर अवतरित हुआ ॥ २३ ॥ उस इन्द्र की महाभाग्य शालिनी पत्नी हुताशन से प्रकट हो कर द्रौपदी रूप से उत्पन्न हुई ॥ २४ ॥ इस कारण द्रौपदी केवल एक इन्द्र की पत्नी है अन्य किसी की नहीं । दिव्य दृष्टि से विचार करने पर द्रौपदी के पाँच पति नहीं हैं, द्रौपदी का पति केवल एक इन्द्र है । सन्देह हो सकता है कि अकेला इन्द्र पांच रूप में कैसे अवतरित होगा ? इस के ऊपर पुराण ने "योगीश्वराः शरीराणि०" यह श्लोक लिख दिया है । इस का अर्थ यह है कि योगोश्वर लोग अपनी शक्ति से एक शरीर के अनेक शरीर बना लेते हैं, यह शक्ति देवताओं में स्वाभाविक होती है ॥ २५ ॥ अतएव युधिष्ठिरादि पांचों का एक पतित्व हम ने तुम से कहा ॥ २६ ॥

स्पष्टीकरण ।

(१) ब्रह्मवैवर्तपुराण में यह स्पष्ट कह दिया कि शंकर के प्रकट होने पर छाया रूप सीता ने "पतिंदेहि" इस वाक्य को पाँच वार कहा, आशुतोष शंकर ने वर प्राप्ति को पूर्ण करने के लिये पंच पति का वरदान दे दिया । एक स्त्री के पांच पति होना अधर्म है, अधर्म न हो इस कारण यह स्पष्टकर दिया कि इन्द्र के पाँच अंश रूप इन्द्र ही तुम्हारे पांचपति होंगे ।

(२) महाभारत में एक स्त्री के पांच पति होना द्रुपद से पाप बतलाया है। व्यास जी ने एक विस्तृत हाल सुना कर यह दिखलाया कि दैवी सृष्टि के अधिपति इन्द्र ही अपने पांच विभागों से पाण्डव रूपों में अवतरित हुआ है। जब कथा पर भी द्रुपद को कुछ सन्देह रहा तब व्यास जी ने दिव्य दृष्टि देकर उसके द्वारा पाण्डवों को इन्द्र दिखला दिया, अब द्रुपद को ज्ञान हो गया कि मेरी कन्या का एक ही पति इन्द्र है।

(३) मार्कण्डेय पुराण में स्पष्ट ही कह दिया है कि एक इन्द्रही द्रौपदी का पति है। योगी और देवता अपने एक शरीर से अनेक शरीर बना कर भी संसार में विचरा करते हैं अब कौन कहता है कि द्रौपदी के पांच पति थे।

द्रौपदी भी दैवी सृष्टि की अयोनिजा कन्या थी। दैवी सृष्टि और मानुषी सृष्टि के नियम तुल्य नहीं होते एवं एक देवता के सैकड़ों देवता बन जाते हैं, देवता की उत्पत्ति देवता अपनी इच्छानुसार अपने शरीरसे करलेताहै इत्यादिक विषयों की पुष्टि निरुक्त में देखो उसके देखने से ये सन्देह निवृत्त हो जायेंगे। यहां पर तो केवल इतना कहना है कि द्रौपदी के पांच पति थे ही नहीं, केवल नाम मात्र के पाँच पति थे वास्तव में तो द्रौपदी का एक ही पति इन्द्र था। जब द्रौपदी के एक ही पति था तब फिर अनेक पति मानना यह प्रबल मूर्खता और उससे विधवाविवाह की कल्पना करना शास्त्रानभिज्ञता एवं संसार की आखोंमें धूल झोंकना नहीं तो और क्या है? अनंता

को सुधारकों से सावधान होकर बचना होगा नहीं तो ये लोग धोखे ही धोखे में हिन्दू जाति की अन्त्येष्टि कर देंगे।

श्रोत्रिय वर्ग! झूठ बोलने कीभी कोई हद होती है। ऐसा झूठ नहीं बोला जाता कि जन्म भर झूठ ही बोलो, कभी भूल कर भी सत्य न बोलो? सुधारकों ने विधवाविवाह के विषय में जितने भी प्रमाण देकर प्रमाणों के अर्थ किये हैं आप देख चुके वे सब अर्थ झूठे हैं। झूठे ही नहीं वरन् चालबाजी और बेईमानी से ठसाठस भरे हुये हैं इतने परभी सत्य अर्थ करने वालों को देश तथा हिन्दू जाति का शत्रु बतलाया जाता है। अब हम यह इंसाफ आपके आगे रक्खे देतेहैं, आप बतलाइये हिन्दू जाति और धर्म एवं देश का शत्रु कौन है? जो लोग धर्म को अन्तःकरण में रख विधवा विवाह का सत्यासत्य विवेचन करें वे तो देश के शत्रु और जो सुधारक विधवा विवाह के गीत गाकर गरीब हिन्दुओं की बहू बेटियों को उभाड़ पंजाबी सिक्ख तथा सिंधके मुसलमानों के हाथ बेंच हजार हजार रुपये घर में रक्खें वे ईमानदार? एवं देश और जाति के भक्त? क्या आप यह मानने को तैयारहैं? वर्णाश्रम धर्म को तोड़ने के लिये प्रति वर्ष लक्षों रुपया अमेरिका वगैरह बाहर के देशों से आरहा है उसका अधिक भाग हजम कर जो सुधारक रात दिन हिन्दू धर्म के गले पर छुरा चला रहे हैं वे तो देश तथा जाति के भक्त और जो हिन्दू जाति और हिन्दू धर्म को प्राचीन स्वरूप में रखना चाहें वे भारत देश

तथा हिन्दू जाति के शत्रु ? जिन सुधारकों को वेद शास्त्र का एक अक्षर नहीं आता वे तो धर्मके रक्षक और जिन्होंने संस्कृत साहित्य में आयु गारत कर दी वे धर्म भक्षक ? सज्जनो ! इनकी चालाबाजियों को कोई कहां तक कहेगा, सुधारकों की बोटी बोटी में चालबाजी और बेईमानी भरी पड़ी है। इन की बेईमानी और गुण्डापन को देख भारत की पबलिक वेईमानी सीखने लगी है इसी कारण से आज भारत की अदालतों में मुकद्दमों की भरमार है। ये क्या जानें धर्म क्या और पुराण क्या हैं ? तथा धर्म से एवं पुराण इतिहास से परस्पर में क्या सम्बन्ध है। इन को तो अपने पेट भरने से मतलब। हमारे इस विवेचन को सुन कर क्या कोई मनुष्य कह सकता है कि पुराण या इतिहास में विधवाविवाह है ?

आज हम आपको पुराण इतिहास के द्वारा धर्म निर्णय करने के लिये कुछ विशेष और बढ़िया बातें बतलावेंगे। आप अपने मन को हमारी आवाज के साथ लगा दीजिये फिर आपको उत्तम रीति से ठीक ज्ञान हो जावेगा कि पुराण और इतिहास से धर्म का ग्रहण तथा अधर्म का त्याग इन दो का निर्णय कैसे होता है। सुधारक लोग इस विषय में सर्वथा मूसलचन्द हैं विधवा विवाह के लेखकों की सात पीढ़ी ने भी इस बात को नहीं जाना कि पुराण और इतिहास से धर्म का ग्रहण कैसे होता है ? ये धर्म विचार शून्य विधवा विवाह के लेखक पुराण इतिहास से क्या खाक धर्म का निर्णय करेंगे ?

जब इन्होंने इतिहास पुराण के धर्म निर्णय की पद्धति को ही नहीं समझा ? ये लोग तो केवल पंडित कहलाने के लिये वृथा में मूसल की भांति कूद पड़ते हैं । यह कोई बात है कि 'मान न मान मैं तेरा महमान' ? जब इनको पुराण इतिहास से धर्म ग्रहण करने का तरीका ही मालूम नहीं फिरये धर्म निर्णय कैसे कर देंगे ! जो इनके लेख से धर्म निर्णय समझना चाहे वह बज्र बेवकूफ । हम उस बढ़िया बातको आज आपके आगे रखते हैं जिसको सुन कर विधवा विवाह के लेखक घरों में घुसकर रोवेंगे । यदि ये शर्म वाले हैं तो चार भले आदमियों में मुख दिखलाने लायक नहीं रहेंगे आप समझ जावेंगे कि इन्होंने इतिहास और पुराण से विधवा विवाह दिखलाने में कितनी बेईमानी की है । पुराण और इतिहास से धर्म ग्रहण करने की पद्धति को सुनिये ।

इतिहास और धर्म ।

वर्तमान समय में इतिहास से जो जो विधवा विवाह के प्रमाण दिये जाते हैं उन सबका विवेचन कर हमने यह दिखला दिया कि इतिहास में एक भी विधवा विवाह नहीं है, सुधारक लोग बलात्कार इतिहास का गला घोट कर अपने मन में भरे हुये विधवाविवाह को इतिहास से सिद्ध करना चाहते हैं किन्तु शास्त्रवेत्ताओं के सामने इनका समस्त कपट जाल टूट जाता है और इतिहास विधवा विवाह की साक्षी से कोशों दूर भागता है ।

सुधारकों का काम धर्माधर्म का निर्णय करना नहीं है किन्तु कोई कथा लेकर उसके मन माने अर्थ बना संसार की आखों में पट्टी बाँध बलात्कार विधवा विवाह का प्रचार करना है ऐसे मनुष्य यदि किसी अन्य कथा को आगे रख विधवा विवाह सिद्ध करने लगें तो कोई असंभव नहीं है और यह भी संभव है कि इनके चक्कर में पड़ कर साधारण मनुष्य इन की दी हुई कथा से विधवाविवाह को शास्त्रोक्त मानलें इस प्रकार की आपत्ति को दूर करने के लिये हम एक ऐसा विवेचन जनता को सुनाते हैं कि जिसके याद रखने से इनके दिये हुये इतिहास के सैकड़ों विवाह एक मिनट में चकनाचूर हो जाते हैं, श्रोतागण ! इसको ध्यान से सुनिये और सर्वदा के लिये इस पाठ को याद रखिये।

आचरण।

इतिहास में किसी मनुष्य का किया हुआ आचरण धर्म नहीं हो जाता। किसी भी धर्म शास्त्र ने धर्म की यह कसौटी नहीं बतलाई कि पूर्वकाल के मनुष्य जो बुरा भला कर बैठे वह आगे के मनुष्यों के लिये धर्म बन जावे।

प्राचीन इतिहास के लेखक भगवान् वेद व्यास प्रभृति राग द्वेष शून्य महर्षि हैं, उन्होंने इतिहास से धर्म के निर्णय करने का अभिप्राय नहीं रक्खा वरन सत्यता पूर्वक लोगों के चरित्रों का उद्घाटन किया है। जिस मनुष्य ने धर्माचरण किया उसका धर्माचरण लिखा और जिसने पापाचरण किया

उसका पापाचरण तथा जिसने पाप पुण्य मिश्रित आचरण रक्खा उसका मिश्रित चरित्र लिखा। इतिहासके लिखने का प्रयोजन पूर्व पुरुषोंके चरित्रका ज्ञान है, उसका यह अभिप्राय नहींहै कि जो कुछ पूर्वकालमें होता आया वह धर्म है। कल्पना करो द्वापर में बुद्धू नाईकी अम्माने अपनी जवानीमें अढ़ाई सौ पति किये तो क्या उसके आचरण से आज कल का प्रत्येक स्त्री का अढ़ाई सौ पति कर लेना ही धर्म है? यदि वह कम करेगी तो नरक को जायगी? क्यों कि उसने सर्वांशमें धर्म का पालन नहीं किया? संसार का कोई भी मनुष्य मनुष्याचरण से धर्माधर्म का निर्णय नहीं कर सकता। सुधारक जो इतिहास से विधवा विवाह चलाना चाहते हैं या तो वे धर्माधर्म का निर्णय करना नहीं जानते या इतिहास का गला घोट जबर्दस्ती से विधवा विवाहको देश में फैलाना चाहते हैं।

यदि हम धर्मके विवेचनका मार्ग भूल कर केवल इतिहास से धर्म का निर्णय करेंगे तो हम धर्म और अधर्म इन दोनों के स्वरूप को ही न जान सकेंगे। इसको इस प्रकार समझिये कि दुर्योधन स्वार्थी था और युधिष्ठिर परोपकारी तो स्वार्थधर्म हुआ या परोपकार। राजा वेण व्यभिचारी था और उसके पुत्र पृथु एक पत्नीव्रत धर्म का पालन करते थे, अब निर्णय करिये व्यभिचार धर्म हुआ या एक पत्नीव्रत पालन। उग्रसेन-वेद, ब्राह्मण, गौ और मनुष्यों का भक्त था, उसके पुत्र कंस ने

आज्ञा देदी कि ब्राह्मण—गौ और बालकों को मार डालो, वेदों को फूंक दो। इन भिन्न भिन्न प्रकार के आचरणों में से कौन धर्म और अधर्म है। यादवों ने शराब पी, शराब के नशे में युद्ध ठन गया, आपस में कट मर गये। यह लेख इतिहास में है इस कारण क्या संसार के समस्त मनुष्यों का यह धर्म हो गया कि वे शराब पियें और आपस में कट कर मर जावें ? रावण—प्रभु राम की स्त्री को हर कर ले गया, क्या यह धर्म हो गया कि प्रत्येक मनुष्य दूसरे की स्त्री को पकड़ कर ले आवे ? असमंजस को जितने खेलते लड़के मिल जाते थे वह सबको मार कर सरयू की धारा में वहा देता था इस इतिहास की घटना से क्या हमारा यह धर्म हुआ कि संसार के लड़कों को मार कर नदी में बहावें ? चित्रकेतु की रानियों ने चित्रकेतु के लड़के को जहर दे दिया था क्या अब हमारी स्त्रियों का यह धर्म हो गया कि वे अपने सौत के लड़के को जहर देकर मार डालें ? इतिहास से मनुष्यों के चरित्र धर्म विरुद्ध भी रहते हैं और धर्मानुकूल भी रहते हैं इन चरित्रों से धर्माधर्म के निर्णय का प्रयोजन नहीं रहता, केवल मनुष्य का आचरण दिखलाने का अभिप्राय रहता है अतएव मनुष्यों के आचरण से धर्माधर्म का निर्णय करना वज्र मूर्खता है।

हां-इतिहास से धर्म का निवेचन लिया जाता है वह इस प्रकार नहीं लिया जाता कि आचरण धर्म गिन लिया जावे। इतिहास के लेखक को जहां धर्म बतलाना होता है वह

अपनी लेखनी से लिखता है कि धर्म का स्वरूप यह है। इतिहास लेखक किसी स्थान में इतिहास के आरंभ में धर्म का स्वरूप दिखलाता है, कहीं कहीं पर इतिहास के अन्त में और अनेक स्थानोंमें विना इतिहासके ही धर्मका स्वरूप बड़े विस्तार से वर्णन करता है जहां जहां इतिहास लेखक अपनी लेखनी से धर्माधर्म का वर्णन करता है उसी उसी स्थान से धर्म का ग्रहण होता है-इतिहास का धर्मावलम्बन मार्ग यही है।

केवल चरित्र से धर्माधर्म का निर्णय मानना धर्म जाँच की कसौटी पर पूरा नहीं उतरता। इस कसौटी को भगवान् मनु किस उत्तम रीति से लिखते हैं सुनिये-

वेदः स्मृतिः सदाचरः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्॥

मनु० अ० २ श्लोक १२

धर्म के निर्णय में सर्वोत्तम प्रमाण वेद है। जहां पर वेद प्रमाण न मिलता हो वहां पर धर्मशास्त्र स्वतः प्रमाण है। उदाहरण—गर्भाधान, सीमन्त, उपनयन, शिखा-सूत्र का धारण करना प्रभृति संस्कार वेद में नहीं हैं, इन में धर्मशास्त्र सर्वांश प्रमाण हैं। धर्मशास्त्र से उतरता हुआ प्रमाण शिष्ट परम्परा है, इसी का नाम सदाचार है अर्थात् सृष्टि के आरंभ से अन्त तक चला आने वाला श्रेष्ठ पुरुषों का आचरण। इस का स्पष्टीकरण करते हुये मनु जी लिखते हैं कि—

तस्मिन्देशे य आचारः पारंपर्यक्रमागतः ।
वर्णानां सान्तरालानां स सदाचार उच्यते ॥
मनु० अ० २ श्लो० । १८

जिस देशमें जो आचार ब्राह्मण, क्षत्रिय; वैश्यों का था इन तीन से भिन्न समस्त शूद्र जाति का परंपरा से क्रमशः चला आया है उस को सदाचार कहते हैं–यह धर्म की तीसरी कसौटी है।

आप लोग इस कसौटीसे शिष्ट परंपरा या सदाचारके समझने का उद्योग करें–हम समझाते हैं। एक मनुष्य ने हम से आकर कहा कि दिव्यादेवी के २१ विवाह हुये अतएव आज कल की स्त्रियों का विधवा विवाह हो जाने में कोई दोष नहीं ! हम दिव्यादेवी का विधवा विवाह होने से विधवा विवाह को धर्म नहीं मानलेंगे, हम यह देखेंगे कि दिव्यादेवी की माता का विधवाविवाह हुआ था ? फिर देखेंगे कि दिव्यादेवी की नानी का विधवा विवाह किया गया था ? इस के पश्चात् दिव्यादेवी की लकड़नानी के विधवा विवाह को देखा जावेगा–बाद में यह विचारेंगे कि दिव्यादेवी की लकड़नानी की सास ने अपना द्वितीय विवाह कर लिया था ? इसी प्रकार आगे को बढ़ते बढ़ते सृष्टि रचना पर पहुँच जावेंगे। सृष्टि रचना से लेकर दिव्यादेवी तक यदि विधवा विवाह हुये होंगे तब विधवा विवाह शिष्ट परंपरा, सदाचार सिद्ध धर्म हो जावेगा। एक स्त्री के विधवा विवाह करने से सदाचार नहीं बनता अतएव

द्विजातियों में विधवा विवाह का चलाना वेद विरुद्ध, धर्म शास्त्र विरुद्ध, सदाचार विरुद्ध द्विजाति को वर्णसंकर बना देने वाला; नाशकारी घोर पाप है, तुम ललकार कर सुधारकों को कह दो कि सुधारक लोग वेद-शास्त्र शून्य धर्म निर्णय में चौपटानन्द, स्वार्थी, मतलबी, अज्ञानी हैं ये जो विधवाविवाह की आवाज उठा रहे हैं वह आवाज धार्मिक नहीं है, केवल निर्लज्जता के साथ स्त्रियों को बेंच कर टका कमाने के लिये है। तुम पेट के कुत्ते हो, धर्म विवेचन में मूसलचन्द हो, हम तुम्हारी बात हरगिज नहीं सुनेंगे। हम धर्माधर्म का निर्णय उन्हीं से पूछेंगे जो राग द्वेष रहित संस्कृत के धार्मिक विद्वान् हैं।

श्रोताओ! इस कथन में हमने स्पष्ट दिखला दिया कि यदि कोई स्त्री दूसरा पति कर ले तो उस के इस दुष्ट आचरण से घोर पाप विधवा विवाह धर्म नहीं होता। बोलिये भगवती जनकनन्दिनी की जय!

कालूराम शास्त्री।

* श्रीहरिः *

सत्यं ब्रवीमि परलोकहितं ब्रवीमि ।
सारं ब्रवीम्युपनिषद्धृदयं ब्रवीमि ॥
संसारमुल्वणमसारमवाप्य जन्तोः ।
सारोऽयमीश्वरपदाम्बुरुहस्य सेवा ॥१॥

सत्य कहूँ हित की कहूँ, गावें वेद पुकार ।
है असार संसार में, हरि पद सेवा सार ॥
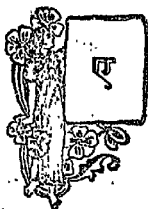
एक मनुष्य को भूत पालने का शौक लगा। संसार में भिन्न २ मनुष्यों को भिन्न भिन्न प्रकार के शौक लगते हैं किसी को भंग का शौक, किसी को गांजे का शौक, एक को शराब का, तो दूसरे को अफीम का, किन्तु यह सब से विलक्षण निकला, इसको भूत पालने का शौक लगा।

भूत का भी अद्भुत ही मामला है कोई २ मनुष्य तो भूत के मण्डन का ठेका लिये हैं, यदि कोई मनुष्य इस ठेकेदार से यह कह दे कि भूत नहीं होता तो इतना सुनते ही यह

बहस करने को तैयार होजाता है और कह उठता है कि वाह साहब वाह, भूत होता ही नहीं ? हमने तो दश बारह मरतबह देखा है। यदि आप नहीं मानते तो आज साढ़े ११ बजे रात को हमारे साथ अमुक स्थान पर चलें, देखो हम आपको कितने भूत दिखाते हैं।

और कोई २ मनुष्य भूत के खण्डन का ठेका लिये हैं यदि इस से कोई मनुष्य यह कह दे कि भूत होता है तो इतना सुनते ही वह शिर आ जाता है, मारे बहस के दिमाग़का गुद्दा निकाल डालता है और वेदकर्ता ईश्वर को तथा अपने पूर्व पुरुषाओं को भी सोलह आने मूर्ख बना देता है किन्तु भूत का अस्तित्व सिद्ध नहीं होने देता।

कोई कोई मनुष्य भूत से डरता है, रात के दश बजे यदि आप इस पुरुष से यह कह दें कि तुम अमुक स्थान में चले जाओ तो वह हजार बहाने बनावेगा किन्तु मार्ग की तरफ कदम न रक्खेगा इस अवसर को छोड़ कर यदि मीठी २ बातों से आप इस से पूंछे तो यह कह भी देगा कि हम तो केवल भूत से डरते हैं और किसी से नहीं डरते।

भूत का अजब मामला है, कोई भूत का खण्डन करता है, कोई मण्डन करता है, कोई डरता है, किन्तु यह पुरुष उन सब से विलक्षण है इस को भूत पालने का शौक लगा, घर का समस्त काम छोड दिया, रात दिन इसी तलाश में रहे कि कहीं से एक भूत मिले। तलाशते २ साढ़े ग्यारह वर्ष हो गये किन्तु भूत का पता न लगा।

कुछ और काल बीतने के अनन्तर इस के शहर में एक रोज एक बंगाली व्यापारी आया। वह रेल से आ रहा था और यह हवा खाते २ जंगल को जा रहे थे। रास्ते में दोनों से भेंट हुई, परस्पर में पता ठिकाना पूछा, अन्त में उस बंगाली व्यापारी से इसने पूंछा कि आप यहाँ कैसे आये हैं। बंगाली ने उत्तर दिया, हम कुछ माल बेचने के लिये लाये हैं इस सेठ जी ने कहा, आप के पास क्या माल है? बंगाली ने जवाब दिया कि वह माल आप के मतलब का नहीं है इस कारण आप पूंछ कर क्या करेंगे। सेठ जी बोले बतला तो दीजिये सम्भव है वह हमारे काम का ही निकल आवे। इतना सुन बंगाली ने कहा कि हमारे पास एक भूत विकाऊ है यह सुनते ही सेठ जी को बड़ी खुशी हुई; अपने मन में विचार करने लगे कि आज मिला है। सेठ जी ने कहा क्या आप उस भूत को दिखला सकते हैं। बंगाली ने उत्तर दिया कि अवश्य दिखलायेंगे।

इस प्रकार की बातें कर के बंगाली अपने उस स्थान पर पहुँचा जहाँ इस को ठहरना था। सेठ जी भी साथ ही साथ गये थोड़ी देर बैठने के अनन्तर सेठजीने कहा वह माल दिखलाइये। बंगाली ने एक कोठरी में पहुँच सेठ जी को बुलाया और अपना एक बटुआ खोल उस में से एक डिब्बी निकाल डिब्बी में से सेठ जी को भूत दिखलाया। सेठ जी ने उस भूत को देख कर कहा इस का मूल्य क्या है? इस को सुन कर

बंगाली बोला कि कहो तो वह मूल्य कहूं जो आज कल कहा जाता है और तुम कहो तो एक ही बार ठीक २ बतला दूं। सेठ जी ने कहा एक ही मूल्य कहिये। बंगाली ने बतलाया कि इस भूत का मूल्य दश हजार रुपये हैं इस से एक कौड़ी कम न होगी। सेठ जी ने कहा कि मूल्य बहुत है। बंगाली बोला कि इस के काम के आगे यह मूल्य कुछ भी नहीं है। सेठजी ने पूछा यह क्या काम करता है। बंगालीने उत्तर दिया कि ५० हजार मनुष्यों का काम यह अकेला ही कर देता है।

सेठ जी अपने मन में बड़े प्रसन्न हुए और विचार करने लगे कि हमारी दो हजार दुकानें तो भारतवर्ष में हैं और तीन सौ नैपाल में, सात सौ चीन में, पांच सौ जापान में, उन दूकानों के समस्त मुनीमों को जवाब देकर हम इसी अकेले भूत से काम लेंगे। इतना विचार करके सेठ जी ने दश हजार रुपये मंगवा कर गिन दिये और भूत को ले लिया। चलते समय सेठ जी ने बंगाली से पूछा कि एक बात तो बतलाओ इस में कोई ऐब तो नहीं है ? जब हम घोड़े खरीदते हैं तो उन घोड़ोंमें कोई २ घोड़ा ऐब वाला भी होता है। घोड़ेके समस्त ऐबों को तो हम जानते हैं सम्भव है कि घोड़े की भांति भूत में भी कोई ऐब होता हो। हम ने कभी भूत नहीं खरीदा, हम इस बात को जानते नहीं और आप इस के व्यापारी हैं आप को अवश्य ज्ञान होगा यदि कोई ऐब हो तो बतला दीजिये ताकि हम सावधान हो जावें। बंगाली ने कहा इस

भूतमें एक ऐव अवश्यहै, यदि तुम इसको काम न दोगे तो यह तुमको खा जावेगा। सेठजी बोले कि बस इतना ही, और ऐब हो तो बतलाओ। बंगाली ने कहा और कोई ऐब नहीं। सेठ जी बोल उठे कि यह तो कोई ऐब में ऐब नहीं हम इस को इतना काम देंगे कि मारे काम के इसको दम लेने का अवसर न मिलेगा। इतनी बात होने के अनन्तर सेठ जी भूतको लेकर अपने घर चले आये।

रात को जिस समय सेठ जी रोकड़ मिला भोजन कर के गद्दी पर बैठे तो सेठजी ने डिबिया खोली उस डिबियामें से काला२ लम्बे२ दांत वाला लाल२ मूँछ डाढ़ी सजाये भयंकर मूर्ति साढ़े ६ हाथ लम्बा एक भूत निकला और सेठ जी के सामने खड़ा होकर बोला कि मुझे बहुत जल्दी काम बतलाओ।

सेठ जी ने कहा आज आठ दिन हो गये जबलपुर की दुकान से कोई चिट्ठी नहीं आई, तुम वहां जाओ और समस्त समाचार लेकर आओ। भूत ने पीछे को मुंह कर के सेठ की तरफ को देखा और कहा कि आठ रोज से शाली बिरादर की खरीद आप की दुकान पर होती थी काम के कारण चिट्ठी लिखने का अवसर न मिला इस समय मुनीम जी चिट्ठी लिख रहे हैं परसों आप के पास आ जावेगी, और बतलाओ। सेठ जी ने कहा कि कलकत्ते के बड़े बाजारमें हमारी दूकान है उस दूकान पर तुम जाओ और पचास हजार रुपया लेते आओ। भूत ने पीछे को मुंह फेर रुपया सेठ जी के आगे पटक दिया

और कहा आप रुपया गिनिये और मुझे काम बतलाइये, यह हालत देख कर सेठ जी अपने मन में विचार करने लगे कि यह अद्भुत शैतान मिला है, काम को कहते तो देर होती है, किन्तु करते देर नहीं होती।

सेठ जी विचारने लगे कि अब के इस को किसी ऐसे काम में उलझाओ कि हमारे दश हजार रुपये भी वसूल हो जावें और इस को भी नानी याद आ जावे। यह विचार कर सेठ जी बोले कि भूतदेव! नरसिंहगढ़के जिलेमें हमारा एक जमीन का टुकड़ा पड़ा है तुम वहाँ जाओ उस टुकड़े में जो बड़ा भारी जंगल है उस जंगलके वृक्ष कटवा दो और बीहड़ जमीन को एक सा कर दो। बत्तीस मील लम्बा और सोलह मील चौड़ा एक शहर आबाद करो, उस शहर में पक्की सड़कें, पक्के मकान, बनाओ और प्रत्येक मकान में एक कुआ खोदो तथा एक बगीचा लगा दो। उस शहर के बीचों बीच हमारे लिये एक ऐसा सर्वोत्तम भवन बनाओ कि जिस की श्रेणीका दूसरा मकान संसार में न हो। भूत ने दक्षिण की तरफ को देख कर सेठ जी के सामने मुंह कर कहा कि सेठ जी सुनिये जंगल कट गया, जमीन एक सी हो गई, मकान बन गये, कूंए खुद गये, बगीचे लग गये, सड़कें बन गईं, आप का अद्वितीय भवन तैयार हो गया, शहर आबाद हो गया, आप देखने जाइये मुझे और काम बतलाइये। सेठ जी घबराये कि अब इस को क्या काम बतलावें। अपने मन में काम बतलाने के लिये कुछ

विचार कर रहे थे इतने में भूत बोल उठा कि या तो हमें काम बतलाइये नहीं तो फिर यार "नाश्यां" करना शुरू करते हैं इतना सुन कर सेठ जी घबरा गये और जो बतलाना था उस को भी भूल गये। विचार करने लगे कि अब जान कैसे बचे।

कुछ देर विचार कर के सेठ जी उस अंधेरी रात में गद्दी छोड़ नंगे पैर भागे। भला यह भूत काहे को पिंड छोड़ता था यह भी पीछे हो लिया। थोड़ी दूर पर सेठजी को एक पण्डित नजर आये। सेठ जी "त्राहिमां त्राहिमां" करते हुए उन पण्डित जी के चरणों में गिर पड़े। पण्डित जी ने कहा कि क्या मामला है इतनी घबराहट क्यों है? सेठ जी ने पीछे को अंगुली उठा कर इशारा किया। इशारेकी तरफ जो पंडितजी ने दृष्टि डाली तो क्या देखा कि साढ़े नौ हाथ का एक काला काला लम्बे लम्बे कदम धरता हुआ आ रहा है। पंडित जी ने उससे पूछा तुम कौन हो? जवाब दिया कि भूत। पंडित जी ने कहा तुम इस के पीछे क्यों दौड़ते हो? भूतने कहा कि भोग लगाने के लिये। हमारा इसका यही इकरार है या तो यह हमें काम बतलावे नहीं तो हम इस को खा जावेंगे।

भूत के कथन को सुन कर पंडित जी बोले कि अभी तो अनेक काम शेष पड़े हैं प्रथम तुम उनको तो पूरा करो फिर खाने की बात करना। भूत ने कहा काम बतलाओ। इसको सुनकर पंडित जी बोले कि तुम किसी पहाड़ से सौ फीट

लम्बी एक फुट चौड़ी एक फुट मोटी पत्थर की एक सीधी चट्टान लाओ इतना सुनते ही भूत पहाड़ की तरफको भागा शिमला, ज्वालामुखी, पहाड़ को देख और एक दौड़ कश्मीरके पहाड़ पर लगाई वहां से दौड़ा चामौर मिर्जापुर के पहाड़ देखे यहांसे दौड़कर अलमोड़ा नैनीताल के पहाड़ों में पहुँचा चट्टानें तो बहुत मिलतीहैं किन्तु सौफीट लम्बी सीधी चट्टान नहीं मिलती घूमते २ हैरान है। आखिर गंगोत्तरी के पहाड़ पर एक चट्टान मिली उस को काट कर ले आया। पंडित जी ने जब भूत और चट्टान को देखा बड़ा क्रोध किया। क्रोध में आकर बोले कि जग से कामके लिये इतनी देर! खबरदार आगे को इतनी देर करेगा तो मारे हंटरों के चमड़ा अलाहिदा कर दिया जावेगा। भूत अपने मन ही मन में सोचने लगाकि पंडित जी तो कुछ हजरत मालूम देते हैं।

पंडित जी ने कहा हाथ में रन्दा लेकर इस चट्टान की चारों कोन घिस कर गोल बनाओ और इस तरह से रन्दा फेरो कि इस चट्टान में चमक आ जावे। भूत बेचारा हाथ में रन्दा लेकर लगा रगड़ा लगाने, दे रगड़ा दे रगड़ा जब उस चट्टान का गोल खम्भा बन गया तब भूत पंडित जी के पास पहुँचा और कहा कि निरीक्षण कीजिये पंडित जी आये और और खम्भे को देखा, देख कर क्रोधित हुए और दो हंटर भूत की कमर में फटकारे, कहने लगे कि मालूम होता है तेरे हाथों में दम नहीं है, इसमें चमक कहाँ है। भूत बेचारा फिर रन्दा

लगाने लगा। जब उसमें चमक आ गई पंडित से कहा कि देखिये, पंडित जी आये और देख कर कहा ठीक है।

पंडित जी ने भूत को बुला कर कहा कि तुम काम तो करते हो किन्तु बड़े सुस्त हो इतनी सुस्ती यदि तुम आगे को करोगे तो हम तुम को कठोर दंड देंगे इस कारण तुम संभल जाओ और काम जल्दी २ करो अब तुम पच्चास फीट गहरा एक गढ़ा खोदो और इस खम्भे को पचास फीट नीचे उतार दो और पचास फीट ऊपर रहने दो जब इतना काम कर चुको तब हमको खबर दो इतना कह कर पंडितजी बैठक में चले गये। भूत की जान आफत में आगई पचास फीट गहरा और एक फुट लम्बा चौड़ा गढ़ा खोदनेलगा। खोदतेर हाथोंमें छाले पड़गये किन्तु गढ़ा खुदनेमें न आया। जैसे तैसे आपत्ति का सामना करते हुए भूत ने गढ़ा खोदा और उस खम्भे को गाढ़ा इतना काम करके भूत पंडित जी के पास पहुँचा। पडित जी आये और देख कर कहा कि ठीक है अब तुम इस के ऊपर चढ़ो ओर उतरो। इतना कहकर पडित जी घर को चले गये। भूत उस खम्भे के ऊपर चढ़ा और उतरा उतर कर पंडित जी के पास पहुँचा कि मैं खम्भे पर चढ़ कर उतर आया अब मुझे काम बतलाइये। इस पर पण्डित जी बोल उठे कि यह बदमाशी ? क्या हमने तुमको यह बतलाया था कि एक मरतबा चढ़ उतर कर हमारे पास आओ याद रक्खो बुरी दशा की जावेगी मद्दी के घड़े में रख कर

जमीन में गाढ़ दिये जाओगे नहीं तो चालाकियों को छोडदो तुम को जब कोई काम बतलाया जावे उस काम को करो और जब कोई काम न हो तो इस खम्मे पर चढो और उतरो भूत का लगा चक्कर कभी ऊपर और कभी नीचे इतने पर भी पंडित जी हाथ में हंटर लिये सामने खड़े हैं और कहते जाते हैं कि जल्दी जल्दी, सात आठ दिनमें भूत घबड़ा उठा हाथ जोड़ कर पण्डित जी के चरणों में गिर पडा, रो कर कहाकि पंडितजी दश हजार के बदले एक लक्ष लेलो किन्तु मेरा पिण्ड छोड़ो पंडित जी बोले अभी से घबरा गया, अभी तो कुछ भी दिन नहीं हुए। भूत ने कहा कि बस अब एकही दो दिन में राम नाम सत्य होने वाला है इस से कृपा कर छोड़ दीजिये पंडित जी को दया आ गई, भूत को छोड़ दिया।

यह एक दृष्टान्त है अब इसका दार्ष्टान्त सुनिये। सेठ जी कौन है क्या इस संसार में एक सेठ हैं अपने अपने घर के सब सेठ हैं इन समस्त सेठों ने एक एक भूत पाला है वह कौन भूत है भूत वही है कि जिसको दुनियां में मन या मनीराम कहते हैं यह मनीराम कभी तो कलकत्ते जाताहै कभी बम्बई। यह एक मिनट में फैसला दे देता है कि मूर्ति पूजन वेदोंमें नहीं, संध्या व्यर्थ, मरे पितरों को अन्न जल नहीं पहुँच सकता इत्यादि अनेक विषयों का फैसला देने के लिये इस मनीराम को एक सेकण्ड से ज्यादा टाइम की आवश्यकता नहीं। यदि आप अपना कल्याण चाहते हैं तो आप अपने हृदय आकाश में राम

नाम रूपी खम्भ गाढ़िये और इस मनीराम भूत को आज्ञा दीजिये कि अब तू इसके ऊपर चढ़ और उतर। ऐसा करनेसे यह मनीराम अपनी बदमाशी को छोड़ सीधा हो जावेगा यदि आप ऐसा नहीं करेंगे तो यह स्वतन्त्र भूत किसी दिन आपकी वह दुर्दशा करेगा कि जिस दुर्दशा की कथा सुन नानी याद आ जाती है।

इसी मनीराम के पंजे में फंस कर रावण ने जनकनन्दिनी भगवती सीता का हरण किया था। इसी मनीराम की आज्ञा में बंधकर दुर्योधन ने महाभारत ठाना था, इसी मनीराम के हुक्म को उठा कर कंस ने ब्राह्मण, वेद, गौ के नाश करने की आज्ञा दी थी और इसी मनीराम का इच्छापूर्ण करने की गर्ज से स्वामी दयानन्द ने नियोग चलाया है।

इसमें किंचिन्मात्र भी संदेह नहीं कि भारत वर्षके संन्यासी द्वारा संसार में व्यभिचार फैलाया जाना शोक! शोक!! महाशोक!!! कहने पर वाध्य करता है किन्तु जब इस पर आप अधिक गौर करेंगे तब आपको पता लग जावेगा कि संन्यासी जी का कोई दोष नहीं दोष उनके मनीराम का है कि जो धर्म को तिलाञ्जलि देकर व्यभिचार में रमण करना चाहता है इसी कारण से एक संन्यासी के द्वारा संसार में व्यभिचार फैलाने का उद्योग किया गया इसके पंजे में फंस संन्यासी जी ने वेदों के कान पूछ ऐंठ धर्मशास्त्रों के गले घोटे तथा पुराणों के अर्थ के स्थान में अनर्थ किये, किन्तु वेदादि

शास्त्रों के प्रमाणों से व्यभिचार को धर्म सिद्ध करने में कुछ उठा नहीं रक्खा। संसार में नियोग को धर्म बतलानेका बीड़ा सब से पहिले स्वामी दयानन्द जी ने ही उठाया है क्यों न हो आखिर कलियुगी महर्षि तो ठहरे।

विभाग।

स्वामी दयानन्दजी सत्यार्थप्रकाशमें नियोगके चार विभाग लिखते हैं। (१) जब किसी स्त्रीका पति मर जावे तो वह स्त्री किसी अन्य पुरुष से नियोग कर ले। नियोग करने के पश्चात् मृतक पति की ल्हाश उठाई जावे। (२) जब कोई मनुष्य विदेश को चला जावे तो उसकी स्त्री यहाँ किसी अन्य पुरुष से मजा उड़ाने लगे। (३) जब मनुष्य किसी रोग या वृद्धापन के कारण सन्तानोत्पत्ति में असमर्थ हो जावे तब वह अपनी स्त्री से कहे कि मैं अब सन्तानोत्पत्ति के योग्य नहीं रहा, अब तू किसी अन्य पुरुष से दोस्ती करके औलाद पैदा कर। इन तीनों ही दशाओं में लड़के आधे २ बांटने होंगे। आधे लड़के स्त्री रख लेगी और आधे उन पुरुषों को मिल जावेंगे जिनसे नियोग किये हों। तीनों ही नियोग में स्वामी जी ने एक पुरुष से नियोग करना नहीं लिखा किन्तु यह लिखा है कि एक स्त्री एक पुरुषसे दो लड़के पैदा करे, एक पुरुषको दे दे और एक आप रखले। फिर दूसरे पुरुषसे नियोग करे, उससे भी दो लड़के पैदा करके लड़कोंका बटवारा करले। इस प्रकार एक स्त्री दश पुरुषोंसे नियोग कर बीस लड़के पैदा करे, दश लड़के

दश नियोग वाले पतियों को एक २ दे दे और दश आप रख ले स्वामी जी की दृष्टि में नियोग में ऐसी करामात है जिस करामात से नियोग करने पर लड़के ही लड़के होते हैं, लड़की होती ही नहीं। तीन नियोग की कथा सुना चुके । नियोग संख्या चार में स्वामी जी लिखते हैं कि यदि गर्भवती स्त्री से न रहा जावे तो वह स्त्री अपने पति से भिन्न किसी अन्य पुरुष से नियोग करे और एक लड़का पैदा करके उसको दे दे। स्वामी दयानन्द जी का सत्यार्थ प्रकाश में लिखा हुआ यह नियोग है और इसका दूसरा नाम वैदिक धर्म है।

फज़ीता ।

स्वा० दयानन्द जी विधवा विवाह को पाप बतलाते हैं अतएव उन्होंने अपने ग्रंथोंमें विधवा विवाह का घोर खण्डन किया है। वर्तमान समय के आर्यसमाजी स्वामी जी को वेदों का विद्वान् तथा वेदों का उद्धार करने वाला परिव्राजक, बालब्रह्मचारी, महर्षि लिखते हैं, उनकी प्रशंसा करते हुये फूले नहीं समाते किन्तु उनके लेख को घृणा की दृष्टि से देखते हुये समस्त लेखों का खण्डन कर रहे हैं। आज कल के आर्यसमाजियोंकी दृष्टिमें नियोग महा पाप है और विधवा विवाह धर्म है। ये स्वामी के विरुद्ध मानते हैं स्वामी जी विधवाविवाह को पाप मानते हैं और नियोग को वैदिक धर्म, आर्य समाजी इनके विपरीत नियोग को पाप और विधवा विवाह को वैदिक धर्म—इस भांति से गुरू चेलों में संग्राम ठना है।

एक स्त्री के ग्यारह पति।

कुछ भी हो स्वामी जी अपने चलाये नियोग की पुष्टि करते हुये सबसे प्रथम एक स्त्री को ११ पति की आज्ञा वेद से सिद्ध करते हैं। इसकी पुष्टि में उनका लेख है कि—

इमान्त्वमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रां सुभगां कृणु।
दशास्यां पुत्रानाधेहि पतिमेकादशं कृधि॥
ऋ० मं० १० सू० ८५ मं० ४५॥

हे (मीढ्व इन्द्र) वीर्य सींचने में समर्थ ऐश्वर्ययुक्त पुरुप तू इस विवाहित स्त्री वा विधवा स्त्रियों को श्रेष्ठ पुत्र और सौभाग्य युक्त कर विवाहित स्त्री में दश पुत्र उत्पन्न कर और ग्यारहवीं स्त्री को मान। हे स्त्री! तू भी विवाहित पुरुप वा नियुक्त पुरुषोंसे दश सन्तान उत्पन्न कर और ग्यारहवें पति को समझ। स्वामीजी ने यहां पर तो पति को ग्यारहवां माना है किन्तु आगे चल कर "सोमः प्रथमो विविदे" मंत्र के ऊपर इस मंत्र का अर्थ ग्यारह पति कर दिया है और इसी अर्थ को लेकर एक स्त्री के ग्यारह पति माने हैं।

इस मन्त्र के अर्थ में बड़ी गहरी चालाकी से काम लिया गया है। इस चालाकी पर हमको एक दृष्टान्त याद आगया प्रथम आप उसको सुनलें और फिर उस दृष्टान्त से इस मन्त्र के अर्थ की चालाकी को मिलावें। वह दृष्टान्त यह है कि—

एक मनुष्य ने किसी देवता की आराधना की, अधिक

दिन तक आराधना करने के पश्चात् देवता प्रसन्न हुआ और प्रकट होकर बोला कि "वरं ब्रूहि" तू वर मांग। इस पुरुष ने कहा कि जो मांगू-वही पाऊं। इसने इस कारण से उसको दोहराया कि संभव है वह देवता वर की चालाकी समझ कर वर देने से इन्कार कर जावे। देवता साहब की बुद्धि उस चालाकी तक न पहुँची। जब यह कहने लगा "जो माँगू सोई पाऊं" इसको सुनकर देवता ने कह दिया कि अच्छी बात है जो मांगोगे वही मिलेगा। इतनी सुन कर यह बोला अच्छा तो दीजिये-मेरा वर यह है कि मैं जब चाहूँ तब तीन वर माँग लूं। देवता ने कहा 'तथास्तु' ऐसा ही होगा। इसके बाद देवता ने कहा कि इस समय तो वर की आवश्यकता ही नहीं क्यों कि तुम्हारे कथन में ही यह आया है कि मैं जब चाहूँगा मांग लूंगा। इस पुरुष ने उत्तर दिया कि इस समय कोई आवश्यकता नहीं। इतना सुन कर देवता अन्तर्ध्यान होगया और वह पुरुष अपने घर को चला गया।

कुछ दिन के बाद उस पुरुष ने देवता को याद किया, याद करते ही देवता आये और आकर पूछा कि क्यों याद किया। उस मनुष्य ने कहा उन तीनों वरों की आवश्यकता है देवता बोला मांगो। इसने कहा प्रथम वर तो यह दो कि मैं लखपती हो जाऊं? देवता बोला "तथास्तु" ऐसा ही होगा यह वर लेकर उस मनुष्य ने कहा अब दूसरा वर यह दो कि मेरा विवाह हो जावे। देवता ने फिर 'तथास्तु' कह दिया

अब इस मनुष्य ने कहा कि अच्छा मैं अब तीसरा वर भी मांग लूं ? देवता ने कहा मांगो। यह मनुष्य बोला अच्छा तो फिर तीसरा वर यह है कि मैं जब चाहूँ तीन वर फिर माँग लूं। लाचार होकर देवता ने कहा कि अच्छा। इतना कह कर देवता अदृश्य हो गया। और वह मनुष्य अपने घर के काम में लगा। तीन महीने का समय नहीं बीतने पाया था कि यह मनुष्य लखपती और चतुर्थ मास में इसका विवाह होगया फिर क्या था- मौज उड़ने लगी किन्तु यह तृष्णा कब चैन लेने देती है,यह तो जितना द्रव्य, ऐश्वर्य देखेगी उतनी ही बढ़ेगी। लाचार तृष्णा भूत के फंदे में फंस कर उस मनुष्य ने फिर देवता को याद किया। देवता ने आकर पूछा कि अब क्यों याद किया ? इस मनुष्य ने उत्तर दिया कि वे तीन वर माँगने हैं। देवता बोले मांगो ? उसने कहा प्रथम वर तो यह दो कि मैं राजा हो जाऊ और दूसरा वर यह दो कि मेरे पुत्र हों। देवता ने फिर वही 'तथ-स्तु' कह दिया। अब यह मनुष्य बोला कि अच्छा तीसरा वर भी माँग लूं ? देवता बोले मांगो। यह मनुष्य तीसरा वर यह है कि मैं जब चाहूँ तीन वर फिर माँग लूं। देवता बोला बहुत अच्छा। दृष्टान्त बहुत बड़ा है उसको यहां पर ही छोड़ कर विचार तो करिये कि क्या कभी किसी जमाने में ये तीन वर पूरे होकर इस देवता का भी पिण्ड छूटेगा ? इस प्रश्न का तो उत्तर ही यह है कि हर्गिज हर्गिज भी छुटकारा नहीं हो सकता क्यों -कि

तीन वर मांगने में चालाकी से काम लिया गया है। जिस प्रकार की चालाकी इन वरों के माँगने में रक्खी है हूबहू इसी प्रकारकी चालाकी स्वामी दयानन्दजीने "इमां त्वमिन्द्र मीढ्वः" इस मन्त्र से ११ पति मांगने में रक्खी है।

प्रथम जब विवाह हुआ तब विवाहित पतिसे ग्यारहपति की आज्ञा माँगी, फिर नियोग वाले से ११ पति की आज्ञा। यदि पूरे नियोग करने पड़े तब तो ११ पतिसे ग्यारह ग्यारह पति की आज्ञा मांगी गई। अब हिसाब वाले जोड़ लें कि कितने पति हये। फिर जितने जितने नियोग बढ़ते जायंगे उतनेही उतने पतिभी बढ़ते जांयगे स्त्री चाहे कितनेही पति कर ले किन्तु वरदानकी भांति जैसे वरदानमें तीन वर की समाप्ति कभी नहीं होती इसी प्रकार अनन्त पति करने पर भी ग्यारह पति तो बाकी ही रहेंगे-यह स्वामीजीके अर्थकी फिलास्फी है।

एक रोज आर्यसमाज की प्रतिनिधि के एक उपदेशक ने मुझ से कहा कि पंडित जी! थोड़ा रंडियों का भी खंडन किया करो। इसके उत्तर में मैंने कहा कि यह तो ठीक है किन्तु स्वामी दयानन्द जी ने तो "इमां त्वमिन्द्रमीढ्वः" इस मन्त्र के अर्थ में कुलाङ्गनाओं को ही वेश्या बना दिया। आप जरा इनको संभाल लें और हम वेश्या नाच आदि का निषेध करलें तो संभव है कि कुछ फल अच्छा हो। कहना यह है कि इस मन्त्र के अर्थ में तो समाजियों ने पतिव्रताओं से वेश्याओंके कान कटवा दिये।

फिर इस मंत्र के अर्थ में एक और भी बेईंसाफी है, वह यह कि पति तो ग्यारह और पुत्र १०। यह क्या ? ग्यारह में से एक कुर्क क्यों ? यदि दैवयोग से इन ग्यारहों की आपस में अनबन हो जावे और अनबनके कारण बटवारा हो तो फिर ये लड़के कैसे बंटें। जरा हिसाब तो लगाओ ? एकादश मनुष्यों को दश लड़के, तो एक एक को कितने कितने मिले ? क्या वही $\frac{10}{11}$। ये कैसे बटेंगे। क्या किसी लड़केका हाथ कटे किसी का पांव, किसी का शिर, किसी का पेट ? इस बटवारे में जीवित एक भी न रहे ? वाहरी फिलास्फी, वाहरी अक्ल, धन्य है इस नियोग और नियोग के लिखने वाले स्वामी दयानन्द को और डबल धन्यवाद है इस नियोग के मानने वालों को, या यों कहिये कि सत्यार्थ प्रकाश के सत्य मानने वाले आर्यसमाजी भाइयों को।

इस मंत्र का अर्थ साक्षी दे रहा है कि स्वामी दयानन्द जी को "लघुकौमुदी" या "सारस्वत" पढ़े हुये विद्यार्थी के तुल्य भी व्याकरण का ज्ञान नहीं था। यदि स्वामी जी लघु कौमुदी या सारस्वत ही पढ़े होते तो फिर "एकादशम्" ग्यारहवें का अर्थ ग्यारह न करते। यदि स्वामी दयानन्द जी को किञ्चित् भी व्याकरण का बोध होता तो 'पतिम्' विशेष्य के विशेषण "एकादशम्" को भूल कर भी बहुवचनान्त न समझ बैठते और "एकादशम्" में जो पूर्णार्थ प्रत्ययहै उसको संख्यार्थ मान कर अर्थ का अनर्थ न कर देते। यदि स्वा० दयानन्द जी को

लघुकौमुदी या सारस्वत के सुबन्त मात्र का भी ज्ञान होता तो वे समझ जाते कि गिनती को कहने वाले 'एकादश' शब्द के आगे प्रत्यय नहीं ठहर सकता और यह "डट" प्रत्ययान्त है, जगह २ गलती खाने का कारण यह है कि स्वामी दयानन्द जी व्याकरण आदि अंगों से अनभिज्ञ थे।

श्रोतागण! आप कहते होंगे कि जिस वेदकी हम अटूट महिमा सुनते थे क्या उस वेदमें इसी प्रकारके अनर्थ भरे हैं? इसके उत्तर में हम यही कहेंगे कि भगवान् वेद बड़ा पवित्र है और पापी मनुष्य को पवित्र बना देने का सर्वोत्तम रास्ता बतलाता है। उसमें कुछ भी दोष नहीं, वेद बड़े गौरव की पुस्तक है और जो यह मनुष्यको पतित और नारकी बना देने वाला विषय है वह स्वा० दयानन्द जीके मनमें समाया हुआ दूषित विषय है, उसको स्वामीजी ने वेदके बहानेसे संसारमें फैलाया है। आप कहते होंगे कि "इमां त्वमिन्द्र मीढ्वः" क्या यह मंत्र वेद में नहीं है? हम कहेंगे कि मंत्र तो वेदमें है। फिर आपके चित्तमें शंका होगी कि क्या इसका कोई दूसरा अर्थ है? इसके उत्तर में हम यही कहेंगे कि आप ठीक मतलब पर पहुँच गये। अब इस मंत्र के वास्तविक अर्थके सुनने की कृपा करें।

विवाह के समय में दूलहा देवराज इन्द्र से प्रार्थना करता है कि कल्याण कारक, वृष्टि करने वाले हे इन्द्र! इस स्त्री को तू सुपुत्रा और सुभगा करना। किस प्रकार। इसमें दश पुत्र उत्पन्न हों और ग्यारहवां मैं पति बना रहूँ।

इस शुभ प्रार्थनाको उड़ा कर जबर्दस्ती से मंत्र के पद तोड़ मरोड़ स्वामी जी ने एक स्त्रीके ग्यारह पतिकी डुग्गी पीट दी। इसके आगे स्वामी दयानन्द जी को एक मंत्र और भी ऐसा मिल गया जो एक स्त्री को ग्यारह पति करने की आज्ञा देता है। वह यह है

सोमः प्रथमो विविदे-गन्धर्वो विविद उत्तरः।
तृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः॥

ऋ० मं० १० सू० ८५ मं० ४०।

हे स्त्री! जो (ते) तेरा (प्रथमः) पहिला विवाहित (पतिः) पति तुझको (विविदे) प्राप्त होताहै उसका नाम (सोमः) सुकुमारतादि गुण युक्त होने से सोम, जो दूसरा नियोग से (विविदे) प्राप्त होता है वह (गन्धर्वः) एक स्त्री से संभोग करने से गन्धर्व, जो (तृतीय उत्तरः) दो के पश्चात् तीसरा पति होता है वह (अग्निः) अत्युष्णता युक्त होने से अग्नि संज्ञक और जो (ते) तेरा (तुरीयः) चौथे से लेकर ग्यारहवें तक नियोग से पति होते हैं वे (मनुष्यजाः) मनुष्य नाम से कहाते हैं।

अब इस पर विचार यह करना है कि स्वामी जी ने जो यह लिखा है कि प्रथम पति 'सोम' नाम से प्रसिद्ध है। वह कहां प्रसिद्ध है? वर्तमान मनुष्यों में या प्राचीन हिस्ट्री में हमें तो मालूम होता है कि स्वामी जी के मन में ही प्रसिद्ध है।

दूसरी जगह इसकी प्रसिद्धि का प्रमाण नहीं मिलता। और यह भी समझमें नहीं आता कि उस पहिले पतिमें ही सुकुमारता क्यों रहती है यदि दूसरा पति सुकुमार हो तो उसकी सुकुमारता कहां चली जाती है। स्वा० दयानन्द जी ने दूसरे पति का नाम 'गन्धर्व' रक्खा और गन्धर्व होने में प्रमाण यह दिया कि उसने एक स्त्री से भोग किया अतएव वह गन्धर्व है अब सोचना यह है कि मनुष्य तो एक के पास गया और स्त्री उससे इबल होगई, समाजियों की दृष्टि में यहां पर समान स्वत्व में तो कुछ बाधा न पड़ेगी? इतना और भी सोचना चाहिये कि इस मनुष्य को स्वामी जी ने विवाह की तरफ से कुर्क ही कर डाला. इसका पहिला ही नम्बर नियोग से चला और मनुष्यों से इस गन्धर्व मनुष्यमें किन गुण दोषोंकी न्यूनाधिकता पाई जाती है कि वे तो विवाह करें और यह नियोग पर हो मारा मारा फिरे। अब इसके आगे स्वामी जी लिखते हैं कि तीसरा पति अत्युष्ण होने से 'अग्नि' संज्ञक है। यह उष्णता कैसी? कहीं इस 'उष्णता' पद से स्वामी जी का अभिप्राय 'आतशक' से तो नहीं है? या बहुत क्रोध से अथवा अग्नि की तरह स्वाभाविक उष्णता से? और यदि सहज उष्णता से है तो इतनी नहीं है कि उसके छूने से स्त्री का शरीर जल जाता हो। जिसमें इतनी उष्णता है उसको जाड़ों में भी पसीना आता होगा और वह जाड़ेमें भी कपड़े न पहिन सकता होगा ऐसे ऐसे नागा बाबा सृष्टि के आरंभ से आज तक किस

किस जाति में कौन कौन हुये तथा वर्तमान समय में ऐसे महात्मा कौन कौन उनके नाम, ग्राम तथा हुलिया स्वामी जी के चेलों ही को बतलाना पड़ेगा। इसके आगे स्वामी जी ने चौथे से ग्यारह तक पतियों को 'मनुष्यजाः' लिखा है, जिस के माने यह हैं कि मनुष्य से पैदा हुये। क्या वास्तविक में ऐसा है? और ये आठो मनुष्य से पैदा हुये हैं? तो पूर्व वाले तीन पति किस जानवर से पैदा हुये थें, यदि कहो कि नहीं २ पैदा तो वे भी मनुष्य से हुये थे, यदि वे भी मनुष्य से पैदा हुये थे तो वे 'मनुष्यजाः' क्यों नहीं? इसके अनन्तर स्वामी जी इन मंत्रों में एक 'नियोग' पद और मिला देते हैं जिस का जिक्र किसी भी मंत्र में नहीं। इस नियोग पद के मिलाने से ज्ञान होता है कि ईश्वर से जो वेद मंत्रों में कमी रह गई; उस कमी को स्वामी जी पूरा कर रहे हैं।

हमारा यह दावा है कि यदि स्वामी जी जरा सा भी व्याकरण जानते होते तो 'तुरीय' शब्द का अर्थ, चौथे से ग्यारह तक, कभी न करते क्यों कि प्रथम तो व्याकरण से जैसे 'द्वितीय' तृतीय शब्द एक वचन सिद्ध होते हैं, इसी प्रकार 'तुरीय' शब्द भी एक वचनान्त है और यदि दुर्जन तोषन्याय से हम 'तुरीय' को बहुवचन ही मानलें तो फिर बहु वचन पद से स्वामी जी 'ग्यारह' पर ही क्यों अड़ गये। बहु-वचन शब्द से तो सैकड़ों, हजारों, लक्षों तथा अनन्तों का भी ग्रहण हो सकता है। इसके आगे स्वामी जी ने "मनुष्यजाः"

शब्द को भी बहुवचन समझ लिया है। यह शब्द संस्कृत व्याकरण से तो एक ही वचनान्त है–शायद स्वामी जी ने यहां पर अंग्रेजी ग्रामर या फारसी ग्रामर से काम लिया हो। जब 'मनुष्यजाः,बहुबचनान्त है तो 'विडौजाः, एक वचनान्त क्यों! शोक है कि जो स्वा०दयानन्दजी वेदोंके अर्थ में इस कदर टक्करें खाते हैं उन को हमारे समाजी भाई महर्षि कहें और उनके लेख को सत्य मान।

अब हम इसका अर्थ दिखलाते हैं देखिये—

गर्भोत्पत्ति के समय से ही सोम देवता के प्रधान आदि कारण होने से (सोमःप्रथमो विविदे) सोमदेव कुमारी कन्या को पहिले प्राप्त होता है अर्थात् सब अंगों में विशेषता से प्रविष्ट होता है (उत्तरः गन्धर्वो विविदे) उस के बाद गन्धर्व देवता प्राप्त होता है। हे कन्ये! (ते) तेरा (तृतीय अग्निपतिः) तीसरा अग्निदेव पति होता है और (ते) तेरा (तुरीयः मनुष्यजाः पति) मनुष्य से उत्पन्न हुआ मनुष्य--चौथा पति होता है।

इस मंत्र का अभिप्राय यह है कि इस मंत्र में चौथे पति को मनुष्य से उत्पन्न कहा है। इसकी अर्थापत्ति से सिद्ध हो जाता है कि सोमादि पहिले तीन मनुष्य से उत्पन्न मनुष्य नहीं हैं किन्तु समस्त वेद शास्त्रों में प्रसिद्ध सोमादि तीनों देवता हैं।

हम इस मंत्र के स्थान में इसी विषय का अन्य मंत्र आगे बतलाते हैं जिस में बहुवचन का कभी भी सन्देह हो नहीं सकता। मंत्र सुनिये।

सोमोददद्गन्धर्वाय-गन्धर्वोददद्ग्नये।
रयिञ्चपुत्रांश्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम्॥

ऋ॰ मं॰ १० अ॰ ७ सू॰ ८॰ मं॰४१।

सोमदेव-इस को कौमार से सर्वथा अनयच संपत्ति करके गन्धर्व के लिये देता है और गन्धर्व अग्नि को तथा अग्निदेव धन और भावी पुत्रों सहित इस पत्नी को मुझे देता है।

दोनों ही मन्त्र एक ही बात को कहते हैं और दोनों में एक वचन है। जबर्दस्ती से कोई बहुवचन बनावे तो इसका संसार के पास क्या जवाब है।

पति मरने पर नियोग।

स्वामी जी पति मरने पर नियोग बतलाते हुये नीचे लिखे वेद मन्त्र से नियोग सिद्ध करते हैं।

उदीर्ष्व नार्यभिजीवलोकं
गतासुमेतमुपशेष एहि।
हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं
पत्युर्जनित्वमभिसंबभूथ॥

ऋ॰ मं॰ १० सू॰ १८ मं॰ ८।

हे (नारि) विधवे! तू (एतं गतासुम्) इस मरे हुये पति की आशा छोड़ के (शेषे) बाकी पुरुषों में से (अभिजीवलोकम्) जीते हुये दूसरे पति को (उपैहि) प्राप्त हो और (उदीर्ष्व) इस बात का विचार और ध्यान रख कि जो

(हस्तग्राभस्य दिधिषोः) तुझ विधवा के पुनः पाणिग्रहण करने वाले नियुक्त पति के सम्बन्ध के लिये नियोग होगा तो (इदम्) यह (जनित्वम्) जना हुआ बालक उसी नियुक्त (पत्युः) पति का होगा जो तू अपने लिये नियोग करेगी तो यह सन्तान (तव) तेरा होगा। ऐसा निश्चय युक्त (अभि संवभूथ) हो और नियुक्त पुरुष भी इसी नियम का पालन करें।

स्वामी दयानन्द जी इस मन्त्र के अर्थ में हिन्दू जातिकी दया का छुरी से गला काटा है। हाय हिन्दू जाति तेरी दया वास्तविक में हिन्दू जाति में जितनी दया है उतनी दया संसार की किसी जाति में नहीं, यदि ऐसा कहा जावे तो मेरी समझ में किंचिन्मात्र भी अत्युक्ति नहीं है। हिन्दू जाति की यदि कोई हानि भी करे तथापि हिन्दू जाति उस पर दया ही करती है। आप औरों को तो जाने दीजिये, जरा एक दृष्टि चूहों पर डालिये, जिनके मारे जेब में रेवड़ियां रखना भी एक आफ़त है, यदि कहीं भूल कर रात को जेब में रेवड़ियां रह जावें तो रात ही भर में रेवड़ियां और जेब दोनों नदारद। वस्तुतः चूहे आपका बड़ा नुकसान करते हैं, गल्ले के बोरों की तो कौन कहे लकड़ी के सन्दूकों तक में हमला करके भीतर ही बैठ कर भोग लगाते हैं। चूहों के सामने बड़े बड़े कीमती कपड़े भी टाट की हैसियत रखते हैं इनके मारे हमारी और आपकी नाक में दम रहती है; इतने पर भी यदि आपके

घर से बिल्ली चूहा पकड़ कर ले जावे तो आप उसके पीछे लकड़ी लेकर दौड़ते हैं, आप बिल्ली के मारने और चूहे के छुड़ानेमें पूर्ण कोशिश करते हैं। क्यों जनाबमन ! यह क्या बात है, आप इस चूहे के बचाने पर क्यों कटिबद्ध है ? यह तो आपके घर का कुछ न कुछ नुक्सान ही करता है। इस पर आप यही कह उठते हैं, कि पंडित जी महाराज ! यह सब कुछ ठीक है किन्तु इस समय पर चूहे पर जो कष्ट पड़ा है वह हम से देखा नहीं जाता। यह हिन्दू जाति की दया का नमूना है, यह हिन्दुओंका एक स्वाभाविक धर्म हो गया है कि सबको दया की दृष्टि से देखते हैं।

कहीं हिन्दू बैठा हो और उस समय छत पर से चिड़िया का बच्चा गिर पड़े तो उस गिरे हुये बच्चे को देख कर उस हिन्दूके चित्तमें कष्टकी तरंगे उठ बैठती हैं, वह दो चार बार तो अपने मुख से "राम राम" कहता है और फिर उस बच्चे को उठा कर दीवाल के किसी ऊंचे आले में रखता है। वह यह भी जानता है कि अब इसकी माता इसको न छुयेगी-वह तो मनुष्य के स्पर्श करते ही बायकाट कर बैठती है तथापि उस के ऊपर भी अपनी दया से काम लिये बिना नहीं रहता। और यदि कहीं किसी दिन हिन्दू के मुहल्ले में किसी मनुष्य या स्त्री की मृत्यु हो जावे तो मृत्यु वाला प्राणी चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, ईसाई हो या आर्यसमाजी, जब तक मृतक शरीर मुहल्ले से उठ न जावेगा हिन्दू मात्र के चूल्हे

में आग न सुलगेगी। और जो कहीं ऐसा अवसर आगया कि दिनमें मुर्दा न उठा, रातको कहीं रह गया तो फिर हिन्दू लोग तो अन्न और जल दोनों को छोड़ कर उपवास ही करेंगे। जितनी दया हिन्दू जाति में मौजूद है उतनी दया अपने हृदय में लाने के लिये दूसरी जातियों को सैकड़ों वर्ष तक अभ्यास करने की आवश्यकता होगी। किन्तु स्वामी दयानन्द जी आज उस हिन्दुओं की दया को बाजीगर की भांति आनन फानन में चुटकियों से उड़ाये देते हैं। भला इन समाजी सभ्योंसे यह तो पूछो कि जिस स्त्रीका पति मर गया है, जिस स्त्री के हृदय में अत्यन्त दुःख भरा है, जिस स्त्री को आज स्वर्ग तुल्य घर कारागार दिखलाई दे रहा है, जो दुःख सागर में डूब कर आँखों से आंसुओं की धारा बहा रही है, जिस के आगे प्राण प्यारे पति की लहाश पड़ी है। उस स्त्री को उस समय में दूसरा पति करने के लिये कहनेको तो कोई कठोर हृदय वाला मनुष्य भी तैयार न होगा जिस विषय या जिस कार्य को कठोर हृदय वाला भी मनुष्य नहीं कह सकता, भला फिर इस कठोर वचन को दयालु हिन्दू मनुष्य अपने मुख से कैसे कहेगा ?। इस कठोर वचन का कहना स्वा० दयानन्द और उन के प्राण प्यारे शिष्यों की बुद्धि भले ही स्वीकार करले, ये दोनों दया को दोनों हाथ से तिलाञ्जलि देकर भले ही खुदगर्जी में फंस जावें; ये लोग भले ही अपनी पट्टी जमाने की कोशिश करें, किन्तु हिन्दू जाति का

हृदय इतना कठोर नहीं हुआ है कि जो ऐसे कुसमय में इस विषय में जबान खोल बैठे। स्वामी जी के इस अनर्थ और कठोर हृदय पर दृष्टि डाल कर ही समाजियों ने महर्षि का पद दिया होगा। क्यों न हो, आखिर कलियुगी ही महर्षि तो ठहरे।

अलावा कहने के इतना विचार और भी करना है कि इस नये क़ानून के मुताबिक जब हिन्दू जाति इस कार्य को करने लगेगी तब दूसरी जातियों के सन्मुख इस का मान और इस की प्रतिष्ठा कैसी रहेगी? फिर अर्थ भी कैसा कि ' इस मरे हुये की आशा छोड़ के बाकी के पुरुषों में से जीवित दूसरे पतिको प्राप्त हो"। इस कथनसे प्रतीत होता है कि उन बाकी के मनुष्योंमें भी कुछ जीवित और कुछ मृतक हैं, नहीं तो "बाकी के पुरुषों में से जीवित" यह कहना कैसा? जरा सी एक दृष्टि इस पर डाल कर थोड़ी देर अपने मन में बिचार करिये कि यह कैसा लेख है और इस का क्या अर्थ है? इस लेख में इतनी गहरी फिलास्फी भरी है कि जिस को स्वा० दयानन्द और उन के शिष्यों की ही बुद्धि कबूल कर सकती है। फिर मंत्र क्या ठहरा—भानमती का पिटारा ठहरा। उस में नियोग की विधि और नियोग के नियमादि समस्त व्यवस्था निकल आई। क्या कोई आर्यसमाजी मंत्र के अक्षरों में से यह अर्थ निकालेगा? यदि किसी का साहस हो तो लेखनी क्यों नहीं उठाता? यदि मंत्रके अक्षरोंमें यह अर्थ नहीं, तो आर्यसमाजी

साफ साफ क्यों नहीं कहते कि मंत्र में नियोगादि नहीं-किन्तु स्वामी जी ने अपने मन के भावों को मंत्र के बहाने से लिखा है ?। संभव है आप यह प्रश्न कर बैठें कि क्या यह मंत्र सच ही वेद में है ? इसका उत्तर हम देंगे कि हां-मंत्र तो यह अवश्य वेद में है। इसके बाद संभव है आप यह भी प्रश्न करें कि क्या इस मंत्र को आप भी मानते हैं, इसके उत्तरमें तो हम यही कहेंगे कि हम तो समस्त ही वेद को मानते हैं दयानन्दीय समाज की भांति वेदानुयायी नहीं हैं जो ११२७ शाखाओं को तो छोड़ दें और चार शाखाओं को वेद मानें। हम तो वेद के अक्षर अक्षर को मानते हैं फिर इस मंत्र को मानते हैं यह प्रश्न कैसा ?। इसके बाद आप यह कह उठेंगे कि तो फिर कुछ अर्थ में फर्क है ? इसके उत्तरमें हम यही कहेंगे कि आप तो असली बात पर ही पहुँच गये। कुछ फर्क कि जमीन आसमान का फर्क। अब आप हमारे अर्थ को पूछ बैठें अतएव हम अपना अर्थ भी सुनाये देते हैं। इस मंत्र का अर्थ यह है कि—

हे नारि ! मृतक पत्नि ! जीवित पुत्र पौत्रादि और निवास घर को देख कर इस स्थान से उठ, तेरे बिना पुत्रादिकों का पालन कौन करेगा ? इस मृतक के समीप जो तू पड़ी है यहां से उठ, चल। कारण यह है कि विवाह समय में हस्तग्रहण करने वाले तथा गर्भाधान करने वाले इस पति के सम्बन्ध से प्राप्त हुये तुम्हारे इस पत्नीपन को देख कर पति के साथ मरने का जो निश्चय किया है, इस निश्चय को छोड़ कर उठ।

यह इस मंत्र का अर्थ है। जिस समय पत्नी को मृतक पति से अलाहिदा किया जाता है, उस समय इस मंत्र का बोलना लिखा है यह अर्थ हम अपने मनसे गढ़कर नहीं लिखते किन्तु इस पर आश्वलायन गृह्यसूत्र का भी यही लेख है। "उदीर्ष्व नारी" इस मंत्र का "संकुसुक" ऋषि "पितृमेध" देवता "त्रिष्टुपछन्द" तथा "अंत्येष्टिकर्म" में इस का विनियोग है। इस के ऊपर आश्वलायन गृह्यसूत्र लिखता है कि—

उत्ततः पत्नीम् ॥ १६

अर्थात् मृतक के उत्तर की तरफ पत्नी को बिठलाया जावे।

धनुश्च क्षत्रियाय ॥ १७

यदि मृतक शरीर क्षत्रिय है तो मृतक के उत्तर की तरफ धनुष रक्खे और पत्नी न बैठे।

तामुत्थापयेद्देवरः पतिस्थानीयोन्तेवासी जरद्दासो वोदीर्ष्वनार्यभिजीवलोकमिति ॥ १८

मृतक पति के समीप से उसका देवर और देवर के अभाव में कोई पड़ोसी या बूढ़ा नौकर "उदीर्ष्व नारी" इस मंत्र को बोल के उस स्त्री को उठावे।

कर्ता वृषले जपेत् ॥ १९

यदि उठाने वाला शूद्र है तब मंत्र को न बोले क्यों कि शूद्रको वेदका अधिकार नहीं। इस सन्देहको दूर करनेके लिये

यह सूत्र है। इस का अर्थ यह है कि कर्ता शूद्र हो तो इस मंत्र को एकान्त में बैठ कर आचार्य जपे।

हमने जो अर्थ किया, आश्वलायन गृह्यसूत्र उस की पुष्टि करता है। संभव है आप इतने पर भी इस प्रश्न को उठा दें कि अब किस का अर्थ सही समझा जावे। इस के ऊपर हम और कुछ भी न कह कर जज आप को ही बनाते हैं और हम सबूत देकर बैठते हैं। प्रथम तो स्वामी जी का अर्थ सभ्यता के बाहर है, मुर्दे की ल्हाश फुकने नहीं पाई कि उस से पहिले ही दूसरा पति करले-यह कहना कैसा ?। दूसरे स्वामी दयानन्द जी ने "शेषे" क्रिया का अर्थ "बाकी" किया, जो त्रिकाल में भी समाजी सिद्ध नहीं कर सकते। और फिर उस "शेषे" एक वचन का बहुवचन कर दिया जो किसी भाषा के भी विद्वान् मानने को तैयार नहीं। तीसरे यदि स्वा० दयानन्द जी का ही अर्थ ठीक मान लिया जावे तो फिर इन चार सूत्रों की क्या गति होगी ? क्या धनुषको भी नियोग कराया जायगा ? चतुर्थ—सायणादि भाष्यकार स्वामी दयानन्द के विपरीत हमारे अर्थ को लिख रहे हैं। पंचम—यदि वेद के इस मंत्र में यही अर्थ है तो क्या इस अर्थ का एक भी ऋषि को ज्ञान न हुआ ? यदि उनको इस अर्थ का ज्ञान हुआ तो फिर बतलाओ कि इस अर्थ को किस किस ऋषि ने समझ कर किस किस स्त्री के पति की ल्हाश पड़े रहते कौन कौन स्त्री का नियोग कराया ; इन प्रश्नों को आगे रखते ही समाजी क्रोध करके भाग जाते हैं। बस इन पांच प्रमाणों से

श्रोता निर्णय करलें कि कौन अर्थ शुद्ध और कौन अर्थ अशुद्ध है। इस मन्त्र में तो नियोग की वासना भी नहीं। हां यह बात अवश्य है कि स्वामी दयानन्दजी के मनमें भरा व्यभिचार (नियोग) इस मन्त्र के टीका में दिखला दिया है। सत्यार्थ प्रकाश का खण्डन करते हुये मिश्र पं० ज्वालाप्रसाद जी ने दयानन्द जी के इस मन्त्र के अर्थ की करतूतें दिखला दी थीं किन्तु उसके ऊपर 'भास्कर प्रकाश' लिखते समय पं० तुलसीराम जी को मौन ही धारण करना पड़ा और यदि विचार किया जावे तो पं० तुलसीराम जी ने युक्त ही किया। स्वामी दयानन्द जी के गपोड़ों का कोई कहां तक उत्तर दे। इस से यह अच्छी भांति सिद्ध हो गया कि इस मन्त्र में नियोग का नाम भी नहीं-केवल स्वामी दयानन्द जी की बनावट है।

असामर्थ्य में नियोग।

इसके आगे स्वामी दयानन्द जी को एक मन्त्र और ऐसा मिल गया कि जिसमें से नियोग साहब निकल कर उछलते कूदते दयानन्द जी के सामने आडटे। स्वामी दयानन्द जी भी महात्मा थे, उन को दिव्य दृष्टि से वेद के सैकड़ों मन्त्रों में नियोग दीखता होगा। उन्हीं मन्त्रों में से एक यह भी मन्त्र है कि जिसमें से निकल कर नियोग सामने आया है। कृपा कर इस मन्त्र को भी देख लें।

अन्यमिच्छस्व सुभगे पतिं मत्।

ऋ० मं० १६ सू० १० मं० १०

जब पति संतानोत्पत्ति में असमर्थ होवे तब अपनी स्त्री को आज्ञा देवे कि हे सुभगे ! सौभाग्य की इच्छा करनेहारी स्त्री तू (मत्) मुझसे (अन्यम्) दूसरे पति की (इच्छस्व) इच्छा कर क्यों कि अब मुझसे संतानोत्पत्ति की आशा मत करे।

यह मजे की रही कि अब मैं तो कुछ कर नहीं सकता और तू हाँ ००० । हमें स्वामी दयानन्द जी के इस घृणित लेख पर क्रोध आता है । जब एक सांड़ ऋतु धर्म वाली गौ के पास दूसरे सांड,को नहीं आने देता ? इसी प्रकार एक भैंसा दूसरे भैंसे को मारने को दौड़ता है ? अपनी कुत्ती की रक्षा करने के लिये कुत्ता दूसरे कुत्तों के प्राण तक लेने को तैयार हो जाता है ? तब आर्यसमाजी—मनुष्य हो कर अपनी स्त्री को दूसरेके पास जानेकी कैसे आज्ञा देंगे ? क्या उनका मन पशुओं से भी भ्रष्ट हो गया जो उन की स्त्री ००० करेगी और वे तमाशा देखेंगे ? धन्य है स्वामी जी को जिन्हों ने वेद का यह नया अर्थ बनाया है और धन्य है उन आर्यसमाजियों को जो स्वामी जी के इस निर्लज्ज लेख को वेदाज्ञा मानते हैं।

फिर स्वामी जी ने वेद मन्त्र भी कैसा दिया । मन्त्र के तीन चरण तो हजम कर लिये, केवल मन्त्र की पूंछ ही आगे रक्खी । सब मन्त्र नहीं रक्खा । यदि सब मन्त्र लिखदें तो मन्त्र में नियोग की गंध भी न रहे । पूरा मन्त्र देखिये—

आघाता गच्छानुत्तरा युगानि ।
यत्र जामयः कृणवन्नजामि ॥

उपवर्बृहि वृषभाय बाहु-
मन्यमिच्छस्व सुभगे पतिं मत् ॥

ऋ० मं० १० अ० १ स० १०/मं० १०

यह मंत्र यम यमी सूक्त का है। यमदेव कुछ बड़े थे और यमी बहुत छोटी थी, उसको संसार के धर्मों से अनभिज्ञता थी। एक दिन एक बरात चली जा रही थी, उस बरात में घोड़े पर चढ़े हुये वर को देख कर यम सेपूछा कि भइया! यह घोड़े पर जो चढ़ा है – कौन है? और घोड़े पर क्यों चढ़ा है? तथा ये बहुत से लोग इसके साथ क्यों जा रहे हैं? इसके ऊपर यमने कहा कि बहिन! यह दूल्हा है और इसका विवाह है, यह विवाह करने के लिये जाता है। यह सुन कर यमी ने कहा आओ भइया हमारा और तुम्हारा विवाह हो जाय? यमदेव बोले कि (आघाता आगच्छानि आगमिष्यन्ति उत्तरा युगानि) आगे को आवेंगे वे दुष्ट युग कि (यत्र जामयः अजामि कृणवन्) जिसमें भाई बहिनसे अयोग्य कार्यको बहिन से करेंगे (हे सुभगे मत् मत्तः अन्यं पतिं इच्छस्व) हे सौभाग्यवती! तू मेरे से अन्य पति की इच्छा कर, मेरी इच्छा तो तू कभी अपने मन में भी नहीं करना (वृषभाय बाहुं उपवर्बहि) योग्य पति के वास्ते तू अपने हस्त को ग्रहण कर वाले। यह यमी सगोत्रा है इससे सिद्ध है कि समान गोत्र में विवाह नहीं होता।

अब यहां पर विचार कर देखिये कि समस्त मंत्र में यम यमी की कथा है या नियोग। इस मंत्र पर तो भास्कर प्रकाश कर्त्ता पं० तुलसीराम जी रात्रि दिन का रूपक लगाते हैं। यद्यपि इसमें रात्रि दिन का रूपक नहीं है तथापि पं० तुलसी-राम के दूसरे अर्थ करने से दयानन्द का कल्पित नियोग इस मंत्र से निकल ही भागा अर्थात् पं० तुलसीराम के अर्थसे भी यह सिद्ध है, कि इसमें नियोग नहीं, नियोग की कल्पना तो स्वामी दयानन्द ने अपने मन से गढ़ी है।

भगिनी भाई का धरम—रहा मंत्र बतलाय।
मन दूषित जिनका हुआ—उन्हें नियोग दिखाय॥

विदेशगमन पर नियोग।

स्वामी दयानन्दजीके इस नियोग पर बड़ी हंसी आती है। जिस समय स्वा० दयानन्दजी नियोग लिखने बैठे उस समय इस विषय का एक श्लोक मिल गया वह यह है कि —

प्रोषितो धर्मकार्यार्थं प्रतीक्ष्योऽष्टौ नरः समाः।
विद्यार्थं षड्यशोर्थं वा कामार्थं त्रींस्तु वत्सरान्॥

स्वामी दयानन्द इसके अर्थ में लिखते हैं कि "विवाहित पति धर्म के अर्थ परदेश गया हो तो आठ वर्ष, विद्या और कीर्ति के लिये गया हो तो छः और धनादि की कामना के लिये गया हो तो तीन वर्ष तक बाट देख कर पश्चात् नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कर ले, जब विवाहित पति आ जावे तब नियुक्त पति छूट जावे।

क्या बढ़िया फिलास्फी है। स्वामी दयानन्द के मत में बाबू लोगों की रुचि कुछ अधिक रहती है अतएव एक दृष्टि बाबू लोग हमारे ही कहने से इस श्लोकके अर्थ पर डाल देखें यदि कोई पढ़ने के लिये विलायत चला जावे। और दैवयोग से छः वर्ष न आ सके तो घर में क्या हो, जरा इसको तो विचारो। जो विवाहित पति सातवें वर्ष सार्टीफिकेट लेकर घर में आवे तो एक सार्टीफिकेट धर्म पत्नी के पास यहां भी तैयार है। और यदि रंगून आदि किसी शहर में नौकरी को चला जाय और दैवयोगसे तीन वर्ष न आ सके तो यहां तो धर्मपत्नी का ही बैनामा होजावेगा। स्वामी दयानन्द जी ने क्या मजे का तरीका निकाला है कि बेचारे गरीब भारतवासी विद्या और धन आदि उपार्जनके लिये विदेशयात्रा कदापि न करें, घर में ही बैठे सड़ा करें अन्यथा निज स्त्री से भी हाथ धोना पड़ेगा।

मैंने सुना है कि कोई आर्यसमाजी पुरबिया मनुष्य परदेश को गया और दश बारह वर्ष में परदेश से लौटा, जब वह घर आया तो क्या देखता है कि दरवाजे पर उसकी स्त्री खड़ी है और एक लड़का दरवाजे की देहली पर बैठा है। जब वह घर से गया था उस समय तो उसके कोई बाल बच्चा था ही नहीं उस लड़के को किसी दूसरे का समझ अपनी स्त्रीसे पूछा कि "यह कनकऊवा कैका" अर्थात् यह लड़का किसका है? स्त्री बोली "वेद दुहाई तैंका" वेद की कसम तेरा है। उस बेचारे

ने मत्थे पर हाथ रख कर कहा कि "धन्य हमारे कर्मा" औरत ने उत्तर दिया "दो खेलत हैं घरमां" यह और भी घबरा कर बोला "धन्य हमारे भाग।" औरत ने उत्तर दिया कि 'मैं फागुन की ग्याभा'।

यदि स्वामी दयानन्द की कुछ चल गई और समाज उन्नति पा गया तो घर घर में यही कहानियां होंगी और चाहे पति घर में हो या बाहर, स्त्रियों के तो रोज़ ही गुल छर्रे उड़ा करेंगे कैसी अच्छी तरकीब निकाली, स्त्री जातिकी सब तकलीफ मिटादी। आप यह कहते होंगे कि क्या सचही यह श्लोक मनु का है ? हम कहते हैं हां मनुका तो है, अब आप यह प्रश्न करेंगेकि क्या आप इस श्लोकको मानतेहै ? हाँ हम भी मानतेहैं तोफिर बात क्या है कुछ अर्थ में फर्क? जी हां कुछ फर्क या ज़मीन आसमान का फर्क। अब इस पर मनु का फैसला सुन लीजिये। प्रसंग वश इसके पीछे के दो श्लोक और भी देते हैं।

विधायवृत्तिं भार्यायाः-प्रवसेत्कार्यवान्नरः ।
अवृत्तिकर्षिताहिस्त्री-प्रदुष्येत्स्थितिमत्यपि॥७४
विधाय प्रोषिते वृत्तिं-जीवेन्नियममास्थिता।
प्रोषिते त्वविधायैव-जीवेच्छिल्पैरगर्हितैः ॥७५
प्रोषितो धर्मकार्यार्थं-प्रतीक्ष्योऽष्टौ नरः समाः ।
विद्यार्थं षड्यशोऽर्थं वा-कामार्थं त्रींस्तुवत्सरान्॥७६॥

मनु० अ० ६

जब पति परदेश को जाय तो स्त्री के खान पान का प्रबन्ध करके जाय, क्योंकि जीविका के प्रबन्ध बिना (स्थितिमति) नेक स्त्री भी दूषित हो जाती है। ७४। यदि पति खान पानका प्रबन्ध कर जाय तो स्त्री पतिके परदेश रहते उबटना, तेल, इतर न लगावे, अधिक पुष्ट भोजन न खाय, इत्यादि नियमों में स्थित होकर अपना कालक्षेप करे और यदि पति वृत्ति का कुछ प्रबन्ध न कर जावे तो फिर स्त्री को चाहिये। कि अनिन्दित दस्तकारी (अपने हाथ के काम सीना पिरोना या काढ़ना आदि) से गुजर करे किन्तु कोई निन्दा का काम न करे। ७५। यदि पति धर्म के लिये परदेश गया हो तो आठ विद्या और यशके लिये गया हो तो ६, यदि किसी और काम को गया हो तो तीन वर्ष उस की प्रतीक्षा करे। इस के बाद क्या करे? वसिष्ठ स्मृति लिखती है कि "अत ऊर्ध्वं पतिसकाशं गच्छेत्" इस के बाद फिर वह अपने पति के पास वहाँ चली जावे कि जहां उस का पति है।

पूर्वोक्त तीन प्रकार के नियोगों में जो प्रमाण दिये गये हैं, न तो उन में नियोग की विधि है और न नियोग शब्द है फिर नहीं मालूम नवीन अर्थ बना कर जबर्दस्ती से नियोग क्यों सिद्ध किया जाता है। हम को तो यही मालूम होता है कि स्वामी दयानन्द के मन में व्यभिचार घर कर गया है उस को श्रुति स्मृति के बहाने से नियोग शब्द कह कर प्रचलित करना चाहते हैं। आज तो स्वामीजी को श्रुति-स्मृति, पुराण

इतिहासरूप संस्कृत साहित्यमें नियोग शब्दसे भिन्न कोई शब्द ही नहीं दीखता। इसको हम एक दृष्टान्त से स्पष्ट करेंगे।

महाराष्ट्र देश का एक मनुष्य यू० पी० में विवाहा था, उस की स्त्री अपने पिता के घर आई हुई थी। विचार हुआ कि अब स्त्रीको ले आवें। उसको काम अधिक था इस कारण अपने भाई से कहा कि तुम अपनी भौजाई को ले आओ, छोटे भाई ने स्वीकार किया और यह कहा कि मुझ को कष्ट होगा, मैं यू० पी० की बोली नहीं जानता। भाई ने समझाया कि यहाँ से तुम रेल में बैठोगे फिर स्टेशन से उतर कर ससुराल में चले जाना, ससुराल का मकान तुम्हारा देखा हुआ हुआ है. वहाँ पर तुम्हारी भौजाई महाराष्ट्र भाषा जानती ही है, उसी से बात चीत कर लेना और लेते आना, अधिक कष्ट न होगा। वह अमरावती से टिकट लेकर भाई की ससुराल फतेहपुर को चला, चलते चलते झाँसी निकल आया। एक पटरी पर चुपचाप बैठा था, रेल चलने पर इस के पास बैठे हुये दो आदमी बातें करने लगे। एक मनुष्य बातों के बीच बीच में "हाँ-हाँ" कहता जाता था। जब इसने बार बार 'हां' सुना तब 'हां' इस को याद हो गई। दिल में बड़ी खुशी हुई कि हम भी यू० पी० की बोली सीख गये। यह ससुराल में पहुँचा, दरवाजे पर ससुर मिले, प्रणाम के बाद इन को अच्छे प्रकार से बिठलाया और पूछा कि 'सब प्रसन्न हैं? इस ने उत्तर दिया 'हां'। फिर ससुरने पूछा कि क्या दक्षिण में पानी

बिल्कुल नहीं वर्षा ? इसने कहा 'हां'। ससुर बोलाकि मनुष्य भूखों मरते होंगे ? यह बोल उठा 'हां'। ससुर कहने लगा हजारों मनुष्य मर गये होंगे ? इसने जवाब दिया कि 'हाँ'। ससुर ने कह उठाया कि तुम्हें भी अन्न नहीं मिलता ? इस ने कहा 'हाँ'। क्या तुम्हारे बाप भूखे मर गये ? जवाब दिया 'हां' भाई भी मर गये ? बोला 'हां'। ससुर ने सब खबरें घर में लड़की से कह दीं, घर में हाहाकार पड़ गया। इसने डेढ़ दिन से खाना नहीं खाया था, मारे भूख के प्राण निकलने लगे। भौजाई की जब चूड़ियां फूट गईं तब दूसरे दिन रोटी मिली। जैसे इस मनुष्य को समस्त उत्तरों में 'हां' सूझती थी क्यों कि 'हां' इस के मन में भर गई थी। इसी प्रकार स्वामी जी के मन में नियोग भर गया है और उन को समस्त प्रमाणों में नियोग सूझता है, बलिहारी है इस विज्ञान की।

गर्भ पर गर्भ

चतुर्थ नियोग में स्वामी जी लिखते हैं कि "गर्भवती स्त्री से एक वर्ष समागम न करने के विषय में पुरुष वा स्त्री से न रहा जाय तो किसी से नियोग कर के उस के लिये पुत्रोत्पत्ति कर दे"। द्वितीयावृत्ति सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ १२०।

पूछना यह है कि जब तक एक गर्भ पेट में बैठा है और पेट भर को घेरे है तो दूसरा गर्भ अब कहां धंसेगा तथा किस प्रकार पुत्र पैदा कर के नियोग वाले को दिया जावेगा ? यह नियोग तो प्रत्यक्षके भी विरुद्ध है और इस प्रकार का नियोग

किस वेद मंत्र में लिखा है ? प्राचीन समय में हम शास्त्रार्थ में इस नियोग को रख कर समाजी उपदेशकों से पूछा करते थे, कि इस नियोग के आधार का वेद मंत्र बतलाओ ? तब आर्य-समाजी कहा करते थे स्वामी दयानन्द जी महर्षि थे, वे ऐसे ही नहीं लिख सकते थे, उन को कुछ न कुछ प्रमाण मिला होगा, उसी के आधार पर लिखा है। इतना कह कर शास्त्रार्थ हार जाया करते थे। कहीं 'कुछ न कुछ' में भी जीत हुई है ? 'कुछ न कुछ' जिस के पीछे पड़ जाता है उस को भागना ही पड़ता है। इस के ऊपर हम एक दृष्टान्त सुनाते हैं।

एक गवाँर मनुष्य अपनी ससुराल को चला। चलते समय उस की माता ने दो पैसे देकर कहा कि रास्ते में "कुछ खा लेना"। वह जब दश मील गया तब रास्ते में एक बाजार मिला। बाजार में हलवाई की दूकान पर जाकर हलवाई को दो पैसे दिये और कहा कि "दो पैसे का कुछ दे दो"। हल-वाई ने पैसे लेकर पूछा लड्डू दूँ, या जलेबी अथवा पेड़ा। इस ने उत्तर दिया "कुछ दे दो"। हलवाई ने फिर समस्त मिठा-इयों का नाम लिया और अन्त में कहा कि जो चाहें वह आप ले लें। यह बोला तुम्हारी बतलाई चीजें हम नहीं लेंगे-हमें तो "कुछ दे दो"। हलवाई के नाक में दम हो गया। हल-वाई का लड़का बड़ा धूर्त था, वह बोला कि तुम चुप कर जाओ, पैसे रख लो, हम इस को "कुछ देते हैं"। दूकान में करीब तोल में आधपाव के एक टुकड़ा जिमीकन्द का रक्खा

था, वह इस को दे दिया और देते समय कहा कि "लो-कुछ लो"। इसने ले लिया और वहां से चल दिया। रास्ते में एक कुएं पर स्नान किया और उस को लगा खाने। जिमीकन्द बड़ा तीक्ष्ण होता है। उस के चबाते चबाते मुख और जीभ में घाव हो गये, खून बहने लगा। इस ने थूक दिया और खूब कुरला किया। मुख में दर्द भयंकर हो गया था, उसी दर्द में सायंकाल यह ससुराल पहुँच गया। इसके सालेने पैर धुलाये और प्रार्थना कि "कुछ खालो"। इसने समझा, वही यहां भी खाना पड़ेगा, इस कारण साफ इन्कार कर दिया कि मुझे भूख नहीं है। आज मैं नहीं खाऊंगा। रात को भोजन के बाद इस का साला इसके पास बैठ कर बात करने लगा कि आज आपने कुछ नहीं खाया, हमें बड़ा दुःख है। इस ने उत्तर दिया कि दूसरी बात नहीं है, हम अवश्य खा लेते किन्तु हमें भूख ही नहीं है। साला-बोला अच्छा, प्रातःकाल जल्दी उठिये, पाखाने हो, स्नान कर जल्दी "कुछ खा लीजिये" यह अपने मन में विचारने लगा कि अब हम क्या करें, अब तो हमने जैसे कैसे खाना मुल्तवी ही कर दिया किन्तु सुबह तो "कुछ खाना ही पड़ेगा"। और जो कहीं सुबह कुछ खा लिया तो फिर हमारा बचना मुश्किल हो जावेगा। साला तो उठ गया और यह इसी विचार में पड़ गया। नींद न आई। अन्त में 'कुछ' खाने के भय से तीन बजे रात से ही भग दिया।

'कुछ' की विकट कथा है। स्वामी जी ने 'कुछ न कुछ'

समझ कर लिखा इसके शास्त्रार्थ में हमारे सामने से दिल्ली में दर्शनानन्द भागे , बेहदर में नन्दकिशोर देव भागे शहर मीरपुर राज्य जम्मू में लाहौर प्रतिनिधि के उपदेशक रामगोपाल भागे और औरास में शिवशर्मा भागे। अन्त में आर्यसमाज ने चतुर्थ नियोग पर विचार किया और इसको सत्यार्थ प्रकाश से निकाल डाला। 'जादू तो वह जो शिर पर चढ़कर बोलै' अबतो आर्यसमाज ने भी मान लिया कि दयानन्द के लेख सर्वथा मिथ्या होते हैं।

देवर से नियोग।

इन चार प्रकारके नियोगोंमें से समस्त नियोग अन्यपुरुषों के साथ बतलाये हैं किन्तु स्वामीजी को जब इन चार प्रकार के नियोगोंसे भी सन्तोष न हुआ तब पाचवाँ नियोग देवर के साथ बतलाते हुये वेदसे पुष्टि करतेहैं। वेदके प्रमाण सुनिये।

अदेवृघ्न्यपतिघ्नी हैधि
शिवा पशुभ्यःसुयमाः सुवर्चाः।
प्रजावती वीरसूर्देवृकामः
स्योनेममग्निं गार्हपत्यं सपर्य ॥

अथर्व० काँ० १४ अनु० २ मं १८

हे (अपतिघ्न्यदेवृघ्नि) पति और देवर को दुःख न देने वाली स्त्री तू इस गृहाश्रममें (पशुभ्यः) पशुओंके लिये (शिवा) कल्याण करने हारी (सुयमाः) अच्छे प्रकार धर्म नियम में

चलने (सुवर्चाः) रूप और सर्वशास्त्र विद्यायुक्त (प्रजावती) उत्तमपुत्र पौत्रादिसे सहित (वीरसूः) शूर वीर पुत्रों को जनने (देवृकामा) देवर की कामना करने वाली (स्योना) और सुख देने हारी पति वा देवर को [एधि, प्राप्त होके (इयम्) इस [गार्हपत्यम्] गृहस्थ सम्बन्धी [अग्निम्] अग्निहोत्रको [सपर्य] सेवन किया कर।

इस मंत्र में और तो कोई झगड़ा नहीं है सिर्फ 'अदेवृघ्नी, और "देवृकामा" ये दो पद आये हैं। जिन का मतलव यह है कि देवर को न मारने वाली और देवर पर ममता अथवा मेरे देवर हो इस बात की इच्छा रखने वाली हो। अब प्रश्न यह है कि क्या पति के जीते हुये भी स्त्री की यह इच्छा रहे कि मेरे देवर हो अनुचित कही जा सकतीहै या इससे नियोग सावित हो जाता है? यदि 'देवृकामा' इस पद से नियोग माना जावे तो ग्रंथों में स्त्री के लिये "पुत्रकामा,, और पुरुष के लिये "पुत्रकामः,, पद अनेक जगह आये हैं जैसा कि-

पुत्रकामः स्त्रियं गच्छेन्नरो युग्मासु रात्रिषु।

अर्थात् पुत्र की इच्छा वाला पुरुष युग्म रात्रियों में स्त्री के पास जावे तो क्या यहां पर भी 'पुत्रकामा' का यह अर्थ करोगे कि "पुत्रकामा" स्त्री पुत्र से नियोग करले या "पुत्र कामः" पुरुष पुत्र से नियोग करले। पदोंके सीधे साधे अर्थ को तोड़ मरोड़ कर उलटे अर्थ निकालना ठीक नहीं और न इसे सभ्यता तथा सत्यता कहा जा सकता है। यदि इस मंत्रसे

नियोग सिद्ध हो सकता है तो फिर दुनियां में ऐसा कोई कार्य नहीं- जो वेदों से सिद्ध न हो सके। अर्थ देखिये—

[अदेवृघ्न्यपतिघ्नि] हे वाले! तू पति और देवर को सुख देने वाली (एधि) वृद्धि को प्राप्त हो अर्थात् देवर आदि कुटु- म्बियों से विरुद्ध मत करना (इह) इस गृहाश्रममें (पशुभ्यः) पशुओं के लिये (शिवा) कल्याणकारी (सुयमाः) अच्छे प्रकार धर्म नियममें चलने वाली (सुवर्चा) रूप गुण युक्त (प्रजावती) उत्तम पुत्र पौत्रादि सहित (वीरसूः) वीर पुत्रों को उत्पन्न करने वाली (देवृकामा) देवर के होने की प्रार्थना करने वाली वा आनन्द चाहने वाली (स्योना) सुखिनी(इमम्)इस(गार्हपत्यम्) गृहस्थ सम्बन्धी (अग्निम्)अग्निहोत्रको (सपर्य) सेवन किया कर।

इसके आगे स्वामी जी देवर के साथ नियोग करने में एक और मंत्र लिखते हैं। वह यह है

कुहस्विद्दोषा कुहवस्तोरश्विना,
कुहाभिपित्वं करतः कुहोषतुः।
को वां शयुत्रा विधवेव देवरं-
मर्यं न योषा कृणुते सधस्थ आ।

ऋ० मं० १० सू० ४० मं० २

हे (अश्विना) स्त्री पुरुषो! जैसे (देवरं विधवेव) देवर को विधवा और (योषामर्यंन) विवाहिता स्त्री अपने पति को

(संधस्थे) समान स्थान शय्यामें एकत्र होकर सन्तानोत्पत्ति को (आकृणुते) सब प्रकार से उत्पन्न करती है वैसे तुम दोनों स्त्री पुरुष (कुहस्विद्दोषा) कहां रात्रि और (कुहवस्तः) कहां दिनमें वसे थे ? (कुहाभिपित्वम्) कहाँ पदार्थों की प्राप्ति (करतः) की ? और (कुहोषतुः) किस समय कहां वास करते थे ? (को वां शयुत्रा) तुम्हारा शयन स्थान कहां है ? तथा कौन वा किस देश में रहने वाले हो ? इससे यह सिद्ध हुआ कि देश विदेश में स्त्री पुरुष संग ही में रहें और विवाहित पति के समान नियुक्त पति को ग्रहण करके विधवा स्त्री भी सन्तानोत्पत्ति कर लेवे।

वाह ? स्वामीजी ने अच्छा नतीजा निकाला आपकी विलक्षण बुद्धि की बलिहारी ? और आपके अर्थ की बलिहारी] स्वामी जी ने जो अर्थ किया है वह अर्थ नितान्त गलत है प्रथम तो स्वामी जी ने "अश्विना" पद का अर्थ 'स्त्री पुरुष' किया है। संस्कृत पढ़ा कोई भी मनुष्य इस बात को स्वीकार नहीं कर सकता कि 'अश्विना' का अर्थ पुरुष है। 'अश्विना' पद का जो अर्थ है उसके प्रमाणमें न तो मैं किसी पंडित की सम्मति देता हूँ और न किसी स्मृतिकार की, किन्तु इसके निर्णय के लिये उस निरुक्त को देता हूँ कि जिसको समाज प्रमाण मानती है और जिसको स्वामी दयानन्द ने अपने भाष्यकी सत्यता साबित करने में प्रमाण कोटिमें रक्खा है। इतना गौरव रखने वाला निरुक्त "अश्विना" पदके अर्थ का निर्णय करता हुआ लिखता है कि—

अथातो द्यूस्थाना देवतास्तासामश्विनौ प्रथम गामिनौ ।

इसका अर्थ यह है कि द्यू है स्थान जिनका-उन देवताओं का वर्णन करते हैं उन देवताओं में अश्विनी कुमार प्रथमगामी हैं अर्थात् यज्ञ में इनका सब देवताओं से प्रथम आगमन होता है।

दूसरा प्रमाण इस अर्थ की अशुद्धि में यह है कि स्वामी दयानन्द जी ने (सधस्थे) इस पद का अर्थ यह किया है कि "समानस्थान शय्या में एकत्र होकर सन्तानों को" 'सधस्थे' इस एकपद का इतना बड़ा अर्थ करना किसी साधारण मनुष्य की भी बुद्धि में नहीं आता। इसी पद में से 'समान स्थान' भी निकल आया और 'पलंग के ऊपर' यह भी इसी में आ धंसा तथा इसी में 'एकत्रित' भी आगया और इसी पद से 'सन्तानें' भी उछल पड़ीं अतएव 'सधस्थे' का यहअर्थ स्वामी जी ने कल्पित किया है।

तीसरे—स्वामी जी ने इस मन्त्र का अर्थ किया है कि स्त्री पुरुषों से यह बात पूछो कि 'तुम रात में कहां रहे' 'दिन में कहां रहे' 'तुम्हारे खानेके पदार्थ कहाँ हैं' इस अर्थ पर तो हंसी आती है। क्या समाज ने इसका कोई प्रबन्ध किया है? इसकी कोई सोसाइटी कायम की है कि जिसके मुलाजिम घूम २ कर पूछते हों कि तुम रात में कहां रहे और दिन में कहां रहे। क्या कहीं यह बात तो नहीं कि पुलिस की

ड्यूटी आर्य समाज ने लेला हो और प्रजा पर दफा ११० लग गई हो- नहीं तो इस तहकीकात से कौन गर्ज है। यह संभव है कि समाजी लोग भिन्न २ रात में भिन्न २ स्थानों में सोते हों अथवा स्वामी जी ने सभी प्रजा को कंजरों के रास्ते पर हांका हो। जैसे कंजर घूमा फिरा करते हैं और एक स्थान में नहीं रहने पाते-इसी प्रकार स्वामी दयानन्द ने कोई क़ानून अपने चेलों के लिये भी बना दिया हो कि जिससे ये रोज़ रोज़ स्थान बदलते हों। फिर समाज ने इस लिखा पढ़ी का कुछ प्रबन्ध किया? और यदि समाज ने इनका प्रबन्ध नहीं किया तो यह मन्त्र ही व्यर्थ हो जावेगा। एक सन्देह यह भी है कि जब से वेद बना-उस समय से स्वामी दयानन्द जी के वेदपाठी होने तक क्या इस मन्त्र के इस अर्थ को किसी ने भी समझा और यदि समझा है तो इसका प्रबन्ध कब और कैसा हुआ-इसका प्रमाण समाजियों को पुराण, इतिहास और हिस्ट्री द्वारा देना चाहिये।

जाने दीजिये। झगड़ा तो "विधवा देवरमिव योषा मर्यमिव सधस्थ आकृणुते" इतने पदों पर है जिनका सीधा साधा अर्थ यह है कि " कि जैसे विधवा देवर को-पत्नी पति को, समान स्थान में सेवा करती है" इस अर्थ की पुष्टि के लिये दुर्गाचार्य का भाष्य देख लें। जो अर्थ हमने किया-वही अर्थ दुर्गाचार्य कर रहे हैं। स्वामी दयानन्द जी ने केवल दो पदों का अर्थ बिगाड़ा है, एक तो 'सधस्थे' का कि जिसका

खण्डन ऊपर हो चुका है और एक 'आकृणते' का। स्वामी दयानन्द ने 'सधस्थे' का जितना बड़ा अर्थ किया है उससे भी कुछ अधिक 'आकृणुते' का किया है। स्वामीजी महाराज 'आकृणुते' का अर्थ लिखते हैं कि 'सब प्रकार उत्पन्न करती है जैसे तुम दोनों स्त्री पुरुष'। आपने अर्थ देखा कि इसी 'आकृणुते' के अर्थ में से 'सब' निकला, फिर 'प्रकार' टपका, बाद में 'उत्पन्न' कूद पड़ा, पीछे "करती है" भी चला आया। इसी में से 'तुम दोनों' निकल बैठा, बाद में, 'स्त्री पुरुष' कूद पड़े, शब्द न ठहरा भानमती का पिटारा ठहरा; यदि इसी मन्त्र को निष्पक्षपात मंडली के सन्मुख रख दें तो कम से कम दो बातें तो अवश्य निकल आवें। एक तो यह कि इस मन्त्र में तो नियोग की गन्ध तक नहीं और दूसरे स्वामी दयानन्द के महर्षि पनमें बट्टा लग जावे।

लक्ष्मण ने प्रातः उठ अर नित्य प्रति जानकी, अपनी भौजाई, बड़े भाई की धर्म पत्नी को अभिवादन किया और जिस भौजाई के विषय में सुमित्रा ने यह उपदेश किया था कि "मां विद्धि जनकात्मजाम्" अर्थात् जनकनन्दिनी को तू माता समझना। इतना ही नहीं किन्तु बड़े भाई की पत्नी को मनु ने माता बतलाया है। मनु जी लिखते हैं कि—

भ्रातुर्ज्येष्ठस्य भार्याया-गुरुपत्न्यनुजस्य सा।
यवीयसस्तु या भार्या-स्नुषा ज्येष्ठस्य सा स्मृता॥

बड़े भाई की स्त्री छोटे भाई की माता और छोटे भाई की पत्नी बड़े भाई की पुत्रवधू के समान है।

जिस बड़े भाई की स्त्री को मनु ने माता तुल्य बतलाया शोक है कि उसी बड़े भाई की स्त्रीके साथ स्वामी दयानन्दजी ने नियोग लिखा। अब बतलाइये कि स्वामी दयानन्द जी को संसार के मनुष्य स्त्री दोनों में व्यभिचार फैलाना इष्ट नहीं था तो और क्या था?

देवरार्थ बदला।

ऊपर के लेख में स्वामी दयानन्द जी ने पति के भाई को देवर माना किन्तु अब देवर के साथ नियोग करने में कुछ हिचके, लज्जा आने लगी-अतएव देवर शब्द का अर्थ ही बदलने लगे। आप लिखते हैं कि—

देवरः कस्माद् द्वितीयो वर उच्यते।

देवर उसको कहते हैं-जो विधवा का दूसरा पति होता है। चाहे छोटा वा बड़ा भाई अथवा अपने वर्ण वा अपने से उत्तम वर्ण वाला हो,जिससे नियोग करे उसको देवर कहते हैं।

यह स्वामी जी ने "देवरः कस्माद् द्वितीयोवर उच्यते" का अर्थ किया और साथ ही साथ इस पाठ को निरुक्त का पाठ भी बतलाया है।

प्रथम तो यह पाठ ही निरुक्तों में नहीं है; फिर निरुक्त छापने वाले साफ लिखते हैं कि प्राचीन तीन पुस्तकों में यह

पाठ नहीं–अतएव हम इसको प्रक्षिप्त मान कर कोष्ठ बन्द करके लिखते हैं (२) यदि यह पाठ निरुक्त में होता तो जिस दुर्गाचार्य ने समस्त निरुक्त पर भाष्य किया-क्या वे इस पर भाष्य न करते ? इस पर दुर्गाचार्य का भाष्य नहीं अतएव यह पाठ निरुक्त का नहीं किन्तु प्रक्षिप्त है।

(३) निरुक्त 'यास्कमुनि' का बनाया है, वही 'यास्क मुनि' निरुक्त में देवर का अर्थ करते हैं कि (देवरो दीव्यति कर्मा भाष्ये सहि भर्तृ भ्राता नित्यमेव तया भ्रातृभार्यया देवनार्थं प्रीयत इति देवर इत्युच्यते) अर्थात् भाई की स्त्री की सुश्रूषा करने से इसका नाम देवर है। यदि "देवरः कस्माद् द्वितीयो वर उच्यते" यह पाठ यास्क निरुक्त में लिख देते तो फिर यह पाठ निरुक्तमें क्यों लिखते कि 'देवरो दीव्यति कर्मेत्यादि, इन तीन प्रमाणों से सिद्ध है कि वह पाठ ही निरुक्त का नहीं। (४) मनु आदि स्मृतिकारों ने वर के लघु भ्राता को देवर लिखा है अतएव यह पाठ कि दूसरे वर को देवर कहते हैं निरुक्त का सिद्ध नहीं होता। (५) स्मृतियों के अनुकूल संसार में प्राचीन समय में तथा वर्तमान समय में भी देवर पति के छोटे भाई को कहते हैं इससे भी यह पाठ निरुक्त का नहीं यही सिद्ध होता है।

वैदिक साहित्य और धर्मशास्त्र में देवर नाम पति के छोटे भाई का है, दूसरे पतिका नाम देवर नहीं है और स्वामी जी ने जो देवर नाम दूसरे पति का लिखा है या तो वे वैदिक

साहित्य को नहीं जानते या वेदों का गला घोट रहे हैं । कुछ भी हो। यदि देवर नाम दूसरे पतिका है तब तो स्वामी दयानन्द के लिखे चार भांति के नियोग रहे और यदि देवर नाम पति के भाई का है तो नियोग की संख्या पांच हो जावेगी।

यद्यपि समझदार मनुष्य इस नियोग रूपी व्यभिचार से घृणा करते हैं और इस नियोग को स्वामी दयानन्द जी का तैयार किया हुआ धर्मनाशक गपोड़ा मानते हैं तो भी बाज बाज आर्यसमाजी यह कहते रहते हैं कि आखिर स्वा० दयानन्द जी बेवकूफ नहीं थे, उन्होंने कुछ न कुछ समझ कर ही नियोग को वैदिक लिखा है। इस कथन को हम एक दृष्टान्त से स्पष्ट करेंगे। दृष्टान्त यह है—

एक पंडित संस्कृतका अद्वितीय विद्वान्था किन्तु साहित्य दर्शन और वेद से सर्वथा अनभिज्ञ था। वह पंडित अपने घर से दुःखित होकर बाहर चला गया और उस राजधानी में पहुँचा जहां उसकी बहिन विवाही थी। बहिन के यहाँ ठहरा धीरे धीरे इस पंडित का ज्ञान राजा को हुआ, विद्वान् समझ कर राजा ने इसको अपने यहां राजपंडित बना लिया। अब क्या था अब तो यह दूसरे पंडितों की लगा सफाई करने, सबको मूर्ख बतलाने लगा और सबके बन्धन तोड दिये। शहर के अन्य लोगों के साथ भी इसका वर्ताव अच्छा नहीं था, दुःखित लोग विचार करने लगे कि यह बेवकूफ किस

कार्रवाई से राजधानी छोड़ अपने घर को पधारे। विचार के पश्चात् इसके गांवमें रहने वाले इसके मित्र रामसेवक की तरफ से एक चिट्ठी बनाई गई और वह डाक में डलवा दी गई। दूसरे दिन चिट्ठी पंडित जी के पास पहुँची, पंडितजी ने चिट्ठी को पढ़ा और चिट्ठी पढ़ते ही रोने लगे। इसके रोने को सुन कर इसके कुछ मित्र आये और पूछने लगे कि आप क्यों रोते हो? इसने उत्तर दिया कि रोते क्या हैं हमारी तकदीर फूट गई। हमारे घर से हमारे एक मित्र का पत्र आया है उस में लिखा है कि तुम जल्दी घर आओ यहां पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा 'तुम्हारी स्त्री विधवा होगई' मित्रोंने बहुत समझाया कि चिट्ठी किसी बेवकूफ मनुष्य की लिखी हुई है, जब तक तुम जीते हो तब तक तुम्हारी स्त्री विधवा कैसे हो जावेगी? इतना समझाने पर भी इसका संतोष न हुआ यह भोजन खाने के लिये अपनी बहिन के यहां गया और वहाँ जाकर खूब रोया। बहिन ने कहा भैया! क्या हुआ? क्यों रोते हो? इसने बतलाया कि रामसेवक तिवारी की चिट्ठी आई है उसमें लिखा है कि तुम जल्दी आओ तुम्हारी स्त्री रॉड हो गई। हमारी स्त्री पर दुःख का पहाड़ आ पड़ा उसी दुःख से हम दुखी हैं। यह सुनकर बहिन ने कहा कि संसार में यदि कोई पंडित पागल हो सकता है तो तुम हो, जब तुम जीवित हो तब तुम्हारे जीवित रहने पर तुम्हारी स्त्री रांड कैसे हो जावेगी? यह सुन पंडित जी बोले यह तो कोई बात

नहीं । हम तो जीवित ही रहें हमारे जीते जी तू रांड कैसे हो गई ?

इसको सुन कर बहिन हंस पड़ी और समझाने लगी कि तू मेरा भाई है, तेरे जीजा मेरे पतिथे जब मेरे पति मरगये तो मैं राँड हो गई। राँड होने का सम्बन्ध भाई से नहीं है पति से हैं। स्त्रियाँ पति मरने पर रांड होती हैं। तुम्हारी जो स्त्री है उसके पति तुम हो, जब तुम मर जाओगे तब वह रांड होगी तुम्हारे जीवित रहने पर वह रांड नहीं हो सकती। बहिन की इन बातों को सुन कर पंडितजी बोले कि यह तोमैं भी जानता हुं किन्तु रामसेवक तिवारी ने जो चिट्ठी लिखी है, वह अगाध विद्वान् है, असंभव बात नहीं लिख सकता,उसने जो मेरी स्त्री का रांड होना लिखा है कुछ न कुछ विचार कर ही लिखाहै। स्वा० दयानन्द जी के लिये जो यह कहते हैं कि कुछ न कुछ विचार कर ही नियोग लिखा है वे लोग अक्ल में इस पंडित से कम नहीं हैं। नहीं तो यह न कहते। वेद शास्त्रकी वह कौन बात है जो स्वामी दयानन्द के विचार में आती है और अन्य विद्वानों के समझ में नहीं आती ? इस पर श्रोताओं को विचार करना चाहिये।

व्यभिचार ।

स्वामी दयानन्द जी का चलाया नियोग खुल्लम खुल्ला व्यभिचार है। इसके व्यभिचार होने में कुछ प्रमाण हम आगे रखते हैं उनको सुनिये—

(१) आज ईश्वर की कृपासे पांच छः लाख आर्य समाजी हैं किन्तु इस वैदिक नियोग को एक भी मनुष्य ने आचरणमें वैदिक सिद्ध करके नहीं दिखलाया। यदि कोई अन्य धर्मी पुरुष नियोग को अवैदिक कह दे तो आर्य समाजी उछल कर मैदान में आ जावें, शास्त्रार्थ कर बैठें, गालियां देने लगें, मार पीट कर दें, मुकद्दमा चलावें जैसाकि पेशावर निवासी गंगा-प्रसाद पर चलाया था। सब प्रकार से नियोग की सत्यता और वैदिकता सिद्ध करने को तैयार किन्तु नियोगके आचरण करने को एक भी आर्यसमाजी तैयार नहीं इसका क्या अर्थ होता है? इसका मतलब यही है कि नियोग व्यभिचार है। (२) वेदतीर्थ पं० नरदेव जी शास्त्री आर्य इतिहास में लिखते हैं कि वेद नियोग का जिम्मेदार नहीं नियोग के जिम्मेदार स्वामी दयानन्दजी हैं। पंडितजी के इन अक्षरोंका क्या अर्थ होता है? यही अर्थ है कि नियोग वेद विरुद्ध है और व्यभिचार है। (३) ला० मुन्शीराम (श्रद्धानन्द) जी ने अपनी बनाई आदिम सत्यार्थप्रकाश' नामक पुस्तकमें लिखा है कि 'नियोग वैदिक लोगों के लिये नहीं अवैदिक शूद्रों के लिये है,। श्रद्धानन्द जी ने नियोग को व्यभिचार समझा और उसको शूद्रों पर टाल दिया (४) चतुर्थ नियोग जो स्वामी जी ने लिखा था कि "गर्भवती स्त्री से एक वर्ष समागम न करने के विषय में पुरुष वा स्त्री से न रहा जाय तो किसी से नियोग करके उसके लिये पुत्रोत्पत्ति कर दे"। सन् १८६७ में

इस नियोग का सत्यार्थ प्रकाश से निकाल डाला। निकलना सिद्ध करता है कि यह नियोग व्यभिचार दोष से दूषित था (५) 'दयानन्द तिमिर भास्कर' के खण्डन में पं० तुलसीराम स्वामी ने 'भास्कर प्रकाश' नामक ग्रन्थ लिखा किन्तु नियोग की पुष्टि में पं० तुलसीराम ने कुछ भी नहीं लिखा नियोग खण्डन का उत्तर न देना सिद्ध करता है कि पं० तुलसीराम जी नियोग को व्यभिचार समझते हैं। (६) आज कल के आर्यसमाजी स्वामी दयानन्द द्वारा खण्डन किये हुये 'विधवा विवाह' का प्रचार करते हैं और नियोग का प्रसंग आने पर चुप रह जाते हैं, यह चुप रहना तथा विधवा विवाह का प्रचार करना सिद्ध करता है कि आर्यसमाजी नियोग को व्यभिचार समझते हैं। (७) नियोग के विषयमें जब जब अदालतों में केश पहुँचे तब तब अदालतों ने अपने फैसले में नियोग को व्यभिचार लिखा। इसको सिद्ध करने के लिये हम श्रोताओं को एक मुकद्दमा और उसका अपील सुनाते हैं।

मुकद्दमा।

मुद्दई—मेहरचन्द मेम्बर आर्यसमाज पेशावार

मुद्दाअलेह—गंगाप्रसाद सनातनधर्मी

अदालत—

मौलवी अंजामअली खां साहब मजिस्ट्रेट दर्जा अव्वल पेशावर

ज़ेर दफा $\frac{५०}{५०२}$

तारीख ८ दिसम्बर सन् १८९१ ई०

इस मुकद्दमे के दो अदालतों के फैसला सुनिये—

इस बात से इन्कार नहीं हो सकता कि दयानन्दकी खास पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश में व्यभिचार की तालीम मौजूद है। मुद्दई खुद इस बात को स्वीकार करता है कि वह नियमों पर जिनमें विवाहिता स्त्री को अपने असली पति के जीते जी किसी अन्य पुरुष विवाहित के साथ भोग करने की आज्ञा है; विश्वास रखता है कि यह रिवाज बेशुभह व्यभिचार है। इस वास्ते यह ज़िक्र करते हुये कि दयानन्द के शिष्य इन उपरोक्त नियमों पर विश्वास लाये हुये रस्म व्यभिचार का आरंभ कर रहे हैं और अगर इन नियमों पर इनका विश्वास इसी तरह रहा तो ये इस व्यभिचार को ज्यादा उन्नति देंगे मुद्दाअलेहने सचाई से एक प्रकट बातको प्रकाशित किया है।

आर्यसमाजियों ने इस फैसले की अपील साहब जज के यहां की। जज साहब बहादुर ने इस अपील को खारिज कर दिया और खारिज करते हुये यह रिमार्क दिया।

" दयानन्द के नियम ऐसे नियम हैं कि वे हिन्दू धर्म तथा दूसरे मज़हबों की निन्दा करते हैं और इस किताब (सत्यार्थ प्रकाश) के चन्द हिस्से खुद भी निहायत फुहश (घृणित) हैं"

नियोग का कारण।

ऊपर कहे हुये हेतु सप्तक को सुन कर संसार में एक भी मनुष्य ऐसा न निकलेगा कि जो नियोग को व्यभिचार न कह

दे। अब प्रश्न यह है कि ऐसे धर्म नाशकारी व्यभिचारको स्वा० दयानन्द जी ने अपने बनाये धार्मिक ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में क्यों लिख दिया? इसका उत्तर यह है कि गंगातट पर विचरते हुये स्वामी दयानन्द जीको अंग्रेजी पढ़े लिखे मनुष्यों की संगति होने लगी। स्वामी जी कुछ थोड़ा सा संस्कृत जानते थे इस कारण कुछ विचार न कर सके और योरुप की हिस्ट्री को सुन कर पाश्चात्य सभ्यता में बह गये। पाश्चात्य देशों में स्त्रियों को जैसे जैसे अधिकार हैं उनमें कुछ तरक्की करके नियोग बनाये और उन नियोगों को वैदिक रूप देकर सत्यार्थ प्रकाश में लिख दिया।

जिस सत्यार्थ प्रकाश को आर्य समाज धर्म ग्रंथ और वेद मार्गका स्पष्ट करने वाला लिखती है उसमें लिखी हुई नियोग की कुछ बातें आज मैंने पबलिक के आगे विचार के लिये रक्खी हैं। मुझे आशा है कि आप लोग इस पर गहरा विचार करेंगे। आज कल के मनुष्य यह भी कहा करते हैं कि पाण्डु, धृतराष्ट्र, और पाण्डव नियोग से पैदा हुये। इनका यह कहना सोलह आने असत्य, किन्तु आज समय बहुत होगया इस कारण पाण्डु आदिकी कथाका विवेचन नहीं होगा इसका विवेचन फिर किसी दिन दूसरे व्याख्यानमें करूंगा। आज मैं अपने व्याख्यान को बन्द करता हूं और एक बार बोलिये 'श्री सनातनधर्म की जय'।

कालूराम शास्त्री

* श्रीहरिः *

नियोग-व्यवस्था !

सानन्दमानन्दवने वसन्त-
मानन्दकन्दं हतपापवृन्दम् ।
वाराणसीनाथमनाथनाथं ॥
श्रीविश्वनाथं शरणं प्रपद्ये ॥ १ ॥
वन्दे मुकुन्दमरविन्ददलायताक्षं ।
कुन्देन्दुशंखदशनं शिशुगोपवेषम् ॥
इन्द्रादिदेवगणवंदितपादपीठं ।
वृन्दावनालयमहं वसुदेवसूनुम् ॥२॥

माननीय सभापति ! वन्दनीय विद्वन्मण्डलि !! आदरणीय सद्गृहस्थवृन्द !!! कई एक सज्जन यह कहते रहते हैं कि पाण्डव और धृतराष्ट्र, पाण्डु-विदुर ये सब नियोग से उत्पन्न हुये थे।

इन की विस्तृत कथा महाभारत में आती है, आज हम और आप महाभारत टटोलने से पहिले यह विवेचन करें कि वेद में नियोग है या नहीं ? वेद के वे समस्त मंत्र जिन को आज कल के लोग

नियोग विधायक मानते हैं, हम टटोल चुके, उनमें नियोग का नाम नहीं तथा नियोग की गन्ध नहीं, फिर हम कैसे मानें कि नियोग वेद प्रतिपाद्य धर्म है। इस के विरुद्ध हम को यह मानना पड़ेगा कि स्त्रियों का पातिव्रत धर्म मिटाने के लिये ही वेद मन्त्रों का अर्थ बदल कर बनावटी नियोग सिद्ध किया गया है। आज कल के मनुष्यों में यह प्रणाली पड़ गई है कि कितनी भी असत्य बात कह दें और उस का उत्कट विरोध भी हो जावे तब भी अपनी असत्य बातको सत्य ही कहते चले जावेंगे। जब सोलह आने असत्यता प्रत्यक्ष आ जावेगी तब और और बहानों से उस को टालेंगे, वही बात यहां है। जब वेद से नियोग सिद्ध न हुआ तब पाण्डवों का अड़ंगा लगा दिया। यदि पाण्डवों का नियोग वेदानुकूल हुआ तब तो इस की पुष्टि में वेद के उस मन्त्र को बतलाओ जो नियोग को कहता हो? यदि ऐसा मन्त्र वेद में नहीं है तो क्या फिर इनके नियोगको वेद प्रतिपाद्य कह सकते हैं? अथवा ये सब नियोग से हुये थे इस कारण नियोग वैदिक है? अन्ततो गत्वा निर्णय यह है कि वेद में नियोग न कभी था, न है और न होगा। वेद में नियोग बतला कर वेद को कलंकित किया जाता है।

पाण्डव।

पाण्डवों की उत्पत्ति किसी मनुष्य से न हुई, जो इन की

उत्पत्ति को नियोग मान लिया जावे। कुन्ती ने सूर्य का आह्वान किया, सूर्य कोई मनुष्य नहीं है, देवता है, उस से कर्ण उत्पन्न हुआ। इसी प्रकार धर्म-वायु इन्द्र इन से क्रमशः युधिष्ठिर भीम अर्जुन उत्पन्न हुये, ये चार पुत्र कुन्ती के हैं। माद्री ने अश्विनी कुमार देवताओं का आह्वान किया उन से नकुल सहदेव की प्राप्ति हुई कोई भी स्मृति देवताओं से नियोग नहीं बतला रही, फिर इस को नियोग कैसे कहा जा सकता है।

कई एक मनुष्य कह उठावेंगे कि देवताओं ने भोग तो किया। देव भोग का अडंगा लगाना निरी मूर्खता है क्यों कि देवताओं का भोग मनुष्यों की भांति स्थूल भोग नहीं है। वेद लिखता है कि "नवै देवा अश्नति-दृष्ट्वैव तृप्यन्ति" देवता खाते नहीं, देख कर ही प्रसन्न हो जाते हैं। इसी भांति से देवताओं के समस्त विषय अति सूक्ष्म होते हैं। यज्ञ में यजमान के आह्वान को दूर देश स्थित इन्द्रादि देवता सुन लेते हैं और तत्काल आते हैं, निरुक्त ने ऋग्वेद के कई मन्त्र लेकर इस की पुष्टिकी है। सिद्ध हो गया कि देवों का सुनना-चलना भी सूक्ष्म है। इसी प्रकार देवताओं का भोग भी सूक्ष्म है।

संसार में एक भी स्त्री ऐसी नहीं है कि जो देवभुक्त न हो। इस विषयमें वेद का डिम डिम घोष है कि—

सोमोददद्गन्धर्वाय-गन्धर्वो ददद्ग्नये।
रयिं च पुत्रांश्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम् ॥

ऋ० मं० १० अ० ७ सू० ८५ मं० ४१

प्रथम कन्या के ऊपर चन्द्रमा का अधिकार रहता है, वह अपना अधिकार समाप्त कर गन्धर्व को देता है, गन्धर्व उस भुक्ताको अपने समय की अवधि पर अग्निदेव को देता है. अब वह अग्नि भावी पुत्र और धन सहित इस कन्या को मुझे देता है।

यह वर का कथन है। इस विषय के प्रतिपादक वेद में और भी मन्त्र हैं किन्तु जब एक से ही पुष्टि हो जाती है तब अन्य मन्त्रों का देना निरर्थक है। सोम, गन्धर्व, अग्नि इन तीन देवों से समस्त स्त्रियां भुक्त होती हैं तो क्या अब हम यह मान लें कि संसारकी समस्त स्त्रियां नियोग करती हैं? हमने प्रथम तो यह दिखलाया कि देवता के साथ स्त्री का नियोग कहा ही नहीं (२) यह दिखलाया कि समस्त स्त्रियाँ देव भुक्त हैं। अब हम कर्ण, युधिष्ठिरादिक पाण्डवों की उत्पत्ति किस हेतु से नियोग द्वारा मानें।

धृतराष्ट्रोत्पत्ति।

धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर इन तीनों की उत्पत्ति हम क्रम से कहते हैं। प्रथम धृतराष्ट्र की उत्पत्ति को सुनिये—

ततोऽम्बिकायां प्रथमं-नियुक्तः सत्यवागृषिः।
दीप्यमानेषु दीपेषु-शरणं प्रविवेश ह ॥ ४ ॥
ततः कृष्णस्य कपिलां-जटा दीप्ते च लोचने।
बभ्रूणि चैव श्मश्रूणि-दृष्ट्वा देवी न्यमीलयत् ॥५

सम्बभूव तया सार्द्धं-मातुः प्रियचिकीर्षया।
भयात्काशिसुता तन्तु-नाशक्नोदभिवीक्षितुम् ॥६
ततो निष्क्रान्तमागम्य-माता पुत्रमुवाच ह।
अप्यस्यां गुणवान्पुत्र--राजपुत्रो भविष्यति ॥७॥
निशम्य तद्वचो मातुर्व्यासः सत्यवती सुतः।
प्रोवाचातिन्द्रियज्ञानो-विधिना संप्रचोदितः ॥८॥
नागायुतसमप्राणो-विद्वान् राजर्षिसत्तमः।
महाभागो महावीर्यो-महाबुद्धिर्भविष्यति ॥ ९ ॥
तस्य चापिशतं पुत्रा-भविष्यन्ति महात्मनः।
किन्तु मातुः सवैगुण्यादन्ध एव भविष्यति ॥१०॥

तदनन्तर सत्य बोलने वाले व्यास मुनि पहिले अम्बिका के शयन स्थान में गये, तहाँ दीपक का सुन्दरप्रकाश हो रहा था, इस कारण मुनिकी सुनहरी जटाएं, दमकते हुये नेत्र तथा भूरी मूछों को देखकर कौशल्याने भय से आंखें मीच लीं ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ तदनन्तर माता का हित पूरा करने के लिये, व्यास जी अम्बिका के साथ हुये, काशिराज की पुत्री अम्बिका भय के मारे सन्मुख देख नहीं सकी। ६। व्यास जी बाहर आये तब सत्यवती ने उनके पास आकर पूछा कि बेटा! कौशल्या के गुणवान पुत्र होगा या नहीं?। ७। माता के इस बचन को सुन कर सत्यवती के पुत्र ज्ञान की प्रेरणा किये हुये अतीन्द्रिय

ज्ञानी व्यास जी कहने लगे कि। ८। इन के दश सहस्र हाथियों की समान बलवाला विद्वान् राजर्षियों में श्रेष्ठ, महाभाग्यशाली, महावीर्यवान् और बुद्धिमान् पुत्र होगा और इसके सौ पुत्र होंगे परन्तु कौशल्या ने मुझ को देख कर आंख मींच ली थीं इस कारण जो पुत्र होगा वह अंधा होगा।

पाण्डूत्पत्ति।

धृतराष्ट्र की उत्पत्ति आप सुन चुके अब आगे के श्लोकों में राजर्षि पाण्डु की उत्पत्ति है उस को भी सुन लें।

ततस्तेनैव विधिना-महर्षिस्तामपद्यत। १४
अम्बालिकामथाभ्यागादृषिं दृष्ट्वाच सापितम्।
विवर्णा पाण्डुसंकाशा समपद्यत भारत ॥१५
तां भीतां पाण्डुसंकाशां-विषण्णां प्रेक्ष्यभारत।
व्यासः सत्यवती पुत्र-इदं बचनमब्रवीत् ॥१६॥
यस्मात्पाण्डुत्वमापन्ना विरूपं प्रेक्ष्यमामिह।
तस्मादेष सुतस्ते वै-पाण्डुरेव भविष्यति ॥१७

व्यास जी पहिले की समान तहां आकर अम्बालिका के महल में गये। हे भारत! उन मुनि को देख कर अम्बालिका का तेज उड़ गया और वह पीली पड़ गई। १४-१५। तब अम्बालिका को पीली पड़ी भयभीत और दुःखितसी हुई देख कर सत्यवतीके पुत्र व्यासजी उससे इस प्रकार कहने लगे॥१६

कि हे अम्बालिका! तू मेरे विचित्र रूप को देख कर पीली पड़ गई, इस कारण तेरे जो पुत्र होगा वह पाण्डु ही होगा ॥१७

विदुरोत्पत्ति।

अब विदुर की उत्पत्ति सुनिये—

ततः स्वैर्भूषणैर्दासीं- भूषयित्वाप्सरोपमाम्।
प्रेषयामास कृष्णाय-ततः काशिपतेः सुता ॥२४
सा तं ऋषिमनुप्राप्तं-प्रत्युद्गम्याभिवाद्य च।
संविवेशाभ्यनुज्ञाता-सत्कृत्योपचचारह ॥ २५
कामोपभोगेन रहस्तस्यां तुष्टि मगादृषिः ॥२६

महाभा० आदि० अ० १०६

काशिराज की पुत्री ने अपने आभूषणों से अप्सरा के समान अपनी दासी को सजा कर व्यास जीके पास भेजदिया २४। इस दासी ने व्यास जी को आते हुये देखकर उनके सामने जा अभिवादन किया और भले प्रकार आदर सत्कार करके उनको आसनदिया तथा सत्कार करनेके अनन्तर उनकी सेवा करने लगी तिसके अनन्तर व्यास जी ने आज्ञा दी तब उनके समीप बैठी। २५। उस दासीके साथ एकान्तमें (काम) इच्छा (उपभोग) निवेश द्वारा प्रसन्न हुये। २६

अम्बा और अम्बालिका विषयक श्लोकों में भोगका नाम तक नहीं है। दासी वाले श्लोकों में जो "कामोपभोगेन" पद

है इसका ठीक अर्थ तो यह है कि इच्छा पूर्वक निर्देश, किन्तु कई एक भाषा टीकाओं में 'कामोपभोगेन' इस पद का अर्थ मैथुन, किया है जो महाभारत की संगति मिलाने पर बनावटी ठहरता है। यदि हम यह भी मानलें कि इसके साथ भोग किया तब भी कोई क्षति नहीं है, कारण यह है कि विधवा विवाह और नियोग का निषेध द्विजाति परक है तथा यह जाति की दासी है अतएव इसको पाप नहीं। किन्तु महाभारत के दूसरे स्थल में भोग का सर्वथा निषेध किया गया है, ग्रंथ की ठीक संगति लगाने के लिये यह मानना पड़ेगा कि यहां पर मैथुन नहीं है उस प्रकरण को हम आगे कहेंगे प्रथम प्रसंग वश कुछ युधिष्ठिरादि पाण्डवों के विषय में कहना है। भारत सार नामक एक छोटा ग्रंथ है जनमेजय के कुष्ठ हो जाने पर व्यास जी ने यह छोटा ग्रंथ निर्माण कर जनमेजय को दिया था और यह कह दिया था कि इस का पाठ नित्य किया करो जनमेजय इस का नित्य पाठ करने लगा- थोड़े दिन में उसका कुष्ठ दूर हो गया। जब भगवान् कृष्ण दुर्योधन को समझाने के लिये हस्तिनापुर पहुँचे तब दुर्योधन से कहा कि युधिष्ठिर को आधा राज्य देदो ? इसके उत्तर में दुर्योधनने पाण्डवों को व्यभिचार जन्य कह कर राज्यके अनधिकारी बतलाया। उस को सुनकर भगवान् कृष्ण ने उत्तर दिया कि

न च मैथुन संभूता निष्पापाः पाण्डवा मताः।

पाण्डव-मैथुनसे उत्पन्न नहीं हुये इसकारण वे निष्पाप हैं।

भारत सार ने सिद्ध कर दिया कि पांडव भोगद्वारा उत्पन्न नहीं हुये। कई एक मनुष्य कह देंगे कि इस भारत सार के आधे श्लोक से तोष नहीं होता। उनकी तोषाकांक्षा की पूर्ति के लिये हम महाभारत का ही प्रमाण देतेहैं जिससे यह सिद्ध हो जावेगा कि धृतराष्ट्र, पांडु; विदुर और पांडव ये मैथुन द्वारा उत्पन्न नहीं हुये, इनकी उत्पत्ति केवल वरदान से है।

विचित्रवीर्यस्य तथा राज्ये संप्रतिपादनम्।
धर्मस्य नृषु संभूति-र्णी माण्डव्यशापजा॥१००
कृष्णद्वैपायनाच्चैव प्रसूतिर्वरदानजा।
धृतराष्ट्रस्य पाण्डोश्च पाण्डवानां च संभवः॥१०१

महाभा० आदि० अ० २

विचित्रवीर्य का राज तिलक पाने के पश्चात् माण्डव्य के शाप से धर्मराज का विदुररूप से मनुष्य जाति में जन्म और कृष्ण द्वैपायन से धृतराष्ट्र तथा पांडु की उत्पत्ति एवं पांडवों का उत्पन्न होना यह प्रसुति सन्तानें वरदानसे उत्पन्न हुई हैं

यदि हम दुर्जन तोष न्याय से पाण्डव और धृतराष्ट्रादि की उत्पत्ति नियोग से मान लें तो फिर इन श्लोकोंकी संगति ही नहीं मिलती। क्या कोई ऐसा विद्वान् भारत जननी ने उत्पन्न किया है जो उपरोक्त सन्तान को मैथुनोत्पन्न मान कर महाभारत की पूर्वापर संगति मिला दे। जब संगति ही नहीं मिलती तब फिर हम किस न्यायसे इनको नियोगजन्य मानलें?

वरदान से पुत्र नहीं होसकता यह मूर्खता नहीं तो और क्या है? व्यास द्वारा धृतराष्ट्र, पाण्डु, विदुर का उत्पन्न होना यह तो मान लिया जाता और जिन श्लोकों में यह लिखा है कि धृतराष्ट्र प्रभृति तथा पाँचों भाई पाण्डव वरदान से उत्पन्न हुये, महाभारत के उन श्लोकों के अभिप्राय को सुनने के लिये कान बहिरे बना लिये जाते हैं यह बड़ा मज़ा है।

एक समय हम सिहोरा जिला सागर गये, वहां से रात को बैलगाड़ी पर चले, गाड़ी में घास बिछा कर ऊंचा बना लिया गया और उसके ऊपर बिस्तर लग गया। गाड़ीवान् गाड़ी हांकने के लिये बैठा और हम लेटते ही सो गये। साढ़े पाँच बजे के अन्दाज सागर से डेढ़ मील के फासले पर एक गांव आया, वहाँ हमारी आंख खुल गई, गाड़ीवान् ने कहा कि गाड़ी को मैं रोकता हूं और तमाखू पीनेके लिये इस गांव से आगले आऊं यह कह कर वह चला गया। हम गाड़ी पर बैठे थे, दश बारह मिनट के बाद सागर की तरफ से पन्द्रह सोलह मनुष्य आये, एकने पूछा कि गाड़ी कहांकी? दैवयोग से हम उस ग्राम का नाम भूल गये जहां की वह गाड़ी थी लाचारीसे चुप बैठे रहे। उन मनुष्योंने समझा कि यह बहरा है, इस ने सुना नहीं, दो तीन आदमी जोर से बोल पूछने लगे कि यह गाड़ी कहां की? हम भी ताड़ गये कि इन्हों ने बहरा समझा है। हमने उनसे कहा कि जरा ऊंचा सुनता हूं जोर से कहो। वे सब एक स्वर होकर जोरसे बोले कि गाड़ी कहां की?

जबर्दस्तीकी और बात है। जिन लोगोंको नियोग चलाने का भूत सवार हो गया है वे तो संगति तोड़, श्लोक छोड़ महाभारत का गला मरोड़ जबर्दस्ती से पाण्डवादिक को नियोग जन्य बतला रहे हैं किन्तु उनकी यह चालाकी उसी समय तक चलेगी जब तक किसी विद्वान् का सामना न हो सामना होने पर समस्त चालाकियां धूल में मिल जाती हैं और फिर यह शक्ति चालबाजों में नहीं रहती कि जिसके सहारे से वे जबान खोल लें। सिद्ध हो गया कि धृतराष्ट्रादि तीनों भाइयों को और पाण्डव को चालबाजी से नियोग जन्य बतलाया जाता है वास्तव में ये वरदान जन्य हैं।

वरदान।

कई एक सज्जन यह कह देंगे कि क्या केवल वरदान से भी कभी सन्तान पैदा हुई है? यह शंका वही उठाते हैं जो देवता और ऋषियों की शक्ति से अनभिज्ञ हैं। वरदान से क्या नहीं हो सकता? क्या इन्द्र के वरदान से रघु की सौ वीं यज्ञ पूर्ण नहीं हुई? धर्मराज के वर से सावित्री का मृतक पति जीवित होगया, अंगिरा और नारद के वरदान से चित्रकेतु के पुत्र उत्पन्न हुआ, महादेव के वर से रावण दिग्विजयी बना, देवता और ऋषियों के वरदान से अनेक ऐसे कार्य हुये हैं जो प्रत्यक्ष में हमने देखे नहीं तथा जिनके विचार में हमारी बुद्धि दौड़ती नहीं किन्तु ऋषि और देवताओं के इतिहास में ऐसे सहस्रों वरदान पाये जाते हैं, फिर यह कह देना कि केवल

वरदान से पुत्र नहीं होसकता वज्र मूर्खता नहीं तो और क्या है? व्यास द्वारा धृतराष्ट्र, पाण्डु, विदुर का उत्पन्न होना यह तो मान लिया जाता और जिन श्लोकों में यह लिखा है कि धृतराष्ट्र प्रभृति तथा पाँचों भाई पाण्डव वरदान से उत्पन्न हुये, महाभारत के उन श्लोकों के अभिप्राय को सुनने के लिये कान बहिरे बना लिये जाते हैं यह बड़ा मजा है।

एक समय हम सिहोरा ज़िला सागर गये, वहां से रात को बैलगाड़ी पर चले, गाड़ी में घास बिछा कर ऊंचा बना दिया गया और उसके ऊपर बिस्तर लग गया। गाड़ीवान् गाड़ी हांकने के लिये बैठा और हम लेटते ही सो गये। साढ़े पाँच बजे के अन्दाज सागर से डेढ़ मील के फासले पर एक गांव आया, वहाँ हमारी आंख खुल गई, गाड़ीवान् ने कहा कि गाड़ी को मैं रोकता हूं और तमाखू पीनेके लिये इस गाँव से आगले आऊं यह कह कर वह चला गया। हम गाड़ी पर बैठे थे, दश बारह मिनट के बाद सागर की तरफ से पन्द्रह सोलह मनुष्य आये, एकने पूछा कि गाड़ी कहांकी? दैवयोग से हम उस ग्राम का नाम भूल गये जहां की वह गाड़ी थी लाचारीसे चुप बैठे रहे। उन मनुष्योंने समझा कि यह बहरा है, इस ने सुना नहीं, दो तीन आदमी जोर से बोल पूछने लगे कि यह गाड़ी कहां की? हम भी ताड़ गये कि इन्हों ने बहरा समझा है। हमने उनसे कहा कि जरा ऊंचा सुनता हूं जोर से कहो। वे सब एक स्वर होकर जोरसे बोले कि गाड़ी कहां की?

हमने उत्तर दिया हां समझ गये, गाड़ी, सागर में दो बजे आवेगी। ये सब हंस पड़े और वहां से चल दिये। रास्तेमें उन को गाड़ीवान् मिल गया जो चिलम में आग धरे चला आता था, उससे पूछा कि यह गाड़ी तुम्हारी है ? उसने कहा जी हां, कहां की गाड़ी है ? बतलाया कि सिहोरा की, फिर प्रश्न किया कि तुम गाड़ी में यह पत्थर कहां से ले आये ? गाड़ीवान् ने कहा कहां है पत्थर ? एक मनुष्यने हमारी तरफ अंगुली करके बतलाया कि वह धरा है पगड़ी वाला। गाड़ीवान् बिगड़ उठा कि तुम शास्त्री जी को पत्थर बतलाते हो ? ये तो बड़े भारी पंडित कानपुर के शास्त्री हैं। ये मनुष्य बोल उठे कि आग लग जाय ऐसे शास्त्री में, हमारे तो चिल्लाते २ गले बैठ गये और उस ने सुना ही नहीं, इतना कह कर ये चले गये। गाड़ीवानने यह सब कथा हमसे बतलाई, हमें बड़ी हंसी आई। हंसी के पश्चात् गाड़ीवान से कहा कि हम तुम्हारे गांव का ही नाम भूल गये अब उनको बतलावें तो क्या बतलावें।

वास्तव में जिस प्रश्न का उत्तर मनुष्य के पास नहीं रहता फिर वह अनेक बहाने बनाया करता है। धृतराष्ट्रादि सन्तानें वरदान से पैदा हुईं इस विषय को कहने वाले महाभारत के श्लोकों का उत्तर तो कोई इनके पास है ही नहीं, बस लाचारी से कह दिया कि क्या केवल वरदान से भी सन्तान हो जाती हैं ?

वरदान से सन्तान का होना हमने नहीं बतलाया

महाभारत ने बतलाया है। यदि महाभारतका लेख झूठ है तव तो धृतराष्ट्र, पाण्डु, विदुर और पाण्डवोंका होना झूठ तथा, महाभारतसे नियोग निकालना झूठ वस झगड़ा निबट गया। न पाण्डव हुये न नियोग हुआ। तुम्हारी पुष्टि कारक, नियोग विधायक उदाहरण ही रफूचक्कर होगये और यदि महाभारत को तुम सत्य मानते हो तथा साथ ही मैं यहभी मानते हो कि धृतराष्ट्रादि उत्पन्न हुये हैं तब तो तुम को महाभारत के वे श्लोक भी मानने होंगे जिनमें यह फैसला दे दिया गया कि ये आठो संतानें मैथुन से पैदा नहीं हुईं केवल वरदान से हुईं। इस चालाकी का भी कुछ ठिकाना है कि जिन प्रमाणों को ये लोग हमारे आगे रक्खें उनको तो हम मानलें और जो प्रमाण उसी ग्रन्थ का हम इनके आगे रख दें तब ये ग्रन्थ को तो छोड़ दें और हुज्जतबाजी पर उतर पड़ें यह इन की खोखली हुज्जतें, बनावटी हुज्जतें विद्वानों के आगे कितनी देर ठहरेंगी? हमने वरदान से पुत्र के अलावा और भी कई एक अतर्क्य कार्यों का होना बतलाया? अब लगावें उन में हुज्जतबाजी? ऐसा नहीं हो सकता" इसको छोड़कर और कुछ नहीं कह सकते, दूसरी बात कहने के लिये इनकी हुज्जतों का दिवाला निकल जाता है। "ऐसा नहीं हो सकता" यह तो अनभिज्ञ कहा करते हैं।

एक वार हम अलमोड़ा गये, हमको एक देहाती मनुष्य मिला, उसने पूछा आप कहाँ रहते हैं? हमने बतलाया कि

कानपुर। फिर उसने प्रश्न कर दिया कि कानपुर यहां से कितने कोस है? हमने उत्तर दिया करीब करीब दो सौ पचास कोस। वह फिर प्रश्न कर बैठा कि आप कितने दिन में आये? हमने कहा कि दो दिन में। उसने हमारी तरफ को देखा और देख कर बोला कि तुम एक दिन में कितने कोस चल लेते हो? हम समझ गये कि इसने हमारा पैदल आना असम्भव समझा है। हमने उसको समझाया कि हम कानपुर से रेलगाड़ी में बैठ कर एक दिन रात में 'काठ गोदाम' अढ़ाई सौ कोस आगये। उसने सवाल कर दिया कि रेलगाड़ी क्या? हमने उसको रेलगाड़ी का समझाना आरंभ किया, वह सुन कर बोला कि नीचेके आदमी होते तो अच्छे हैं किन्तु झूठ बहुत बोला करते हैं-कहीं लोहे की गाड़ी भी इतनी दौड़ सकती है? हमने खूब मगज पच्ची की-किन्तु रेल का चलना उसकी दृष्टि में असंभव ही बना रहा। एक मनुष्य रेल के चलने को असंभव मानता है तो क्या उसके इस असंभव मानने से रेल गाड़ियां न दौड़ेंगी? जिस प्रकार पढ़े लिखे लोग रेल को असंभव मानने वाले मनुष्य को मूर्ख समझते हैं उसी प्रकार हम "वरदान द्वारा पुत्र होना असंभव है" ऐसा कहने वाले मनुष्य को वज्र मूर्ख मानते हैं।

संसार में एक भी मनुष्य ऐसा पैदा नहीं हुआ जो पूर्वोक्त दो श्लोकोंके महाभारतसे रहते हुये यह सिद्ध करदे कि धृतराष्ट्रादि वरदान से पैदा नहीं हुये थे? जब महाभारत अपना

फैसला देता है कि "ये आठ संतानें केवल वरदान से उत्पन्न हुईहैं" फिर जबर्दस्तीसे नियोग द्वारा उत्पत्ति बतलाना संसार को धोखा देना है और शास्त्रार्थ के अवसर पर बेइज्जती करवाना या डर के मारे घर में घुसना अथवा भाग जाना इसके सिवाय इसमें जरा भी सार नहीं-अतएव हम प्रार्थना करते हैं कि नियोग के प्रेमी आगे से होश में आकर बातें किया करें, चएडूखानेकी गप्पें न उड़ाया करें ? नहीं तो इस का फल भोगना होगा, अपमान सहना होगा और अन्त में पबलिक के सामने मिथ्यावादी, लंपट, धोकेबाज प्रभृति डिगरियों को प्राप्ति होगी ? जो लोग धृतराष्ट्रादिको नियोगज बतलाते हैं वे किसी विद्वान् के सामने जावें तो उनको भी नानी याद आवे किन्तु ये ऐसा नहीं करते साधारण मनुष्यों को बहकाते रहते हैं, विद्वान् के आने पर या तो स्थान छोड़ कर रफूचक्कर होते हैं या ऐसी बातों का जिक्र नहीं छेड़ते यह इन की विद्वत्ता का नमूना है।

नियोग--मीमांसा ।

कई एक मनुष्य यह कहा करते हैं कि स्मृतियों में तो नियोग प्रतिपादन है ? और वे लोग कई एक स्मृतियों का प्रमाण भी दिया करते हैं। उन प्रमाणों में से हम दो प्रमाण यहां पर दिखलाते हैं, वे ये हैं।

प्रेतपत्नी षण्मासान् व्रतचारिण्यक्षार-

लवणं भुंजानाऽधः शयीतोर्ध्वं षड्भ्यो मासेभ्यः स्नात्वा श्राद्धं च पत्ये दत्वा विद्याकर्मगुरुयोनिसंबन्धान् सन्निपात्य पिता भ्राता वा नियोगं कारयेत्तपसे ॥ ४८ ॥

वसिष्ठ० अ० १७।

मरे हुये पुरुष की पत्नी छः महीने तक खार और लवण को छोड़ कर हविष्य भोजन करती हुई व्रत कर के पृथ्वी पर सोवे, छः महीने के उपरान्त स्नान कर पति का श्राद्ध करके, पति को विद्या पढ़ाने और कर्म कराने वाले गुरु लोगों और पति के भाई आदिकी सभा करके सब की राय हो तो स्त्री के लिये सन्तान की विशेष अपेक्षा होने पर स्त्री का पिता व भाई तपके लिये नियोग करा देवे (उत्पन्न हुआ सन्तान मृत पिता का स्थानापन्न हो कर श्राद्धादि कर्म रूप तप करेगा)।

एक प्रमाण हम दिखला चुके, अब दूसरा प्रमाण नियोग विषय में मनुस्मृति का दिखलाते हैं, वह यह है।

देवराद्वा सपिण्डाद्वा-स्त्रिया सम्यङ्नियुक्तया।
प्रजेप्सिताधिगन्तव्या-सन्तानस्य परिक्षये ॥५८
विधवायां नियुक्तस्तु-घृताक्तो वाग्यतो निशि।
एकमुत्पादयेत्पुत्रं-न द्वितीयं कथं चन ॥ ६० ॥
द्वितीयमेके प्रजनं—मन्यन्ते स्त्रीषु तद्विदः।

अनिर्वृत्तं नियोगार्थं-पश्यन्तो धर्मतस्तयोः ॥ ६१
विधवायां नियोगार्थे-निर्वृत्ते तु यथाविधि।
गुरुवच्च स्नुषावच्च-वर्तेयातां परस्परम् ॥ ६२ ॥
नियुक्तौ यौ विधिं हित्वा-वर्तेयातां तु कामतः।
तावुभौ पतितौ स्यातां-स्नुषागगुरुतल्पगौ ॥६३॥

मनु० अ० ६।

(अपने पति से) सन्तान के अभाव में भली भांति नियुक्त हुई स्त्री को चाहिये कि देवर से वा सपिण्ड से अभीष्ट सन्तान उत्पन्न करे। ५६। विधवा के साथ नियुक्त पुरुष (शरीर पर) घी मल कर वाणी को रोके हुये एक पुत्र उत्पन्न करे दूसरा किसी तरह नहीं। ६०। पर दूसरे उस (नियोग विधि) के जानने वाले (एक से) नियोग का प्रयोजन न सिद्ध हुआ मानते हुये उन दोनों का दूसरा (गर्भ धारण) धर्म नहीं मानते। ६१। विधवा में विधि अनुसार नियोग का अर्थ (गर्भ धारण) सिद्ध होने पर वे दोनों परस्पर गुरु की तरह और स्नुषा की तरह वर्तें ६२। नियुक्त जो [स्त्री पुरुष] विधि त्याग कर अपनी कामना से वर्तें वे दोनों पतित होते हैं अर्थात् (बड़ा हो तो) पुत्रवधू-गामी होगा (छोटा हो तो) गुरुपत्नी गामी होगा। ६३।

इस प्रकार का नियोग शास्त्रमें पाया जाता है। इसमें छः महीने तो व्रत धारण करना लिखा है। कामी लोगों ने इस

नियोग को ऐसे सांचे में डाल दिया जिससे संसार मात्र को घृणा आये विना नहीं रहती। शास्त्र कहता है कि विधवा स्त्री छः महीने व्रत करे फिर नियोग हो। कामी कहते हैं कि यदि कोई स्त्री विधवा हो जावे तो पति की लहाश घर से तब उठे जब विधवा का नियोग हो ले (२) जब मनुष्य परदेश चला जाय तब भी नियोग कर ले (३) जब मनुष्य सन्तानोत्पन्न करने में असमर्थ हो तो स्त्री नियोग कर ले (४) स्त्री के पेट में गर्भ हो, पति पास हो तबभी नियोग करले। ऐसे विविध नियोगों का स्मृतियोंमें कहीं भी चर्चा नहीं है। पति मरने पर कुछ काल के पश्चात् छः महीने व्रत रखकर सन्तानके अभाव में नियोग विधि वसिष्ठ स्मृति में कही है मनुस्मृति ने यह भी कह दिया है कि यदि एक बार विषय करने से सन्तान न हो तो फिर दूसरी बार विषय न करे।

यद्यपि और भी कई एक स्मृतियों में नियोग का उल्लेख मिलता है किन्तु "सर्वे पदा हस्तिपदे निमग्नाः" हाथी के पैर में सबका पैर आ जाता है। जब सब स्मृतियों में प्रधान मनुस्मृति में नियोग का चर्चा आ गया तब और में आवे या न आवे; मनु का एक ही प्रमाण तोषदायक है। हम माने लेते हैं कि और स्मृतियों में भी नियोग है, हमें इसमें विरोध नहीं। विरोध इतना है कि नियोग के प्रेमी पबलिक के आगे नियोग रखते समय चालाकी कर देते हैं इस चालाकी के विषय में

हम एक दृष्टान्त रक्खेंगे और उसके ऊपर से की हुई चालाकी को बतलावेंगे।

एक स्थान में सैकड़ों मुसलमान निमाज पढ़ने के लिये जमा हुये; अभी सब आते जाते थे और बैठते जाते थे। इसी अवसर पर हाथ में अखबार लिये एक चालबाज मुसलमान आया और कहने लगा कि हमारे यहां आज एक अखबार आया है उसमें मुसलमानों के लिये निमाज पढ़ना मने लिखा है, यही बात बतलाने के लिये मैं इससमय यहां आया हूं। मुसलमानों ने कहा कि वह अखबार दिखलाओ ? इस हजरत ने आगे की इबारत तो दहिने हाथ की अंगुलियों से दबा ली और लोगों को अखबार दिखलाने लगा। उसमें लिखा था कि "मत पढ़ो निमाज" मुसलमान उसको पढ़ें और सोच विचार में पड़ जावें कि यह ऐसा क्यों लिखा गया? । वह सब को दिखलाता हुआ एक मौलवी के पास पहुँचा, मौलवी ने अखबार के लेख को पढ़ इस हजरत से कहा कि आगे लिखी इबारत के ऊपर से अंगुली उठालो, हमको पढ़ने दो यह सुन कर हजरत-बोले कि तुम अपना मतलब पढ़ लो आगे के लेख से तुम को क्या प्रयोजन ? किन्तु मौलवी साहब ने इस के कहने को नहीं माना अपने हाथ से जोर लगा कर अखबार पर रक्खा हुआ इस हजरत का हाथ उठा लिया, आगे लिखा मिला "जब कि हो नापाक" अखबार में इबारत लिखी थी कि मत पढ़ो "निमाज, जब कि हो नापाक" यह चालबाज "जब कि हो नापाक"

इस इबारत को तो छिपा लेता है और 'मत पढ़ो निमाज" इतनी इबारत दिखला कर सर्वदा के लिये निमाज का सफाया करता है-क्या यह चालाकी नहीं है ? यह इंसाफ है ? इस का नाम धर्म निर्णय है ? कहीं ऐसी ऐसी चालाकियों से भी विजय होती है ?

जैसी चालाकी इस दृष्टान्त में है बस हूबहू वैसी ही चालाकी मनु के लिखे हुये नियोग में की गई है। मनु जी ने नियोग विषय के दश श्लोक मनु स्मृति में लिखे हैं। उन दश में पाँच श्लोक हमारे सामने रख दिये जाते हैं जिन से नियोग का 'मण्डन होता है' आगे के पांच श्लोक जिन में नियोग का 'खण्डन' है वे छिपा लिये जाते हैं। इस कतर ब्योंत, चालबाजी से नियोग को स्मृति प्रतिपाद्य सिद्ध कर दिया जाता है। हाँ-हम यह मानते हैं कि जिन लोगों ने मनु स्मृति नहीं पढ़ी वे इस जाल में फंस सकते हैं किन्तु जो शास्त्र के सुविज्ञ हैं, जो धर्मशास्त्र के एक एक अक्षर को जानते हैं उन के आगे यह चालाकी कितने सेकण्ड ठहरेगी ? अब हम आगे के पाँच श्लोक आप के आगे रखते हैं प्रथम उन को सुनिये और फिर विचार कीजिये कि धर्मशास्त्र में नियोग का क्या निर्णय है ? श्लोक ये हैं—

नान्यस्मिन्विधवा नारी-नियोक्तव्या द्विजातिभिः।
अन्यस्मिन्हि नियुञ्जाना-धर्मं हन्युःसनातनम्॥६४
नोद्वाहिकेषु मन्त्रेषु-नियोगः कीर्त्यते क्वचित्।

न विवाहविधावुक्तं-विधवावेदनं पुनः ॥ ६५ ॥
अयं द्विजैर्हि विद्वद्भिः-पशुधर्मो विगर्हितः ।
मनुष्याणामपि प्रोक्तो-वेने राज्यं प्रशासति ॥ ६६
समहीमखिलां भुञ्जन्राजर्षिप्रवरः पुरा ।
वर्णानां संकरं चक्रे-कामोपहतचेतनः ॥ ६७ ॥
ततः प्रभृति यो मोहात्प्रमीतपतिकां स्त्रियम्।
नियोजयत्यपत्यार्थं-तं विगर्हन्ति साधवः ॥ ६८ ॥

मनु० अ० ६।

द्विजाति लोगों को विधवा स्त्री-पति से भिन्न किसी पुरुष के साथ भी नियोजित न करनी चाहिये, जो नियोजित करते हैं वे परम्परागत एक पतित्व इस सनातनधर्म का हनन करते हैं। ६४। विवाह के "अर्यमणंनुदेवं" इत्यादि मन्त्रों में जिनसे विवाह होता है उन में कहीं पर भी नियोग नहीं कहा और न विवाह विधायक शास्त्र ही में अन्य के साथ विधवा का विवाह कहा है। ६५। यह नियोग पशुधर्म है और विद्वान् द्विज इसको निन्द्य कहते हैं। यह पशुधर्म वेन ने शासन करते समय मनुष्यों में भी प्रचलित कर दिया। ६६। राजर्षिप्रवर वेन समस्त पृथिवी का चक्रवर्त्ती राजा हुआ उसका चित्त काम ने भ्रष्ट कर दिया अतएव यह वर्णसंकरता वेन ने संसार में फैलाई। ६७। उस दिन से मृतकपति की स्त्री को जो लोग संतान के मोह में आकर दूसरे से नियोग करवाते हैं-सज्जन

लोग उस नियोग का वर्णन करते हुये उस की निन्दा करते हैं। ६८।

ये पांच श्लोक जिनमें नियोग का भली भांति से खण्डन किया गया है छिपा लिये जाते हैं और प्रथम लिखे पांच श्लोक जिनमें नियोग का विधान है-संसार के आगे रख दिये जाते हैं-यह कलियुग के महर्षि की विद्याका उत्कर्ष है। ऐसी ऐसी चालाकियों से नियोग सिद्ध करने के लिये आज सैकड़ों मनुष्य तैयार बैठे हैं। किन्तु यह चालाकी कितने दिन चलेगी?

उघरे अन्त न होहि निबाहू।
कालनेमि जिमि रावण राहू॥

अन्त में कपट जाल खुल ही जाता है। जब मनु जी पांच श्लोकों में नियोग का घोर खण्डन कर रहे हैं तब फिर कोई भी मनुष्य यह नहीं कह सकता कि नियोग स्मृति विहित है। यही कहना पड़ेगा कि स्मृति में आये हुये नियोग को मनुने धर्मनाशक, वेद विरुद्ध, पशुधर्म और घृणित बतलाया है। मनु जी ने 'नान्यस्मिन्०" इस श्लोकमें नियोगको धर्मनाशक कहा और "नोद्वाहिके०" इस श्लोक में वेद विरोधी सिद्ध किया, "अयंद्विजैः" इस श्लोक में पशुधर्म तथा घृणित बतलाया, पंचम श्लोक में निन्दनीय कहा-इतने पर भी नियोग को धर्म बतलाना मनुष्यों की आंख में धूल झोंकना नहीं-तो और क्या है? यह नियोग की कथा समाप्त हुई। अब श्रोता विचारें कि स्मृतियों में नियोग की विधि है या नियोग का खण्डन है।

युगान्तर विषय।

कई एक मनुष्य यह कहेंगे कि ठीक है "नान्यस्मिन्" इस श्लोक से आरंभ कर मनु ने नियोग का खण्डन किया और इसको हम समझ भी गये किन्तु "देवराद्वा सपिण्डाद्वा" इस श्लोक से लेकर पाँच श्लोकों में जो नियोग बतलाया है उसका क्या उत्तर है? इस विषय में हम अपनी तरफ से कुछ भी उत्तर न देकर वसिष्ठ स्मृति का फैसला पबलिक के आगे रक्खे देते हैं-पबलिक वसिष्ठ स्मृति के फैसले से अपने आप समझ जावेगी कि पूर्व के पांच श्लोक लिखने का मनु का क्या अभिप्राय है। वसिष्ठ स्मृतिके श्लोक सुनिये-हम वसिष्ठ स्मृतिके श्लोक और उनका अर्थ ईश्वरचन्द विद्यासागर की बनाई हुई पुस्तक 'विधवाविवाह' से पढ़ कर ज्यों का त्यों पबलिक के आगे रक्खे देते हैं। पृष्ट ६८ में ईश्वरचन्द लिखते हैं कि—

उक्तोनियोगो मनुना निषिद्धः स्वयमेव तु।
युगक्रमादशक्योऽयं-कर्तुमन्यैर्विधानतः॥
तपोज्ञानसमायुक्ताः- कृतत्रेतायुगे नराः।
द्वापरे च कलौ नृणां-शक्तिहानिर्हि निर्मिता॥
अनेकधा कृताः पुत्रा-ऋषिभिश्च पुरातनैः।
न शक्यन्तेऽधुनाकर्तुं- शक्तिहीनैरिदंतनैः॥

मनुने स्वयं नियोग का विधान किया है और स्वयं ही निषेध भी किया है। युगह्रास के कारण लोग नियोग का निर्वाह कर नहीं सकते। सत्य, त्रेता, और द्वापर युग में लोग ज्ञान और तपसे सम्पन्न थे किन्तुकलिमें मनुष्य शक्ति हीन हो गये हैं पूर्वकालमें ऋषियोंने जो नाना प्रकारके पुत्रोंका विधान किया है आज कल के शक्ति हीन लोग उन सब पुत्रों को बना नहीं सकते।

अब सिद्ध हो गया कि मनु ने उन समर्थ, राग द्वेष रहित, पवित्र, ऋषि मुनियोंके लिये नियोगका विधान किया है जो पुत्रोत्पन्न करने में शक्ति रखते हैं। इतिहास बतलाता है कि वाल्मीकि ऋषि की उत्पत्ति बांबी से और मांडूक्य ऋषि की उत्पत्ति मेंढकी तथा ऋष्यशृंग की उत्पत्ति हरिणी से हुई है - वे ही ऋषि नियोग कर सकते थे जिन में सब ओर से पुत्रोत्पादन की शक्ति थी, उन के लिये तो विधान है और शक्ति हीन मनुष्यों के लिये निषेध है-बस नियोग का यही फैसला है। इस फैसलेको हम अपनी तरफसे नहीं लिखते वरन् ब्रह्मा के पुत्र वसिष्ठ ऋषि का यह फैसला है। इस फैसले को मनु के टीकाकार कुल्लूकभट्ट ने भी माना है और जो श्लोक वसिष्ठ के हमने यहां कहे तथा ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने अपनी बनाई विधवाविवाह में लिखे वे ही श्लोक कुल्लूकभट्ट ने "ततः प्रभृति यो मोहात्,, इस श्लोक के टीका में लिख दिये हैं। बस सिद्ध हो गया कि इस युगमें शक्तिहीन

पुरुषों के लिये मनुजी नियोग का निषेध करते हैं। अब कौन कह सकता है कि स्मृतियों में लिखा हुआ नियोग आधुनिक लोगों के लिये है।

निष्कर्ष।

स्मृतिकारों ने जो नियोग का उपदेश दिया था वह केवल क्षत्रिय जाति के लिये था; फिर वह नियोग समस्त क्षत्रिय जाति के लिये नहीं वरन् क्षत्रिय जाति में केवल राजघराने के लिये, राजघराने में भी सर्वदा नियोग की विधि नहीं, केवल वंश नष्ट होने पर जब राजघराने में राज्य के चलाने वाला कोई मनुष्य न रहे, वंशच्छेदन हो जावे उस समयमें राजा की रानी नियोग का आश्रय ले, वह भी समस्त मनुष्यों से नहीं, ऐसे किसी शक्ति शाली ऋषि से कि जिस में पुत्रोत्पन्न करने की मानसिक शक्ति विद्यमान् हो यह स्मृतियों का अभिप्राय था। स्मृतियों के इस अभिप्राय को मिटा कर वेन ने संसार में समस्त स्त्रियों के लिये नियोग करने की आज्ञा दे दी, इस आज्ञा में शास्त्र विधि का उल्लंघन हो गया अतएव प्रजा की रक्षा के लिये राज वंश की सत्ता रखने के निमित्त जो स्मृतियों ने एक नियम विशेष निकाला था वह वेन की कृपा से व्यभिचार के सांचे में ढल गया। मन्वादिक स्मृतियों ने उस को फिर उड़ा दिया, वसिष्ठ स्मृति ने लिख दिया कि सतयुग, त्रेता, द्वापर में ऐसे शक्ति शाली ऋषि पाये जाते थे, जो पुत्रोत्पादक मानसिक शक्ति में दक्ष थे, कलियुग में ऐसे ऋषि

पाये नहीं जाते, पुत्रोत्पादक शक्ति शाली ऋषियों के अभाव में कलियुग में नियोग हो ही नहीं सकता, स्मृतियों के इस गूढ़ अभिप्राय को नियोग प्रेमी खूब छिपाते हैं।

इतिहासमें जितने भी नियोगों का होना दृष्टिगोचर होता है वे क्षत्रिय जाति में, क्षत्रिय जाति में भी राजघराने में, राज घराने में भी खास रानीके लिये, रानी भी नियोग करे तो वंश नष्ट होने पर और वह भी किसी शक्ति शाली ऋषि से, ऋषि से भी एक ही बार, इन समस्त नियमोंको तोड़ कर सत्यार्थ-प्रकाश के रचयिता समस्त जाति की समस्त स्त्रियों के लिये नियोग का बाजार खोल देते हैं यह इनकी शास्त्रानभिज्ञता है। इतिहास के संग्रह को टटोल डालो कभी भी ब्राह्मण जाति में किसी स्त्री का नियोग नहीं हुआ। वैश्य जाति में नियोग का होना किसी इतिहास ने नहीं लिखा, कोई भी मनुष्य इतिहास से सामान्य क्षत्रियोंमें नियोगका होना सिद्ध नहीं कर सकता किसीभी रानीने पुत्र होने पर कभी नियोग नहीं किया। दया-नन्द अठारह पुत्र पैदा होने पर और उन के जीवित रहने पर स्त्री के लिये नियोग लिखते हैं इनसे अधिक वज्र मूर्ख संसार में कौन हो सकता है।

चालबाज लोग नियोगका उदाहरण तो देतेहैं राजवंश क्षय होने की आपत्ति के समय का और उस उदाहरण से समस्त स्त्रियों को नियोग करने की शास्त्र विधि बतलाते हैं इस प्रकार का छल करना नियोग प्रेमियों की शास्त्रानभिज्ञता है। श्रोता

फिर समझलें कि स्मृतियों ने राजवंश नष्ट होते समय केवल रानी के लिये नियोग लिखा है वह भी शक्ति शाली किसी ऋषि के साथ में, ऋषि के साथमें भी एक बार, आज सुधारक समस्त स्त्रियों का समस्त पुरुषों के साथ नित्य प्रति गुलछर्रे उड़ाने के लिये जो नियोग चलाना चाहते हैं उस का अभिप्राय केवल यह है कि हमको नित्य नई स्त्रियां भोगने को मिलें और शास्त्र सिद्धि का अड़ंगा लग जाय तो फिर हम को कोई व्यभिचारी तथा पापी न कहे बस इस अभिप्रायसे नियोग चलाने की आवाज उठाई जाती है।

श्वेतकेतु।

वेद-धर्मशास्त्र में कच्ची खाकर नियोग के प्रेमी एक दौड़ फिर महाभारत पर लगा देते हैं इन का कहना है कि श्वेतकेतु की माता का भी तो नियोग हुआ था? नियोग हुआ न हुआ यह विचार फिर होगा, हम यह उचित समझते हैं कि प्रथम उस इतिहास को आगे रख दें जिस में से नियोग निकाला जाता है। इतिहास यह है।

बभूवोद्दालको नाम-महर्षिरिति नः श्रुतम्।
श्वेतकेतुरितिख्यातः-पुत्रस्तस्याभवन्मुनिः॥ ९
मर्यादेयं कृता तेन-धर्म्या वै श्वेतकेतुना।
कोपात्कमलपत्राक्षि! यदर्थं तं निबोध मे॥ १०
श्वेतकेतोः किल पुरा-समक्षं मातरं पितुः।

जग्राह ब्राह्मणः पाणौ-गच्छाव इति चाब्रवीत् ॥ ११
ऋषिपुत्रस्ततः कोपं चकारामर्षचोदितः ।
मातरं तां तथा दृष्ट्वा-नीयमानां बलादिव ॥ १२
क्रुद्धं तन्तु पिता दृष्ट्वा-श्वेतकेतुमुवाच ह ।
मा तात कोपं कार्षीस्त्वमेष धर्मः सनातनः ॥ १३
अनावृता हि सर्वेषां-वर्णानामङ्गना भुवि ।
यथा गावः स्थितास्तात ! स्वे स्वे वर्णे तथा प्रजाः ।१४
ऋषिपुत्रोऽथ तं धर्मं-श्वेतकेतुर्न चक्षमे ।
चकार चैव मर्यादामिमां स्त्रीपुंसयोर्भुवि ॥ १५
मानुषेषु महाभागे-न त्वेवान्येषु जन्तुषु ।
तदा प्रभृति मर्यादा-स्थितेयमिति नः श्रुतम् ॥ १६
व्युच्चरन्त्याः पतिं नार्या-अद्य प्रभृति पातकम् ।
भ्रूणहत्या समं घोरं-भविष्यत्यसुखावहम् ॥ १७ ॥
भार्यां तथा व्युच्चरतः-कौमारब्रह्मचारिणीम् ।
पतिव्रतामेतदेव-भविता पातकं भुवि ॥ १८ ॥

महाभा० आदि० प० अ० १२२ ।

मेरे सुनने में आया है कि पहिले उद्दालक नाम वाले कोई एक ऋषि थे, उन के श्वेतकेतु नाम वाला एक प्रसिद्ध मुनि कुमार था ॥ ६ ॥ उस श्वेतकेतु ने ही इस धर्म की मर्यादा को

बांधा है। हे कमलके समान नेत्रों वाली! इस मर्यादाको उसके ने कोप में भर कर जिस लिये बांधा था सो तुम मुझ से सुनो ॥ १० ॥ एक समय श्वेतकेतु बैठा था, उसके सामने ही उसके पिता के पास से किसी ब्राह्मण ने उस की माता का हाथ पकड़ कर अपने साथ चलने को कहा ॥ ११ ॥ तब तो ऋषिके पुत्र ने आवेश में आकर क्रोध किया, तदनन्तर वह ब्राह्मण श्वेतकेतु की माता को बलात्कार से लिये जाता था ॥ १२ ॥ यह देख कर उस ऋषि पुत्र श्वेतकेतु को बड़ा क्रोध चढ़ा, तब क्रुद्ध होते हुये श्वेतकेतु को देख कर उस का पिता उद्दालक उस से बोला कि हे पुत्र? तू क्रोध न कर यह तो पुराना धर्म है । १३ । पृथ्वी पर सब वर्णों की स्त्रियाँ बे रोक टोक घूमती हैं हे तात ! जैसे गौ आदि पशु अपनी जाति में चाहे तहाँ चली जाती हैं तैसे प्रजाओं के लिये भी कोई नियम नहीं है । १४ । परन्तु ऋषि पुत्र श्वेतकेतु इस धर्म को नहीं सह सका इस कारण उसने पृथ्वी पर स्त्री पुरुषों की मर्यादा बाँधी। १५ । हे महाभागे ! उस समय से यह मर्यादा मनुष्यों के लिये चलने लगी ऐसा कहते हैं परन्तु पशुओंमें यह मर्यादा नहीं चली ।१६। जबसे ऐसी मर्यादा चली है हमारे सुनने में आया है कि तब से पति को छोड़ कर व्यभिचार करने वाली स्त्री को गर्भपात के समान दुःख देने वाला घोर पातक लगेगा । १७ । तथा जो पुरुष अपनी स्त्री को छोड़ कर बालकपन से पवित्र रही दूसरी पतिव्रता से गमन करेगा उसको भी यही पातक लगेगा ।१८।

मनुष्य जिस समय में उत्पन्न हो कर संसार को देखत है तो अपनी अनभिज्ञता से यही समझ बैठता है कि संसा सर्वदा ऐसा ही रहा है। प्रत्यक्ष को देख कर उस के तुल संसार को मान लेना यह भूल है। सृष्टि के आरंभ में इस प्रकार के वस्त्र और ऐसे ही बर्तन तथा वर्तमान समय खाद्य पदार्थ मौजूद थे-इसको कोई भी सृष्टि विज्ञानवे मान नहीं सकता। आरंभ में खाद्य अन्न बहुत छोटे छोटे मनुष्यों ने उन्नति देकर इनको बड़े बनाया है। चूल्हा-चक्र तवा-बटलोई भी सृष्टि के आरंभिक दिन से मौजूद थे इस कोई मान नहीं सकता, यह मनुष्यों की बुद्धि का विकाश कपास से रुई बनने का मार्ग सोचा गया, रुई से सूत बन का विचार आगे आया, सूत से कपड़ा बनाने पर मनुष्यों बुद्धियां दौड़ीं-तब कपड़ा पहरने को मिला। सृष्टि के आरंभ छापेखाने नहीं थे, कागज भी नहीं थे, स्याही कलम बनने तरीका भी जारी नहीं हुआ था, अक्षर लिखने की पद्धति चालू नहीं हुई थी-उस समय मनुष्य वेदादिक शास्त्र दूसरे से मिलकर सुनता और याद करता था। जब त शिक्षा संसार में फैले नहीं तो संसार उसके मार्ग का अवल म्बन कैसे कर सकता है। धर्म का ज्ञान नहीं था, धर्म मर्यादा नहीं थी, स्त्रियाँ और पुरुष प्रकृति के अनुसार रह थे उसी मार्ग का अवलम्बन कर ऋषि ने श्वेतकेतु की मार

का हाथ पकड़ा, श्वेतकेतु को स्वाभाविक क्रोध आया, उसी दिन से श्वेतकेतु ने संसार में श्रुति स्मृति प्रतिपाद्य मर्यादा को स्थापित कर दिया। मनुष्य वेद, धर्म शास्त्रके मार्गमें बंध कर पति-पत्नीधर्म का पालन करने लगे-यह इस कथासे सिद्ध होता है-नियोग करना सिद्ध नहीं होता। यहां पर नियोग शब्द ही नहीं और न कोई अन्य शब्द ऐसा है जिससे नियोग करना समझ लिया जावे ? कथा में भी नियोग का भाव नहीं कथा से केवल यह पता चलता है कि उस समय के मनुष्य वेद शास्त्र की अनभिज्ञता से स्वेच्छाचारी थे इसको नियोग के सांचे में ढालना पाप और छल है। श्रोतालोग कथा ही से सब समझ गये अधिक टीका टिप्पणी की आवश्यकता ही नहीं।

वर्तमान समय और नियोग।

वर्तमान समय में योरोप की शिक्षा से शिक्षित भारत को योरोप बनाने वाले समुदाय में भी नियोग का कोई मण्डन नहीं करता। 'विधवा विवाह' का उद्योग करने वाले और उस पर ग्रन्थ छपाने वाले ईश्वरचन्द्र विद्यासागर हमारे मित्र पं० बद्रीदत्त जोशी इन दो पुरुषों ने विधवाविवाह का मण्डन किया है किन्तु नियोग के दोनों शत्रु हैं।

आर्यसमाजियों में पं० नरदेव वेदतीर्थ और ला० मुन्शीराम

प्रभृति सज्जनों ने भी नियोग का खण्डन ही किया है। भूत और वर्तमान समस्त ही आर्यसमाजी नियोग को व्यभिचार समझते हैं इसी कारण से आर्यसमाजियों में आज तक एक भी नियोग नहीं हुआ, इससे अधिक नियोग के खण्डन में अन्य कोई सबूत की आवश्यकता नहीं। यदि आर्यसमाजी इसको धर्म समझते तो अपने यहां चालू करते? आर्यसमाज में इसका चालू न होना सिद्ध कर रहाहै कि आर्यसमाज इसको घृणा की दृष्टिसे देख रहा है और इसको मनुष्य धर्म न समझ कर पशु धर्म समझता है।

हां कई एक आर्यसमाजी शास्त्रार्थमें नियोग के लिये पैर पीटा करते हैं उनका मतलब यह नहीं कि आर्यसमाज में नियोग चालू हो वरन् मतलब यह है कि स्वामी दयानन्द जी ने शास्त्रानभिज्ञतासे सत्यार्थ प्रकाशमें नियोग लिख दिया है, यदि हम इसको घृणित और पशुधर्म मान लेंगे तो स्वामी जी की वेइज्जती होगी? संसार समझ जावेगा कि इनके धर्मनेता को वेद शास्त्र कुछ नहीं आता था और बिना विचारे ही जो चाहते थे लिख मारते थे? फिर उनको कोई भी मनुष्य ऋषि और विद्वान् न मानेगा? इससे आर्यसमाज की हतक होगी? इस हेतु से नियोगको वैदिक धर्म, परम्परागत धर्म कह देते हैं वास्तव में इस विषय में आर्यसमाज ही नियोग चलाने वाले स्वा० दयानन्द जी का परम शत्रु है-और उनके लिखे वैदिक

धर्म नियोग को घृणाकी दृष्टिसे देखता है। अब सिद्ध होगया कि नियोग को धर्म मानना चण्डू खाने की गप्प है भंग की तरंग है बस आज के व्याख्यान को मैं यहां पर ही समाप्त करता हूं और एक बार बोलिये जगन्माता भगवती जनक नन्दिनी की जय।

कालूराम-शास्त्री।

श्रीगणेशाय नमः ।

हिन्दु कार्यालय के पुस्तकों

का

सूचीपत्र !

धर्म प्रकाश ।

यह पुस्तक आर्यसमाज और सनातनधर्म के सिद्धान्तों में किस के सिद्धान्त वेदानुकूल हैं इस की जानकारी के लिये शास्त्री जी ने लिखी है । इस में प्रथम 'सत्यार्थ प्रकाश, फिर उतने ही लेख के खण्डन का 'दयानन्द तिमिर भास्कर' इसके पश्चात् दयानन्द तिमिर भास्कर का खण्डन करने वाला 'भास्कर प्रकाश' फिर भास्कर प्रकाशके ऊपर 'धर्मप्रकाश' इस प्रकार प्रत्येक विषय पर चारों ग्रन्थों के लेख पूर्ण छापे गये हैं, इस ग्रन्थकी प्रशंसा स्वर्गीय विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसाद जी मिश्र तथा वेदव्याख्याता पं० भीमसेन जी एवं विद्यारत्न पं० कन्हैयालाल जी महोपदेशक; पं० गोकुलचन्द जी शास्त्री, विद्यावागीश पं० गोविन्दराम शास्त्री और पं० श्रवणलाल जी प्रभृति स्वर्गीय विद्वानों ने लिखी है । वर्तमान कालके विद्वान्

महामहोपध्याय पं० गिरिधर जी शास्त्री प्रिंसिपल जयपुर कालेज तथा कविरत्न पं० अखिलानन्द जी एवं विद्याविभूषण पं० श्रीकृष्ण जी जोशी बी० ए० .एल० एल० बी० धार्मिक प्रोफेसर विश्व विद्यालय काशी प्रभृति अनेक विद्वानों ने की है। इस ग्रंथ में पृथक् पृथक् समुल्लास हैं, छै समुल्लास का यह ग्रन्थ छपा हुआ तैयार है पृष्ठ संख्या १२१२ मूल्य ५) डाकव्यय चौदह आना।

सत्यार्थ प्रकाश।

स्वामी दयानन्द जी का बनाया हुआ असली 'सत्यार्थ प्रकाश' यही है। इस में मृतक पितरों का श्राद्ध, स्वर्ग में रहने वाले देवताओं का मानना तथा आर्यसमाजियों के लिये हवन कर के गाय बैल को चट कर जाना लिखा है। स्वामी दयानन्द जी के स्वर्गवास होने पर प्रतिनिधि ने काट छांट कर के एक नया सत्यार्थप्रकाश बना लिया और इस असली सत्यार्थ प्रकाश को खरीद खरीद कर आर्यसमाज ने नष्ट करनां आरंभ कर दिया, यहां तक अलभ्य हुआ कि तीन रुपये की पुस्तक खोजने पर साठ रुपये की भी नहीं मिलती थी, जब हमने यह देखा कि भीतरी जलन के कारण आर्यसमाजी लोग दयानन्द के सिद्धान्तोंको संसार से उखेड़ रहे हैं तब हमने वही असली दयानन्दकृत सन् १८७५ में छपा प्रथमावृत्ति सत्यार्थ प्रकाश छपवा दिया। भारतवर्ष की आर्यसमाजों ने रेजुलेशन पास

किया; चन्दे का संग्रह हुआ, हम को मुकद्दमे का नोटिस दिया गया किन्तु इतने पर भी मुकद्दमा न चल सका, आर्य समाजियों के मुंह पर स्याही पुत गई, हार कर घर में बैठ रहे। यह वही सत्यार्थ प्रकाश है मूल्य २) रुपया डाक महसूल पांच आने।

पुराणवर्म।

आर्यसमाजी मूर्ति पूजा, श्राद्ध, अवतार, वर्णव्यवस्था, विधवा विवाह, नियोगादि विषय पर सैकड़ों शास्त्रार्थ हार चुके, उपरोक्त विषय की पुस्तकें भी शास्त्री जी ने ऐसी लिखीं कि जिन के उत्तर में आज तक आर्यसमाज की लेखनी नहीं उठी, अब हार कर आर्यसमाजियों ने यह मैदान छोड़ दिया और पुराणों का खण्डन तथा पुराणों पर शास्त्रार्थ आरंभ कर दिये। आर्य समाज के इस फौज फांटे वाले हमले को दूर करने के लिये शास्त्री जी ने "पुराणवर्म" नामक यह ग्रन्थ लिखा है यह ग्रन्थ अभी आधा ही छपा है केवल पूर्वार्द्ध है, इस के ऊपर काशी से निकलने वाले साप्ताहिक हिन्दी केसरी ने लिखा है कि—

"पुराणवर्म पूर्वार्द्ध—धर्म ग्रन्थों की कौन कहे, जिस देव-वाणी में हमारे धर्म ग्रन्थ लिखे हैं उस से भी पूर्णतया अपरिचित लोगों के बहकावे में आकर धार्मिक शिक्षा शून्य हमारे शिक्षित धर्म बांधव भी पुराणोंके सम्बन्धमें हास्यास्पद शंकायें करते देखे सुने जाते हैं। इस प्रकार के सभी सज्जनों से

हमारी प्रार्थना है कि वे 'पुराणवर्म' को एक बार अवश्य देखें, पुराणों पर बौद्ध काल से लेकर आज तक जितनी शंकायें हो सकीं हैं 'पुराणवर्म' में एक एक कर उन सभी के समाधान का प्रयत्न होगा। अभी 'पुराणवर्म' का केवल 'पूर्वार्द्ध' ही प्रकाशित हुआ है। इसे आद्यन्त पढ़ने के बाद निःसंकोच भाव से हम कहते हैं कि पुराण विद्यार्थी इस ग्रंथ को अवश्य देखें। इस ग्रंथ में जितनी शंकाओं का समाधान हुआ है उन पर कोई अगर मगर शेष नहीं रहा जाता। हमारा विश्वास है कि 'उत्तरार्द्ध' के प्रकाशित हो जाने पर पुराणों के संबन्ध में एक भी शंका न रह जायगी। यदि इतने पर भी किसी को सन्तोष न हो तो ग्रन्थकार की घोषणानुसार कोई भी मनुष्य विद्वत्ता पूर्ण रीति से खण्डन कर १०००) पारितोषिक लेने का प्रयत्न कर सकता है और हम अनुरोध करेंगे कि वह अवश्य प्रयत्न करे। अस्तु कहने का मतलब यह है कि पुराण के मानने वालों और उन के विरोधियों दोनों ही के लिये यह ग्रन्थ बड़े काम का है। इसी प्रकार इस ग्रंथ के रचयिता पं० कालूराम जी शास्त्री सनातनधर्म की जो अकथनीय सेवा कर रहे हैं उस पर मुग्ध हो कुछ सनातनी यदि उन्हें श्री शंकराचार्य का अवतार मानने लगे हों तो क्या आश्चर्य है।

जिस 'पुराणवर्म' के 'पूर्वार्द्ध' की यह समालोचना है उस का मूल्य ३॥) रु० और डाकव्यय ॥) आने। ग्रन्थकर्ता ने इस ग्रंथ के खण्डन करने वाले को १०००) इनाम देना लिखा है।

व्याख्यान दिवाकर।

इस नाम का प्रशंसनीय ग्रंथ शास्त्री जी ने लिखा है। यह इतना प्रशंसनीय है कि एक महीनेमें इसकी दो सहस्र कापियां बिक गईं। इसमें धर्म, धर्म, गृहस्थ धर्म, अभ्युत्थान, सनातन-धर्म गौरव ये पांच व्याख्यान धर्म के हैं। इस के आगे ईश्वर-स्वरूप, अवतार, अवतारवाद, कृष्णावतार, ये चार व्याख्यान अवतार के हैं। मूर्तिपूजा, प्रतिमापूजन, मूर्तिपूजावाद, भक्ति, भक्ति इस प्रकार चौदह व्याख्यान हैं। सभी व्याख्यान मधुर सरस प्रामाणिक और युक्ति युक्त हैं। इस ग्रन्थ को हाथ में लेकर व्याख्यानदाता भी बन सक्ता है और शास्त्रार्थ में विरोधियों का पराजय भी कर सकता है। जिस में ये चौदह व्याख्यान हैं इस 'व्याख्यान दिवाकर' के 'पूर्वार्द्ध' का मूल्य २) डाक महसूल पांच आने।

विधवाविवाह निर्णय।

विधवा विवाह का आन्दोलन उठने पर शास्त्री जी ने यह ग्रंथ तैयार किया है, इसमें वैदिक विवाह की उत्कर्षता, विधवा विवाहका जाल, वेद विवेचन, तर्क निर्णय, नष्टे मृते मीमाँसा वाग्दत्ता का पुनर्विवाह, पुनर्भू विवेचन विधवा विवाह का निषेध, इतिहास विवेचन, पुराणचर्चा, वेदमें नियोग, नियोग की व्यवस्था ये बारह व्याख्यान हैं। यह ग्रन्थ व्याख्यान सीखने के लिये अद्वितीय है। इस ग्रंथ को हाथ में लेकर जो शास्त्रार्थ

करगा वादी उसके आगे एक मिनट नहीं ठहर सकता । इस ग्रन्थ के खण्डन करने वाले को ग्रन्थकर्ता ने १०००) रु० परितोषिक भी लिख दिया है । यह व्याख्यान दिवाकर का दूसरा भाग है मूल्य २) रु० डाक महसूल पांच आना ।

मूर्ति पूजा ।

वैदिक उपासना विषय पर शास्त्री जीने 'मूर्तिपूजा' नामक ग्रन्थ लिखा है। पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी ने भारतप्रसिद्ध सरस्वती मासिकपत्रिकामें इस पुस्तककी भूरिभूरि प्रशंसाकी है। इस पुस्तक के खण्डन करने वाले को ग्रंन्थकर्ताने १०००) पारितोषिक भी रक्खा है। सन् १९१३ से यह पुस्तक कई बार छपी, मूर्ति पूजाके खण्डन करने वालोंके समस्त हौसले पस्त पड़ गये खण्डनके लिये किसीने भी लेखनी नहीं उठाई वरन् जिस दिन से यह पुस्तक तैयार हुई है मूर्ति खण्डन करने वालों ने शास्त्रार्थ करने छोड़ दिये भूल से कोंच रांठ कुरारा कानपुर प्रभृति जिन स्थानों में आर्यसमाज ने शास्त्रार्थ किया, इस पुस्तकके आगे भारी हार खानी पड़ी। पुस्तकका मूल्य १)रु० डाक व्यय चार आने।

अवतार ।

इस पुस्तक में वेद और युक्ति से ईश्वरका अवतार धारण करना दिखलाया गया है। वेद के प्रमाणों से ब्रह्मा, वराह, वामन, यक्ष मत्स्य प्रभृति अनेक अवतार दिखलाये गये हैं। पुस्तक पढ़ते ही आर्यसमाजी लम्बी स्वांस लेने लगते

हैं। ग्रंथकर्ता ने इस पुस्तक के खण्डन करने वाले को १०००) रु० इनाम रक्खा था किन्तु किसी की भी लेखनी न उठ सकी। इस पुस्तक का मूल्य १) डाक व्यय चार आने

वर्णव्यवस्था ।

इस पुस्तक के प्रमाण और युक्तियों को देख कर सुधारक बिगाड़क, लीडर, और प्लीडर, आर्यसमाजी और जाति पांति तोड़कों के छक्के छूट जाते हैं, जबान बन्द हो जाती है, चुपके से ही चल देते हैं। पुस्तक का मूल्य छः आना।

श्राद्ध निर्णय ।

इस पुस्तक में युक्ति तथा वेद के प्रमाणों से मृतक पितरों का श्राद्ध सिद्ध किया गया है। साथही साथ जीवित पितरों के श्राद्ध की भी खूब छीछालेदड़की गई है। पुस्तक को देखकर मृतकश्राद्धके खण्डन करने वालोंकी नानी मर जाती है मूल्य छः आना।

दयानन्द मत विद्रावण ।

इस पुस्तक का जैसा नाम है वैसा ही गुण है। इसमें जो स्वामी दयानन्द के लेख का परस्पर विरोध और अवैदिकता दिखलाई गई है उसको सुनकर आर्यसमाजी अंगुली से जीभ दबा जाते हैं। मूल्य चार आना।

सत्यार्थ प्रकाश की छीछालेदड़ ।

स्वामी दयानन्द जी के स्वर्ग वास होने पर आर्यसमाजियों

ने सत्यार्थ प्रकाश की छीछालेदड़ कर डाली। द्वितीयावृत्ति में स्वामी जी का कुछ लेख निकाला, कुछ अपनी तरफ से लिख कर सत्यार्थ प्रकाश में मिलाया और उसको सत्य बतला दिया, फिर कुछ तृतीयावृत्ति में निकाला, चतुर्था वृत्ति में फिर निकाल दिया, कुछ बदल दिया इसी प्रकार तेरहवीं आवृति तक इस ग्रन्थ में सत्यार्थ प्रकाश की काट छांट दिखलाई गई। स्वार्थ बुरी बलाय है, स्वार्थ में पड़ कर आर्यसमाजी स्वामी दयानन्दजी को मूर्ख तथा उनके सत्यार्थ-प्रकाश को झूठा लिखा करते हैं-यही इस पुस्तक में दिखलाया गया है मूल्य दो आना

शुद्धि निर्णय।

आज कल शास्त्रानभिज्ञ सुधारक देशोन्निति और स्वराज्य के गीत गाकर छटाँक भर घी में गो भक्षक मुसलमानों को ब्राह्मण, क्षत्रिय बना लेते हैं। यह शुद्धि सर्वथा शास्त्र विरुद्ध और हिन्दू जाति का नाश कर देने वाली है। शुद्धि किस प्रकार होना चाहिये वह इस पुस्तक में लिखी है। मूल्य पांच पैसा।

हिन्दु शब्द मीमांसा।

कई एक मनुष्य यह कहा करते हैं कि जब भारतवर्ष में मुसलमान आगये तब मुसलमानों ने हमारा नाम 'हिन्दु' रख दिया, 'हिन्दु' माने ठग, चोर, डाकू के हैं। इस पुस्तक में यह दिखलाया गया है कि जब हजरत मोहम्मद और मसीह का

जन्म नहीं हुआ था तब भी हमको 'हिन्दु' कहा जाता था। संस्कृत में श्रौत स्मार्त धर्म के मानने वाली और हिंसा से दूर रहने वाली जाति को 'हिन्दु' कहते हैं। मूल्य एक आना।

नमस्ते मीमांसा।

आज कल आर्यसमाजियों ने परस्पर में 'नमस्ते' करने की कवाइद चलाई है। इस पुस्तक में यह दिखलाया गया है कि 'नमस्ते' केवल ईश्वर को कर सकते हो, परस्पर में 'नमस्ते' करने का श्रुति स्मृति, इतिहास विरोध कर के इस को पाप बतलाते हैं। मूल्य एक आना

देव सभा में वेदों की अपील।

आर्यसमाज ने जो वेदों का स्वर भंग, पाठ व्यत्यय तथा अंग भंग किया है, इस प्रहार की अपील वेदों ने देवराज इन्द्र के इजलास में की है वह इसमें वर्णित है मूल्य तीन आने।

दयानन्द लीला।

इस पुस्तक में आर्यसमाज के जन्मदाता स्वामी दयानन्द जी की लीलाओं का फोटू उतारा गया है मूल्य तीन पैसा।

दयानन्द की आप्तता।

स्वा० दयानन्द जी सत्यवक्ता आप्त नहीं थे इस का प्रबल प्रमाण इस पुस्तक में दिया गया है मूल्य तीन पैसा,

वेद पर आरा।

मन्त्र और ब्राह्मण, धर्मशास्त्र तथा समस्त ऋषियों ने वेद

के दो भाग माने हैं। एक भाग का नाम मन्त्र भाग और दूसरे का नाम ब्राह्मण भाग है किन्तु ब्राह्मण भाग को स्वामी दयानन्द जी ने वेद न मान कर पुराण माना है इसी मिथ्या कल्पना की इस पुस्तक में खूब पोल खोली गई है मूल्य छः पैसा।

वेदों का कतल।

वेद के मन्त्र भाग की ११३१ शाखाएं हैं जिनको 'संहिता' भी कहते हैं। आप यों समझलें कि मन्त्र भाग में ११३१ पुस्तकें हैं, स्वामी दयानन्द जी वेद की ११३१ किताबों में से केवल चार को ही वेद मानते हैं और फिर इन चारों की भी शाखा होने के कारण वेद नहीं मानते, इस हिसाब से आर्य समाज के मत में संसार में कोई वेद की किताब ही नहीं, ऊपर की पुस्तक में यह दिखलाया गया है, मूल्य तीन पैसा।

वेद पर वज्रपात।

वेद कह रहा है कि जाति जन्म से होती है और विद्या तथा तप से उस में उत्कर्षता आती है। स्वा० दयानन्द जी ने वेदों को वज्र से घायल कर अपने मन से कल्पित गुण कर्म स्वभाव से जाति मानी है यह इस पुस्तक में दिखलाया है मूल्य दो पैसा।

वैदिक धर्म पर कुल्हाड़ा।

आर्य समाज अपने मनमाने सिद्धान्त चला कर वेद और

स्वा० दयानन्द के लेखों को कुल्हाड़े से काट रहा है। इस पुस्तकमें यही दिखलाया गया है मूल्य दो पैसा।

बनावटी वेद।

स्वा० दयानन्द जी अपने बनाये मत को वैदिक मत कहते हैं और इनकी लिखी सत्यार्थ प्रकाश की एक भी बात वेद से नहीं मिलती, इन्हों ने अपना नया बनावटी वेद बना लिया है यही इस पुस्तक में दिखलाया है मूल्य छः पैसा।

जाली वेद मंत्र।

स्वा० दयानन्द जी वेदों के नामसे जाली इबारत ही नहीं बनाते किन्तु उन्होंने वेदों के नाम से जाली वेद मंत्र भी बनाये हैं इस पुस्तकका यही विषय है मूल्य तीन पैसा।

निराकार की घुड़दौड़।

आर्यसमाजी ईश्वरको निराकार बतलाते हैं किन्तु स्वा० दयानन्द जी के मत में ईश्वर के एक स्त्री है, बाल बच्चे भी होंगे और वह भक्तोंको दर्शन देनेको आताहै तथा आर्यसमाजियों को घोड़े की लीद की आग से तपाता है, इस तरह से दौड़ता दौड़ता आफत में पड़ गया इस पुस्तक में यही दिखलाया है मूल्य दो पैसे।

लोहा लक्कड़ देवता।

आर्यसमाजी ईश्वर की मूर्तिपूजाका निषेध करते हैं किन्तु इनके मत में निराकार गुर्च का अर्क पीता है, ये रोज ईश्वर

की परिक्रमा करतेहैं, खेत के पटेले और नाई के छुरे को पूजते हैं लोहा लक्कड़ ही आर्य समाजियों के देवता हैं यही इस पुस्तक में यही दिखलाया गया है मूल्य तीन पैसा।

संस्कार विधि समीक्षा।

स्वा० दयानन्द जी ने जो संस्कार विधि बनाई है इस पुस्तकमें उसकी पोल खोली गई है मूल्य पांच पैसा।

द्विजत्वमें दियासलाई।

आर्यसमाज के मत में गर्भाधानादिक सोलह संस्कार, जनेऊ पहिनना और चुटिया (शिखा) रखना वेद विरुद्ध है; इसका विवेचन इस पुस्तकमें है मूल्य तीन पैसा।

हनुमान निर्णय

आर्यसमाज कहती है कि हनुमान जी वानर जाति के क्षत्रिय थे, इस पुस्तक में दयानन्दियों की इस मिथ्या कल्पना को चकनाचूर कर हनुमान जी को बंदर सिद्ध कियाहै मूल्य एक आना।

दयानन्द की सभ्यता।

जब कोई आर्य समाज की समालोचना करता है तब आर्य समाजी कह बैठतेहैं कि गालियां देता है। इस पुस्तक में स्वा० दयानन्द की लेखनी से निकली हुई वे गालियां दिखलाई हैं कि जो नीच मनुष्य की लेखनी से भी नहीं लिखी जा सकतीं मूल्य दो पैसा।

स्वामी गुरू कि चेला गुरू ।

स्वा० दयानन्द जी कुछ लिखते हैं और आर्यसमाजी उस लेख को झूठा बना कर कुछ और ही मानने लगते हैं, हम किस को गुरु और किसको चेला माने। मूल्य तीन पैसा।

स्वामी शिष्य संग्राम ।

दयानन्द पुराणों का खंडन करते हैं और आर्यसमाजी पुराणों को स्वतः प्रमाण मानते हैं इस पुस्तक में दोनों का महाभारत दिखलाया गया है मूल्य तीन पैसा।

स्वामी पर कलंक ।

स्वा० दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में वेद सिद्ध 'मृतक श्राद्ध' लिखा था उनके मरने पर आर्यसमाजियों ने सत्यार्थ प्रकाश में जीवित पितरों का श्राद्ध लिख दिया, इस पुस्तक में यह स्वामी पर मिथ्या कलंक दिखलाया गयाहै मूल्य तीनपैसा

मांस विचार ।

आर्यसमाजी कहा करते हैं कि मनु में मांस खाना लिखा है हमने वेदों से मांस खाने के प्रमाण देकर और उसके ऊपर परिसंख्या द्वारा यह विवेचन किया है कि भारतवासियों को कभी भी माँस खाने की आज्ञा नहीं है। मूल्य तीन पैसा

अनोखा विजय ।

आज कल आर्यसमाज सनातन धर्मके जलसे पर शास्त्रार्थ का चैलेंज दे देती है और फिर शास्त्रार्थ करती नहीं, जलसे

की समाप्ति पर अखबारों में अपना विजय छपवा देती है इस कर्त्तव्य की घटनायें दिखलाई हैं। मूल्य एक आना

लीडरों की नादिरशाही।

धर्मशास्त्रों में कन्या का विवाह आठ वर्ष से लेकर रजस्वला होने से पहिले लिखा है अनेक प्रमाण इस पुस्तक में दिखलाये हैं किन्तु हिन्दू लीडर जानबूझ कर धर्मशास्त्र का गला घोंटने के लिये शारदा बिल की पुष्टि करते हैं यह इस पुस्तक का विषय है मूल्य एक आना।

फुटकर।

दयानन्द हृदय)॥ ,दयानन्द मत दर्पण)॥ , दयानन्द की बुद्धि)॥; धर्म संताप)॥, दयानन्द का कच्चा चिट्ठा)॥, दयायन्द मत सूची)॥, दयानन्द की विद्वत्ता)॥, रमा-महर्षि सम्वाद ~), शास्त्रार्थ कुर्तकोटी ~), सनातनधर्म विजय महाकाव्य ४), षोडससंस्कार विधि २॥), स्पृश्यास्पृश्य मीमांसा ॥), व्याख्यान रत्नमाला ॥), आर्यमत निराकरण प्रश्नावली।≠) पुनर्जन्म।), आश्वमेधिक मन्त्र मीमांसा ≋), नरमेध यज्ञ मीमांसा)॥,मुक्ति प्रकाश ~) पंचकन्या चरित्र ≠), दयानन्द के मूल सिद्धान्त की हानि)॥, सनातन धर्म प्रश्नोत्तरावली प्रथम भाग ~), द्वितीय भाग।), नित्य हवन विधि)॥, भोजन विधि)॥, कातीय तर्पण विधि)॥, डाक व्यय अलग होगा।

"हिन्दु"

मासिकपत्र।

सनातन धर्म के गूढ़ सिद्धान्त जानने और सुधारक तथा लीडर एवं आर्यसमाज और जाति पांति तोड़क लोगों की पोल खोलने के लिये एवं शास्त्रीय मर्यादाओं तथा प्राचीन सभ्यता की रक्षा के निमित्त जितना उद्योग 'हिन्दु' पत्र कर रहा है उतना उद्योग खुल्लम खुल्ला निर्भीकता को लेकर कट्टरता के साथ दूसरा कोई समाचार पत्र नहीं करता। हिन्दु जाति को संसार में रखने के हेतु से प्रत्येक हिन्दू को 'हिन्दु' पत्रका ग्राहक बनना आवश्यकीय है। यह धर्म सिखला कर भीरु, निर्जीव मनुष्य को निर्भीक बलवान् बना देता है। वार्षिक मूल्य १॥) । जो वी० पी० मगवावेंगे उनके लिये रजिस्ट्री के दो आने और बढ़ जायंगे।

उपहार।

उत्तमोत्तम पुस्तकें तैयार कराकर 'हिन्दु' के ग्राहकों को अर्ध मूल्य में दी जाती हैं एक तो पुस्तकें ऐसी उत्तम जो हिन्दु कार्यालय को छोड़ कर अन्यत्र कहीं मिल ही नहीं सकतीं। (२) आधी कीमत पर दी जाती हैं। आप भी हिन्दु के ग्राहक बनें।

प्रथम वर्ष का 'हिन्दु,

विविध विषयों की विवेचना युक्त प्रथम वर्ष का १२ अंक हिन्दु विकने को तैयार है मूल्य १॥) डाक व्यय पांच आने।

द्वितीय वर्ष का हिन्दु

इसी प्रकार अनेक विषयों से विभूषित धर्म के गूढ़ तत्वों की विवेचना युक्त द्वितीय वर्ष का हिन्दु भी बिक्री को तैयार मूल्य १॥) डाक व्यय पाँच आने। तृतीय वर्ष का 'हिन्दु' बिक्री को नहीं रहा, हां चतुर्थवर्ष का तैयार है मूल्य वही १॥) डाक व्यय पाँच आने।

नोट।

हमारे यहां से एक रुपये से कम का वी० पी० नहीं भेजा जाता।

॥ श्रीहरिः ॥

हिन्दु.

मासिक पत्र ।

सनातनधर्म के गूढ़ सिद्धान्त जानने और सुधारक तथा लीडर एवं आर्यसमाज और जाति पांति तोड़क लोगों की पोल खोलने के लिये एवं शास्त्रीय मर्यादाओं तथा प्राचीन सभ्यता की रक्षा के निमित्त जितना उद्योग 'हिन्दु' पत्र कर रहा है उतना उद्योग खुल्लम खुल्ला निर्भीकता को लेकर कट्टरता के साथ दूसरा कोई समाचार पत्र नहीं करता। हिन्दू जाति को संसार में रखने के हेतु से प्रत्येक हिन्दू को 'हिन्दु' पत्र का ग्राहक बनना आवश्यकीय है। यह पत्र धर्म सिखला कर भीरु निर्जीव मनुष्य को निर्भीक बलवान् बना देता है। इसी पत्र के उपहार स्वरूप ऐसे ऐसे अलभ्य ग्रंथ बनवा कर हिन्दु के ग्राहकों को अर्ध मूल्य में दिये जाते हैं। यदि आप को ऐसे ग्रंथों की आवश्यकता हो तो आप 'हिन्दु' के ग्राहक बनें वार्षिक मूल्य १॥)

कामताप्रसाद दीक्षित ।

मैनेजर हिन्दु ।

मु० पो० अमरौधा जिला कानपुर यू० पी०